तीनों भेद मिटावैगा। करता किरिया करमभेद मिटि, एक दरब लौं लावैगा ॥ गलता० ॥ २ ॥ निहचैं अमल मलिन व्योहारी, दोनों पच्छ नसावैगा। भेद गुण गुणीको नहिं ह्वै है, गुरु शिख कौन कहावैगा ॥ गलता० ॥ ३ ॥ द्यानत साधक साधि एक करि, दुविधा दूर बहावैगा। वचनभेद कहवत सब मिटकै, ज्योंका त्यों ठहरावैगा ॥४॥

(२) राग सारंग।

मोहि कब ऐसा दिन आय है ॥ टेक ॥ सकल विभाव अभाव होंहिंगे, विकलपता मिट जाय है ॥ मोहि० ॥ १ ॥ यह परमातम यह मम आतम, भेदबुद्धि न रहाय है। औरनिकी का वात चलावै, भेदविज्ञान पलाय है ॥ मोहि० ॥ २॥ जानैं आप आपमैं आपा, सो व्यवहार विलाय है। नय-परमान-निखेपन-माहीं, एक न औसर पाय है ॥ मोहि० ॥ ३ ॥ दरसन ज्ञान चरनके विकलप, कहो कहाँ ठहराय है। द्यानत चेतन चेतन ह्वै है, पुदगल पुदगल थाय है ॥२४

(४) राग विलावल।

जिन नाम सुमर मन! बावरे, कहा इत उत भटकै॥ जिन०॥ टेक॥ विषय प्रगट विष-बेल हैं, इनमें जिन अटकै॥ जिन नाम०॥ १॥ दुर्लभ नरभव पायकै, नगसों मत पटकै। फिर पीछैं पछतायगो, औसर जब सटकै॥जिननाम०॥ २॥ एक घरी है सफल जो, प्रभु-गुन-रस गटकै। कोटि वरष जीयो वृथा, जो थोथा फटकै॥ जिन नाम०॥ ३॥ द्यानत उत्तम भजन है, लीजै मन रटकै। भव भवके पातक सबै, जै हैं तो कटकै॥ जिन नाम०॥ ४॥

(५) राग काफी।

तू जिनवर स्वामी मेरा, मैं सेवक प्रभु हों तेरा॥ टेक॥ तुम सुमरन बिन मैं बहु कीना, नाना जोनि बसेरा। भाग उदय तुम दरसन पायो, पाप भज्यो तजि खेरा॥ तू जिनवर०॥१॥ तुम देवाधिदेव परमेसुर, दीजै दान सबेरा। जो तुम मोख देत नहिं हमको, कहाँ जायँ किंहि

डेरा ॥२॥ मात तात तूही बड़ भ्राता, तोसों प्रेम घनेरा । द्यानत तार निकार जगतैं, फेर न ह्वै भवफेरा ॥ तू जिनवर० ॥ ३ ॥

(६) राग काफी धमाल ।

सो ज्ञाता मेरे मन माना, जिन निज-निज, पर-पर जाना ॥ टेक ॥ छहों दरवतैं भिन्न जानकै, नव तत्वनितैं आना । ताकौं देखै ताकौं जानै, ताहीके रसमें साना ॥ सो ज्ञाता० ॥ १ ॥ कर्म शुभाशुभ जो आवत हैं, सो तो पर पहिचाना । तीन भवनको राज न चाहै, यद्यपि गांठ दरब बहु ना ॥ सो ज्ञाता० ॥ २ ॥ अखय अनंती सम्पति विलसै, भव तन भोग मगन ना । द्यानत ता ऊपर बलिहारी, सोई "जीवन मुकत" भना ॥

(७) राग केदारो ।

सुन मन ! नेमिजीके वैन ॥ टेक ॥ कुमतिनासन ज्ञानभासन, सुखकरन दिन रैन ॥ सुन० ॥ १ ॥ वचन सुनि बहु होंहिं चक्री, बहु लहैं पद ... । इन्द चंद फनिंद पद लैं आतम शुद्धनऐन,

सुन० ॥ २ ॥ वैन सुन वहु मुकत पहुंचे, वचन विनु एकै न। हैं अनक्षर रूप अक्षर, सव सभा सुखदैन ॥ सुन० ॥ ३ ॥ प्रगट लोक अलोक सव किय, हरिय मिथ्या-सैन। वचन सरधा करौ द्यानत, ज्यों लहौ पद चैन ॥ सुन० ॥ ४ ॥

(८) राग मल्हार।

काहेको सोचत अति भारी, रे मन ! ॥ टेक पूरव करमनकी थित बांधी, सोतो टरत न टारी काहे० ॥ १ ॥ सव दरवनिकी तीन कालकी, विधि न्यारीकी न्यारी। केवलज्ञानविषैं प्रतिभासी, सो सो ह्वै है सारी ॥ काहे० ॥ २ ॥ सोच किये वहु वंध वढ़त है, उपजत है दुख ख्वारी। चिंता चिता समान वखानी, बुद्धि करत है कारी काहे० ॥ ३ ॥ रोग सोग उपजत चिन्तातैं, कहौ कौन गुनवारी। द्यानत अनुभव करि शिव पहुंचे जिन चिन्ता सव जारी ॥ काहे० ॥ ४ ॥

(९) राग केदारो।

रे जिय ! जनम लाहो लेह ॥ टेक ॥ चरन

ते जिन भवन पहुंचैं, दान दैं कर जेह ॥ रे जिय० ॥ १ ॥ उर सोई जामें दया है, अरु रुधिरको गेह । जीभ सो जिन नाम गावै, सांच सौं करै नेह ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ आंख ते जिनराज देखैं, और आंखैं खेह । श्रवन ते जिनवचन सुनि शुभ, तप तपै सो देह ॥ रे जिय० ॥ ३ ॥ सफल तन इह भांति ह्वै है, और भांति न केह । ह्वै सुखी मन राम ध्यावो, कहैं सदगुरु येह ॥ रे जिय० ॥ ४ ॥

(१०)

चल देखैं प्यारी, नेमि नवल व्रतधारी ॥ टेक ॥ राग दोष विन शोभन मूरति, मुकतिनाथ अविकारी ॥ चल० ॥१॥ क्रोध विना किमि करम विनाशैं, यह अचरज मन भारी ॥ चल० ॥ २ ॥ वचन अनक्षर सब जिय समझैं, भाषा न्यारी न्यारी ॥ चल० ॥ ३ ॥ चतुरानन सब सखलक विलोकैं, पूरव मुख प्रभुकारी ॥ चल० ॥ ४ ॥ केवलज्ञान आदि गुण प्रगटे, नेकु न मान

कियारी ॥ चल० ॥ ५ ॥ प्रभुकी महिमा प्रभु न कहि सकैं, हम तुम कौन विचारी ॥ चल० ॥६ द्यानत नेमिनाथ विन आली, कह मोकों को तारी ॥ चल० ॥ ७ ॥

(११) राग सोरठ।

रुल्यो चिरकाल, जगजाल चहुंगति विषैं, आज जिनराज-तुम शरन आयो ॥ टेक ॥ सह्यो दुख घोर, नहिं छोर आवै कहत, तुमसौं कछु छिप्यो नहिं तुम बतायो ॥ रुल्यो० ॥ १॥ तु ही संसारतारक नहीं दूसरो, ऐसो मुह भेद न किन्ही सुनायो ॥ रुल्यो० ॥ २ ॥ सकल सुर असुर नरनाथ बंदत चरन, नाभिनन्दन निपुन मुनिन ध्यायो ॥ रुल्यो० ॥ ३ ॥ तु ही अरहन्त भगवन्त गुणवन्त प्रभु, खुले मुझ भाग अब दरश पायो रुल्यो० ॥ ४ ॥ सिद्ध हौं शुद्ध हौं बुद्ध अविरुद्ध हौं, ईश जगदीश बहु गुणनि गायो ॥ रुल्यो० ॥ ५ ॥ सर्व चिन्ता गई बुद्धि निर्मल भई, जब हि चित जुगलचरननि लगायो ॥ रुल्यो० ॥ ६ ॥

भयो निहचिन्त द्यानत चरन शर्न गयि, तार अ-
व नाथ तेरो कहायो ॥ रुल्यो० ॥ ७ ॥

(१२)

कर कर आतमहित रे प्रानी ॥ टेक ॥ जिन परिनामनि बंध होत है, सो परनति तज दुख-दानी ॥ कर० ॥ १ ॥ कौन पुरुष तुम कहां रहत हौ, किहिकी संगति रति मानी। जे परजाय प्र-गट पुद्गलमय, तेतैं क्यों अपनी जानी ॥ कर० ॥ २ ॥ चेतनजोति झलक तुझमाहीं, अनुपम सो तैं विसरानी। जाकी पटतर लगत आन नहिं दीप रतन शशि सूरानी ॥ कर० ॥ ३ ॥ आपमें आप लखो अपनो पद, द्यानत करि तन-मन-वानी। परमेश्वरपद आप पाइये, यौं भाषैं केव-लज्ञानी ॥ कर० ॥ ४ ॥

(१३) राग विहागरो।

जानत क्यों नहिं रे, हे नर आतम ज्ञानी ॥ टेक ॥ रागदोष पुद्गलकी संगात, निहचै शुद्धनि-शानी ॥ जानत० ॥ १ ॥ जाय नरक पशु नर

सुर गतिमें, ये परजाय विरानी। सिद्ध-स्वरूप सदा अविनाशी, जानत बिरला प्रानी ॥ जानत० ॥ २ ॥ कियो न काहू हरै न कोई, गुरु शिख कौन कहानी। जनम-मरन-मलरहित अमल है, कीच विना ज्यों पानी ॥ जानत० ॥ ३ ॥ सार पदारथ है तिहु जगमें, नहिं क्रोधी नहिं मानी। द्यानत सो घटमाहिं विराजै, लख हूजै शिवथानी ॥ जानत० ॥ ४ ॥

(१४) राग काफी।

आपा प्रभु जाना मैं जाना ॥ टेक ॥ परमेसुर यह मैं इस सेवक, ऐसो भर्म पलाना ॥ आपा० ॥ १ ॥ जो परमेसुर सो मम मूरति, जो मम सो भगवाना। मरमी होय सोइ तो जानै, जानै नाहीं आना ॥ आपा० ॥२॥ जाकौ ध्यान धरतहैं मुनिगन, पावत हैं निरवाना। अर्हंत सिद्ध सूरि गुरु मुनिपद, आतमरूप बखाना ॥ आपा० ॥ ३ ॥ जो निगोदमें सो मुझमाहीं, सोई है शिव थाना। द्यानत निहचैं रंच फेर नहिं जानै सो मतिवाना ॥ आपा० ॥ ४ ॥

(१५) राग मल्हार।

परमगुरु वरसत ज्ञान झरी ॥ टेक ॥ हरषि हरषि बहु गरजि गरजिकै, मिथ्यातपन हरी ॥ परमगुरु० ॥१॥ सरधा भूमि सुहावनि लागै, संशय वेल हरी। भविजनमन सरवर भरि उमड़े, समुझि पवन सियरी ॥ परमगुरु० ॥ २ ॥ स्याद्वाद विजली चमकै, पर-मत-शिखर परी। चातक मोर साधु श्रावकके, हृदय सुभक्ति भरी ॥ परमगुरु० ॥ ३ ॥ जप तप परमानन्द बढ्यो है, सुसमय नींव धरी। द्यानत पावन पावस आयो, थिरता शुद्ध करी ॥ परमगुरु० ॥ ४ ॥

(१६) राग काफी।

अब हम आतमको पहचाना जी ॥ टेक ॥ जैसा सिद्धक्षेत्रमें राजत, तैसा घटमें जाना जी अब हम० ॥ १ ॥ देहादिक परद्रव्य न मेरे, मेरा चेतन वाना जी ॥ अब हम० ॥ २ ॥ द्यानत जो जानै सो स्याना, नहिं जानें सो दिवाना जी ॥३॥

(१७)

मेरी वेर कहा ढील करी जी ॥टेक॥ सूली

सौं सिंहासन कीनो, सेठ सुदर्शन विपति हरी जी ॥ मेरी बेर० ॥ १ ॥ सीता सती अगनिमें पैठी, पावक नीर करी सगरी जी। वारिषेणपै खड्ग चलायो, फूल माल कीनी सुथरी जी ॥ मेरी बेर० ॥ २ ॥ धन्या वापी पर्यो निकाल्यो, ता घर रिद्ध अनेक भरी जी। सिरीपाल सागरतैं तार्यो, राजभोगकै मुकत बरी जी ॥ मेरी बेर० ॥ ३ ॥ सांप कियो फूलनकी माला, सोमापर तुम दया धरी जी। द्यानत मैं कछु जाँचत नाहीं, कर वैराग्य दशा हमरी जी ॥ मेरी बेर० ॥ ४ ॥

(१८)

जिनके हिरदै भगवान बसैं, तिन आनका ध्यान किया न किया ॥ टेक ॥ चक्री एक मिलाप भयेतैं, और नर न मिलिया मिलिया ॥ जि०॥१॥ इक चिन्तामणि वांछितदायक, और नग न गहिया गहिया। पारस एक कनी कर आवे, और धन न लहिया लहिया ॥ जिनके० ॥ २ ॥ एक भान दश दिशि उजियारा, और ग्रह न उदिया उदिया

एक कल्पतरु सब सुख दाता, और तरु न उगिया उगिया ॥ जिनके०॥३॥ एक अभय महा दान देय-कें और सुदान दिया न दिया । द्यानत ज्ञानसुधा रस चाख्यो, अम्रत और पिया न पिया ॥ ४ ॥

(१६) राग परज ।

माई ! आज आनंद कछु कहे न बनै ॥ टेक नाभिराय मरुदेवी-नंदन, व्याह उछाह त्रिलोक भनै ॥ माई० ॥ १ ॥ सीस मुकुट गल अनूपम, भूषन वरनन को वरनै ॥ माई० ॥ २ ॥ गृह सु-रकार रतनमय कीनो, चौरी मंडप सुरगननै ॥ माई० ॥ ३ ॥ द्यानत धन्य सुनंदा कन्या, जाको आदीश्वर परनै ॥ माई० ॥ ४ ॥

(२०) राग परज ।

माई ! आज आनंद है या नगरी ॥ टेक ॥ गज-गमनी शशि-वदनी तरुनी, मंगल गावत हैं सिगरी ॥ माई० ॥ १ ॥ नाभिराय घर पुत्र भयो है, किये हैं अजाचक जाचक री ॥ माई० ॥२॥ द्यानत धन्य कूंख मरुदेवी, सुर सेवत जाके पग री ॥ माई० ॥ ३ ॥

(२१)

जिनके हिरदै प्रभु नाम नहीं तिन,नर अवतार लिया न लिया ॥टेक॥ दान बिना घर-वास वासकै, लोभ मलीन धिया न धिया ॥ जिनके० ॥ १ ॥ मदिरापान कियो घट अन्तर, जल मल सोधि पिया न पिया। आन प्रानके माँस भखेतैं करुना भाव हिया न हिया ॥ जिनके० ॥२॥ रूपवान गुनखान बानि शुभ, शील विहीन तिया न तिया। कीरतवंत मृतक जीवत हैं, अपजसवंत जिया न जिया ॥ ३ ॥ धाम मांहि कछु दाम न आये, बहु व्योपार किया न किया। द्यानत एक विवेक किये विन,दान अनेक दिया न दिया ॥

(२२)

विपतिमें धर धीर,रे नर ! विपतिमें धर धीर ॥ टेक ॥ सम्पदा ज्यों आपदा रे !, विनश जै है वीर ॥ रे नर० ॥ १ ॥ धूप छाया घटत बढ़ै ज्यों त्योंहि सुख दुख पीर ॥ रे नर० ॥२॥ दोष द्यानत देय किसको, तोरि करम-जंजीर ॥ रे नर० ।

(२३)

गुरु समान दाता नहिं कोई ॥ टेक ॥ भानु प्रकाश न नाशत जाको, सो अंधियारा डारै खोई ॥ गुरु० ॥ १ ॥ मेघ समान सबनपै बरसै, कछु इच्छा जाके नहिं होई । नरक पशूगति आगमांहितैं, सुरग मुकत सुख थापै सोई ॥ गुरु० ॥२॥ तीन लोक मन्दिरमें जानौ, दीपकसम परकाशक लोई । दीपतलैं अँधियार भस्यो है अंतर बहिर विमल है जोई ॥ गुरु० ॥३॥ तारन तरन जिहाज सुगुरु हैं, सब कुटुम्ब डोबै जगतोई । द्यानत निशि दिन निरमल मनमें, राखो गुरु-पद पंकज दोई ॥

(२४)

आतम अनुभव करना रे भाई ॥ टेक ॥ जब लौं भेद-ज्ञान नहिं उपजै, जनम मरन दुख भरना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ आतम पढ़ नव तत्त्व बखानै, व्रत तप संजम धरना रे । आतम-ज्ञान बिना नहिं कारज, जोनी-संकट परना रे ॥भाई० ॥ २ ॥ सकल ग्रन्थ दीपक हैं भाई, मिथ्या तमके

हरना रे। कहा करैं ते अंध पुरुषको, जिन्हैं उप-
जना मरना रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ द्यानत जे भवि
सुख चाहत हैं, तिनको यह अनुसरना रे। 'सोहं'
ये दो अक्षर जपकै, भव-जल पार उतरना रे ॥४

(२५)

धनि ते साधु रहत बनमांहीं ॥टेक॥ शत्रु मित्र
सुख दुख सम जानैं, दरसन देखत पाप पलाहीं
॥ धनि० ॥ १ ॥ अट्ठाईस मूल गुण धारैं, मन
वच काय चपलता नाहीं। ग्रीषम शैल शिखा
हिम तटिनी, पावस वरखा अधिक सहाहीं ॥
धनि० ॥ २ ॥ क्रोध मान छल लोभ न जानैं, राग
दोष नाहीं उनपाहीं। अमल अखंडित चिद्गुण
मण्डित, ब्रह्मज्ञानमें लीन रहाहीं ॥ धनि० ॥३॥
तेई साधु लहैं केवल पद, आठ-काठ दह शिव
पुर जाहीं। द्यानत भवि तिनके गुण गावैं, पावैं
शिव सुख दुःख नसाहीं ॥ धनि० ॥ ४ ॥

(२६)

अब हम आतमको पहिचान्यौ ॥टेक॥ जब

हो सेतो मोह सुभट वल, खिनक एकमें भान्यौ ॥ अव०॥१॥ राग विरोध विभाव भजे भर, ममता भाव पलान्यौं। दरसन ज्ञान चरनमें, चेतन भेद रहित परवान्यौं ॥ अव० ॥ २ ॥ जिहि देखें हम अवर न देख्यो, देख्यो सो सरधान्यौं। ताकौं कहो कहैं कैसें करि, जा जानै जिम जान्यौं ॥ अव० ॥ ३ ॥ पूरव भाव सुपनवत देखे, अपनो अनुभव तान्यो। द्यानत ता अनुभव स्वादत हो, जनम सफल करि मान्यौं ॥ अव० ॥ ४ ॥

(२७)

हमको प्रभु श्रीपास सहाय ॥ टेक ॥ जाके दरसन देखत जब ही, पातक जाय पलाय ॥ ह० ॥ १ ॥ जाको इंद फनिंद चक्रधर, वंदैं सीस नवाय। सोई स्वामी अंतरजामी, भव्यनिको सुखदाय ॥ हमको० ॥ २ ॥ जाके चार घातिया बीते, दोष जु गये विलाय। सहित अनन्त चतु-ष्टय साहव, महिमा कही न जाय ॥ हमको० ३ ॥ ताकी या वड़ो मिल्यो है हमको, गहि रहिये

मन लाय। द्यानत औसर बीत जायगो, फेर न कछु उपाय ॥ हमको० ॥ ४ ॥

(२८)

ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी, नेमिजी ! तुम ही हो ज्ञानी ॥ टेक ॥ तुम्हीं देव गुरु तुम्हीं हमारे, सकल दरब जानी ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ तुम समान कोउ देव न देख्या, तीन भवन छानी। आप तरे भवजीवनि तारे, ममता नहिं आनी ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ और देव सब रागी द्वेषी, कामी कै मानी। तुम हो वीतराग अकषायी, तजि राजुल रानी ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ यह संसार दुःख ज्वाला तजि, भये मुकतथानी। द्यानतदास निकास जगततैं, हम गरीब प्रानी। ज्ञानी० ॥ ४ ॥

(२९)

देख्या मैंने नेमिजी प्यारा ॥ टेक ॥ मूरति ऊपर करों निछावर, तन धन जीवन जोवन सारा ॥ देख्या० ॥ १ ॥ जाके नखकी शोभा आगैं कोटि काम छबि डारौं वारा। कोटि संख्य रवि

चन्द छिपत है, वपुकी द्युति है अपरंपारा ॥ देख्या० ॥ २ ॥ जिनके वचन सुनें जिन भविजन, तजि गृह मुनिवरको व्रत धारा । जाको जस इन्द्रादिक गावैं, पावैं सुख नासैं दुख भारा ॥ देख्या ॥ ३ ॥ जाके केवलज्ञान विराजत, लोकालोक प्रकाशन हारा । चरन गहेकी लाज निवाहो, प्रभुजी द्यानत भगत तुम्हारा ॥ देख्या ॥ ४ ॥

(३०)

आतमरूप अनूपम है, घटमाहिं विराजै ॥ टेक ॥ जाके सुमरन जापसों, भव भव दुख भाजै हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ केवल दरसन ज्ञानमें, थिरतापद छाजै हो । उपमाको तिहुं लोकमें, कोउ वस्तु न राजै हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ सहै परीषह भार जो, जु महाव्रत साजै हो । ज्ञान विना शिव ना लहै, बहुकर्म उपाजै हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ तिहुं लोक तिहुं कालमें, नहिं और इलाजै हो । द्यानत ताकों जानिये, निज स्वारथकाजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

(३१)

नहिं ऐसो जनम बारंबार ॥ टेक ॥ कठिन कठिन लह्यो मनुष भव, विषय भजि मति हार नहिं० ॥ १ ॥ पाय चिन्तामन रतन शठ, छिपत उदधिमँझार। अंध हाथ बटेर आई, तजत ताहि गंवार ॥ नहिं० ॥ २ ॥ कबहुं नरक तिरजंच कबहुं, कबहुं सुरगविहार। जगतमहिं चिरकाल भमियो, दुलभ नर अवतार ॥ नहिं० ॥ ३ ॥ पाय अम्रत पांय धोवै, कहत सुगुरु पुकार। तजो विषय कषाय द्यानत, ज्यों लहो भवपार ॥ नहिं०॥

(३२)

तू तो समझ समझ रे! भाई ॥ टेक ॥ निशिदिन विषय भोग लपटाना, धरम वचन न सुहाई ॥ तू तो० ॥ १ ॥ कर मनका लै आसन मास्यो, बाहिज लोक रिझाई। कहा भयो बकध्यान धरेतैं, जो मन थिर न रहाई ॥तू तो०॥२॥ मास मास उपवास किये तैं, काया बहुत सुखाई। क्रोध मान छल लोभ न जीत्या, कारज कौन

सराई ॥ तू तो० ॥३॥ मन वच काय जोग थिर करकैं, त्यागो विषयकषाई। द्यानय सुरग मोख सुखदाई, सदगुरु सीख बताई ॥ तू तो० ॥ ४ ॥

(३३)

घटमें परमातम ध्याइये हो, परम धरम धन हेत। ममता बुद्धि निवारिये हो, टारिये भरम निकेत ॥ घटमें० ॥ १ ॥ प्रथमहिं अशुचि निहारिये हो, सात धातुमय देह। काल अनन्त सहे दुख जानैं, ताको तजो अब नेह ॥ घटमें ॥ २ ॥ ज्ञानावरनादिक जमरूपी, जिनतैं भिन्न निहार। रागादिक परनति लख न्यारी, न्यारो सुबुध विचार ॥ घटमें० ॥ ३ ॥ तहां शुद्ध आतम निरविकलप, ह्वै करि तिसको ध्यान। अलप कालमें घाति नसत हैं, उपजत केवलज्ञान ॥ घटमें० ॥४ चार अघाति नाशि शिव पहुँचे, विलसत सुख जु अनन्त। सम्यकदरसनकी यह महिमा, द्यानत लह भव अन्त ॥ घटमें० ॥ ५ ॥

(३४)

समझत क्यों नहिं वानी, अज्ञानी जन ॥ टेक ॥ स्यादवाद-अंकित सुखदाय, भाषी केवलज्ञानी ॥ समझत० ॥ १ ॥ जास लखैं निरमल पद पावै, कुमति कुगतिकी हानी। उदय भया जिहमें परगासी, तिहि जानी सरधानी ॥ समझत० ॥ २ ॥ जामें देव धरम गुरु वरनें, तीनौं मुकतिनिसानी। निश्चय देव धरम गुरु आतम, जानत विरला प्रानी ॥ समझत० ॥३॥ या जगमाहिं तुझे तारनको, कारन नाव वखानी। द्यानत सो गहिये निहचैसों, हूजे ज्यों शिवथानी ॥ समझत० ॥ ४ ॥

(३५)

धिक ! धिक ! जीवन समकित विना ॥ टेक ॥ दान शील तप व्रत श्रुतपूजा, आतम हेत न एक गिना ॥ धिक० ॥ १ ॥ ज्यों विनु कन्त कामिनी शोभा, अंबुज विनु सरवर ज्यों सूना। जैसे विना एकड़े बिन्दी, त्यों समकित विन स-

रव गुना ॥ धिक० ॥ २ ॥ जैसे भूप बिना सब सेना, नीव बिना मंदिर चुनना । जैसे चन्द विहूनी रजनी, इन्हें आदि जानो निपुना ॥ धिक० ॥ ३ ॥ देव जिनेन्द्र, साधु गुरु, करुना, धर्मराग व्योहार भना । निहचै देव धरम गुरु आतम, द्यानत गहि मन वचन तना ॥ धिक० ॥ ४ ॥

(३६) गुजरातीभाषा—गीत ।

जीवा ! शूं कहिये तनैं भाई । टेक ॥ पोतानूं रूप अनूप तजीनैं, शासाटै विषयी थाई ॥ जीवा० ॥ १ ॥ इन्द्रीना विषय विषथकी मोटा ज्ञाननू अम्रत गाई । अमृत छोड़ीनै विषय विष पीधा, साता तो नथी पाई ॥ जीवा० ॥ २ ॥ नरक निगोदना दुख सह आव्यो, वली तिहनैं मग धाई एहवी बात रूड़ी न छै तमनैं, तीन भवनना राई जीवा० ॥ ३ ॥ लाख बातनी बात ए छै, मूकीनै विषयकषाई । द्यानत ते वारैं सुख लाधौ, एम गुरु समझाई ॥ जीवा० ॥ ४ ॥

(३७) राग मल्हार।

ज्ञान सरोवर सोई हो भविजन ॥टेक॥ भूमि छिमा करुना मरजादा, सम-रस जल जहँ होई॥ भविजन० ॥ १ ॥ परहति लहर हरख जलचर बहु, नय-पंकति परकारी। सम्यक कमल अष्ट-दल गुण हैं, सुमन भँवर अधिकारी ॥ भविजन० ॥ २ ॥ संजम शील आदि पल्लव हैं, कमला सुमति निवासी। सुजस सुवास कमल परिचयतैं, परसत भ्रम तप नासी ॥ भविजन० ॥ ३ ॥ भव मल जात न्हात भविजनका, होत परम सुख साता। द्यानत यह सर और न जानैं, जानैं बिरला ज्ञाता ॥ भविजन० ॥ ४ ॥

(३८)

जीव! तैं मूढ़पना कितपायो ॥ टेक ॥ सब जग स्वारथको चाहत है, स्वारथ तोहि न भायो ॥ जीव० ॥ १ ॥ अशुचि अचेत दुष्ट तनमांहीं, कहा जान विरमायो। परम अतिन्द्री निजसुख हरिकै, विषय रोग लपटायो ॥ जीव० ॥२॥ चेतन

नाम भयो जड़ काहे, अपनो नाम गमायो। तीन लोकको राज छांड़िकै, भीख मांग न लजायो। जीव० ॥ ३ ॥ मूढ़पना मिथ्या जब छूटै, तब तू संत कहायो। द्यानत सुख अनन्त शिव विलसो, यों सदगुरु बतलायो ॥ जीव० ॥ ४ ॥

(३६) राग सारंग।

हम लागे आतमरामसों ॥ टेक ॥ विनाशीक पुद्‌गलकी छाया, कौन रमै धनमानसों ॥ हम० ॥ १ ॥ समता सुख घटमें परगास्यो, कौन काज है कामसों। दुविधा-भाव जलांजुलि दीनौं, मेल भयो निज स्वामसों ॥ हम० ॥२॥ भेदज्ञान करि निज परि देख्यौ, कौन विलोकै चामसौं। उरै परैकी बात न भावै, लौ लाई गुणग्रामसों ॥ हम० ॥ ३ ॥ विकलप भाव रंक सब भाजे, झरि चेतन अभिरामसों। द्यानत आतम अनुभव करिकै छूटे भव दुखधामसों ॥ हम० ॥ ४ ॥

(४०)

प्रभु अब हमको होहु सहाय ॥ टेक ॥ तुम

विन हम बहु जुग दुख पायो, अब तो परसे पांय ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ तीन लोकमें नाम तिहारो, है सबको सुखदाय। सोई नाम सदा हम गावैं, रीझ जाहु पतियाय॥प्रभु० ॥ २ ॥ हम तो नाथ कहाये तेरे, जावैं कहां सु बताय। बांह गहेकी लाज निवाहौ,जो हो त्रिभुवनराय ॥ प्रभु० ॥ ३ द्यानत सेवकने प्रभु इतनी, विनती करी बनाय। दीनदयाल दया धर मनमें, जमतैं लेहु बचाय ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

(४१)

बसि संसारमें मै, पायो दुःख अपार ॥ टेक मिथ्याभाव हिये धर्यो नहिं, जानों सम्यकचार ॥ बसि० ॥ १ ॥ काल अनादिहि हौं रुल्यौ हो, नरक निगोदमँझार। सुर नर पद बहुते धरे पद, पद प्रति आतम धार ॥ बसि० ॥ २ ॥ जिनको फल दुखपुंज है हो, ते जाने सुखकार। भ्रम मद पोय विकल भयो नहिं, गह्यो सत्य व्योहार ॥ बसि० ॥ ३ ॥ जिनवानी जानी नहीं हो, कुगति

विनाशनहार। द्यानत अव सरधा करी दुख, मे-
टि लह्यो सुखसार ॥ वसि० ॥ ४ ॥

(४२)

धनि धनि ते मुनि गिरिवनवासी ॥ टेक ॥
मार मार जगजार जारते, द्वादस व्रत तप अभ्या
सी ॥ धनि० ॥ १ ॥ कौड़ी लाल पास नहिं जाके
जिन छेदी आसापासी। आतम-आतम, पर-पर
जानैं, द्वादश तीन प्रकृति नासी ॥ २ ॥ जा दुख
देख दुखी सब जग है, सो दुख लख सुख है
तासी। जाकों सव जग सुख मानत है, सो सुख
जान्यो दुखरासी ॥ धनि० ॥ ३ ॥ वाहज भेप
कहत अंतर गुण, सत्य मधुर हितमित भासी।
द्यानत ते शिवपंथपथिक हैं, पांव परत पातक
जासी ॥ धनि० ॥ ४ ॥

(४३) राग कल्याण (सर्व लघु)

कहत सुगुरु करि सुहित भविकजन ! ॥टेक॥
अधरम धरम गगन जम, सव जड़ मम
नहिं यह सुमरहु मन ॥ कहत० ॥ १ ॥ नर पशु

नरक अमर पर पद लखि, दरव करम तन करम पृथक भन। तुम पद अमल अचल विकलप बिन अजर अमर शिव अभय अखय गन॥कहत० ॥ २ ॥ त्रिभुवनपतिपद तुम पटतर नहिं, तुम पद अतुल न तुल रविशशिगन। वचन कहत मन गहन शकति नहिं, सुरत गमन निज निज गम परनन ॥ कहत० ॥ ३ ॥ इह विधि बँधत खुलत इह विधि जिय, इन विकलपमहिं शिवपद सधत न। निरविकलप अनुभव मन सिधि करि, करम सघन वनदहन दहन-कन ॥४॥

(४४)

हो भैया मोरे! कहु कैसे सुख होय ॥टेक॥ लीन कषाय अधीन विषयके, धरम करै नहिं कोय ॥ हो भैया० ॥ १ ॥ पाप उदय लखि रोवत भोदू!, पाप तजै नहिं सोय। स्वान-वान ज्यों पाहन सूंघै, सिंह हनै रिपु जोय ॥ हो भैया० ॥ २ ॥ धरम करत सुख दुख अघसेती, जानत हैं सब लोय। कर दीपक लै कूप परत है, दुख पैहै

भव दोय ॥ हो भैया० ॥ ३ ॥ कुगुरु कुदेव कुध-
र्म भुलायो, देव धरम गुरु खोय। उलट चाल त-
जि अब सुलटै जो, द्यानत तिरै जग-तोय ॥४॥

(४५)

प्रभु मैं किहि विधि थुति करौं तेरी ॥टेक॥
गणधर कहत पार नहिं पावै, कहा बुद्धि है मेरी
॥ प्रभु० ॥ १ ॥ शक्र जनम भरि सहस जीभ ध-
रि, तुम जस होत न पूरा । एक जीभ कैसैं गुण
गावै, उलू कहै किमि सूरा ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ चमर
छत्र सिंघासन वरनों, ये गुण तुमतैं न्यारे । तु-
म गुण कहन वचन बल नाहीं, नैन गिनैं किमि
तारे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

(४६)

भज श्रीआदिचरन मन मेरे, दूर होंय भव
भव दुख तेरे ॥ टेक ॥ भगति विना सुख रंच न
होई, जो ढूंढै तिहुं जगमें कोई ॥ भज० १ ॥
प्रान-पयान-समय दुख भारी, कंठविषैं कफकी
अधिकारी । तात मात सुत लोग घनेरा, तादिन

कौन सहाई तेरा ॥ भय० ॥ २ ॥ तू बसि चरण चरण तुझमाहीं, एकमेक ह्वै दुविधा नाहीं। तातै जीवन सफल कहावै, जनम जरा मृत पास न आवै ॥ भज० ॥ ३ ॥ अब ही अवसर फिर जम घेरैं, छांढ़ि लरक-बुध सद्गुरु टेरैं। द्यानत और जतन कोउ नाहीं, निरभय होय तिहूँ जगमाहीं

(४७)

प्राणी लाल ! धरम अगाऊ धारौ ॥ टेक ॥ जबलौं धन जोवन हैं तेरे, दान शील न विसारौ ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ जबलौं करपद दिढ़ हैं तेरे, पूजा तीरथ सारौ। जीभ नैन जबलौं हैं नीके, प्रभु गुन गाय निहारौ। ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ आसन श्रवन सबल हैं तोलौं, ध्यान शब्द सुनि धारौ। जरा न आवै गद न सतावै, संजम परउपकारौ ॥ प्राणी० ॥ ३ ॥ देह शिथिल मति विकल न तौलौं, तप गहि तत्त्व विचारौ। अन्तसमाधिपोत चढ़ि अपनो, द्यानत आतम तारौ ॥प्राणी०॥४॥

(४८) राग सोरठ।

नेमि नवल देखैं चल री। लहैं मनुष भवको

कलरी ॥ टेक ॥ देखनि जात जात दुख तिनको भान जथा तम-दल दल री। जिन उर नाम वसत है जिनको, तिनको भय नहिं जल थल री ॥ नेमि० ॥ १ ॥ प्रभुके रूप अनूपम ऊपर, कोट काम कीजे वल री। समोसरनकी अद्‌भुत शोभा नाचत शक्र सची रल री ॥ नेमि० ॥ २ ॥ भोर उठत पूजत पद प्रभुके, पातक भजत सकल टल री। द्यानत सरन गहौ मन! ताकी, जै हैं भवबंधन गल री ॥ नेमि० ॥ ३ ॥

(४६)

भवि! पूजौ मन वच श्रीजिनन्द, चितचकोर सुखकरन इंद ॥ टेक ॥ कुमतिकुमुदिनी हरनसूर, विघनसघनवनदहन भूर ॥ भवि० ॥१॥ पाप उरग प्रभु नाम मोर, मोह-महा-तम दलन भोर ॥ भवि० ॥२॥ दुख-दालिद-हर अनघ-रैन, द्यानत प्रभु दैं परम चैन ॥ भवि० ॥३॥

(५०)

मगन रहु रे! शुद्धातममें मगन रहु रे ॥टेक॥

रागदोष परको उतपात, निहचै शुद्ध चैतनाजात ॥ मगन० ॥ १ ॥ विधि निषेधको खेद निवारि, आप आपमें आप निहारि ॥ मगन० ॥ २ ॥ बंध मोक्ष विकलप करि दूर, आनँदकंद चिदातम सूर ॥ मगन० ॥३॥ दरसन ज्ञान चरन समुदाय, द्यानत ये ही मोक्ष उपाय ॥ मगन० ॥ ४ ॥

(५१)

आतम जानो रे भाई ! ॥ टेक ॥ जैसी उज्जल आरसी रे, तैसी आतम जोत । काया-करमनसौं जुदी रे, सबको करै उदोत ॥ आतम० ॥ १ ॥ शयन दशा जाग्रत दशा रे, दोनों विकलपरूप । निरविकलप शुद्धातमा रे, चिदानंद चिद्रूप ॥ आतम० ॥ २ ॥ तन वचसेती भिन्न कर रे, मनसों निज लौं लाय । आप आप जब अनुभवै रे, तहां न मन वच काय ॥ आतम० ॥३॥ छहौं दरब नव तत्त्वतैं रे, न्यारो आतम राम । द्यानत जे अनुभव करैं रे, ते पावैं शिव धाम ॥४॥

(५२)

दरसन तेरा मन भावै ॥ दरसन० ॥ टेक ॥

तुमकों देखि त्रिपति नहिं सुरपति, नैन हजार बनावै ॥ दरसन० ॥ १ ॥ समोसरनमें निरखै सचिपति, जीभ सहस गुन गावै। कोड़ कामको रूप छिपत है, तेरो दरस सुहावै ॥ दरसन०॥२॥ आँच लगै अंतर है तो भी, आनँद उर न समावै। ना जानों कितनों सुख हरिको, जो नहिं पलक लगावै ॥ दरसन० ॥ ३ ॥ पाप नासकी कौन बात है, द्यानत सम्यक पावै। आसन ध्यान अनूपम स्वामी, देखें ही बन आवै ॥४॥

(५३)

री ! मेरे घट ज्ञान घनागम छायो ॥ री० ॥ टेक ॥ शुद्ध भाव बादल मिल आये, सूरज मोह छिपायो ॥ री० ॥ १ ॥ अनहद घोर घोर गरजत है, भ्रम आताप मिटायो। समता चपला चमकनि लागी, अनुभौ-सुख झर लायो ॥ री० ॥२॥ सत्ता भूमि बीज समकितको, शिवपद खेत उपायो। उद्धत (?) भाव सरोवर दीसै, मोर सुमन हरषायो ॥री०॥ ३ ॥ भव-प्रदेशतैं बहु दिन पीछैं

चेतन पिय घर आयो। द्यानत सुमति कहै सखियनसों, यह पावस मोहि भायो ॥री०॥ ४॥

(५४)

हो स्वामी ! जगत जलधितैं तारो ॥ हो० ॥ टेक ॥ मोह मच्छ अरु काम कच्छतैं, लोभ लहरतैं उबारो ॥ हो० ॥१॥ खेद खारजल दुखदावानल, भरम भँवर भय टारो ॥ हो० ॥ २॥ द्यानत बार बार यौं भाषै, तू ही तारनहारो ॥३॥

(५५) राग बसंत।

मोहि तारो हो देवाधिदेव, मैं मनवचतनकरि करौं सेव ॥ टेक ॥ तुम दीनदयाल अनाथनाथ, हमहूको राखो आप साथ ॥ मोह० ॥ १ ॥ यह मारबाड़ संसार देश, तुम चरनकलपतरु हर कलेश ॥ मोह० ॥ २ ॥ तुम नाम रसायन जीय पीय, द्यानत अजरामर भव त्रितीय ॥ मोह० ३॥

(५६) राग केदारो।

रे जिय ! क्रोध काहे करै ॥ टेक ॥ देखकै अविवेकि प्रानी, क्यों विवेक न धरै ॥ रे जिय० ॥१

जिसे जैसी उदय आवै, सो क्रिया आचरै । स-
हज तू अपनो बिगारै, जाय दुर्गति परै ॥ रे
जिय० ॥ २ ॥ होय संगति-गुन सबनिकों, सरब
जग उच्चरै । तुम भले कर भले सबको, बुरे ल-
खि मति जरै ॥ रे जिय० ॥ ३ ॥ वैद्यपरविष हर
सकत नाहिं, आप भखिको मरै । बहु कषाय नि-
गोद-वासा, छिमा द्यानत तरै ॥ रे जिय० ॥४॥

(५७)

फूली वसन्त जहँ आदीसुर शिवपुर गये ॥
टेक ॥ भारतभूप बहत्तर जिनगृह, कनकमयी
सब निरमये ॥ फूली० ॥ १ ॥ तीन चौबीस रत-
नमय प्रतिमा, अंग रंग जे जे भये । सिद्ध स-
मान सीस सम सबके, अदभुत शोभा परिनये ॥
फूली० ॥ २ ॥ बालि आदि आठ जोड़ मुनि,
सबनि मुकति सुख अनुभये । तीन अठाई फा-
गनि (?) खग मिल, गावैं गीत नये नये ॥ फू०
॥ ३ ॥ वसु जोजन वसु पैड़ी (?) गंगा, फिरी
बहुत सुरआलये । द्यानत सो कैलास नमौं हौं,
गुन कापै जा वरनये ॥ फूली० ॥ ४ ॥

(५८)

तुम ज्ञानविभव फूली वसन्त, यह मन मधुकर सुखसों रमन्त ॥ टेक ॥ दिन बड़े भये बैराग भाव, मिथ्यामत रजनीको घटाव ॥ तुम० १॥ बहु फूली फैली सुरुचि बेलि, ज्ञाताजन समता संग केलि ॥ तुम० ॥ २ ॥ द्यानत वानी पिक मधुररूप, सुरनरपशु आनंदघनसुरूप ॥ तुम० ॥३॥

(५६) राग मल्हार।

जगतमें सम्यक उत्तम भाई ॥ टेक ॥ सम्यकसहित प्रधान नरकमें, धिक शठ सुरगति पाई जगत० ॥ १ ॥ श्रावकब्रत मुनिब्रत जे पालैं, ममता बुद्धि अधिकाई । तिनतैं अधिक असंजमचारी, जिन आतम लव लाई ॥ जगत० ॥ २ ॥ पंच-परावर्तन तैं कीनै, बहुत बार दुखदाई । लख चौरासि स्वांग धरि नाच्यौ, ज्ञानकला नहिं आई जगत० ॥ ३ ॥ सम्यक विन तिहुं जग दुखदाई, जहँ भावै तहँ जाई । द्यानत सम्यक आतम अनुभव, सद्गुरु सीख बताई ॥ जगत० ॥ ४ ॥

(६०) राग गौड़ी।

भाई ! अब मैं ऐसा जाना ॥ टेक ॥ पुद्गल दरव अचेत भिन्न हैं, मेरा चेतन बाना ॥ भाई० ॥ १ ॥ कलप अनन्त सहत दुख बीते, दुखकौं सुख कर माना। सुख दुख दोऊ कर्म अवस्था, मैं कर्मनतैं आना ॥ भाई० ॥२॥ जहां भोर था तहां भई निशि, निशिकी ठौर विहाना। भूल मिटी जिनपद पहिचाना, परमानन्द निधाना ॥ भाई० ॥ ३ ॥ गूंगेका गुड़ खांय कहैं किमि, यद्यपि स्वाद पिछाना। द्यानत जिन देख्या ते जानैं, मेंडक हंस पखाना ॥ भाई० ॥ ४ ॥

(६१) राग ख्याल।

आतम जान रे जान रे जान॥ टेक ॥ जीवनकी इच्छा करै, कबहुं न मांगै काल। (प्राणी) सोई जान्यो जीव है, सुख चाहै दुख टाल ॥ आतम० ॥ १ ॥ नैन बैनमें कौन है, कौन सुनत हैं बात। (प्राणी) देखत क्यों नहिं आपमें, जाकी चेतन जात ॥ आतम० ॥२॥ बाहिर ढूंढैं दूर है,

अंतर निपट नजीक। (प्राणी!) ढूंढनवाला कौन है, सोई जानो ठीक॥ आतम०॥ ३॥तीन भवनमें देखिया, आतम सम नहिं कोय। (प्राणी!) द्यानत जे अनुभव करैं, तिनकौं शिवसुख होय॥ आतम०॥ ४॥

(६२) राग सोरठा।

मन! मेरे राग भाव निवार॥ टेक॥ राग चिक्कनतैं लगत है कर्मधूलि अपार॥ मन०॥१॥ राग आस्रव मूल है, वैराग्य संवर धार। जिन न जान्यो भेद यह, वह गयो नरभव हार॥ मन॥ २॥ दान पूजा शील जप तप, भाव विवध प्रकार। राग विन शिव सुख करत हैं, रागतैं संसार॥ मन०॥ ३॥ वीतराग कहा कियो, यह बात प्रगट निहार। सोइ कर सुखहेत द्यानत, शुद्ध अनुभव सार॥ मन०॥ ४॥

(६३) राग रामकली।

हम न किसीके कोई न हमारा, झूठा है जगका व्योहारा॥ टेक॥ तनसंबंधी सब परवारा

सो तन हमने जाना न्यारा ॥ हम० ॥ १ ॥ पुन्य उदय सुखका बढ़वारा, पाप उदय दुख होत अपारा । पाप पुन्य दोऊ संसारा, मैं सब देखन हारा ॥ हम० ॥ २ ॥ मैं तिहुं जग तिहुं काल अकेला, पर संजोग भया बहु मेला । थिति पूरी करि खिर खिर जाहीं, मेरे हर्ष शोक कछु नाहीं हम न० ॥ ३ ॥ राग भावतैं सज्जन मानैं, दोष भावतैं दुर्जन जानैं । राग दोष दोऊ मम नाहीं, द्यानत मैं चेतनपदमाहीं ॥ हम न० ॥ ४ ॥

(६४) राग पंचम ।

भ्रम्यो जी भ्रम्यो, संसार महावन, सुख तो कबहुं न पायो जी ॥ टेक ॥ पुद्गल जीव एक करि जान्यो, भेद-ज्ञान न सुहायो जी ॥ भ्रम्यो० ॥ १ ॥ मनवचकाय जीव संहारो, झूठो वचन बनायो जी चोरी करके हरष बढ़ायो, विषयभोग गरवायो जी ॥ भ्रम्यो० ॥ २ ॥ नरकमाहिं छेदन भेदन बहु, साधारण वसि आयो जी । गरभ जनम नरभव दुख देखे, देव मरत बिललायो जी

भम्यो० ॥ ३ ॥ द्यानत अब जिनवचन सुनै मैं, भवमल पाप वहायो जी। आदिनाथ अरहन्त आदिगुरु, चरनकमल चितलायो जी ॥ भम्यो० ॥

(६५) राग रामकली।

जियको लोभ महा दुखदाई, जाकी शोभा (?) वरनी न जाई ॥ टेक ॥ लोभ करै मूरख संसारी, छाँड़ै पण्डित शिव अधिकारी ॥ जियको० ॥ १ ॥ तजि घरवास फिरै वनमाहीं, कनक कामिनी छांड़ै नाहीं। लोक रिझावनको व्रत लीना, व्रत न होय ठगई साकीना ॥ जियको० ॥ २ ॥ लोभवशात जीव हत डारै, झूठ बोल चोरी चित धारै। नारि गहै परिग्रह विसतारै, पांच पाप कर नरक सिधारै ॥ जियको० ॥ ३ ॥ जोगी जती गृही वनवासी, वैरागी दरवेश सन्यासी। अजस खान जसकी नहिं रेखा, द्यानत जिनकै लोभ विशेखा ॥ जियको० ॥ ४ ॥

(६६)

रे मन! भज भज दीनदयाल ॥ टेक ॥

जाके नाम लेत इक छिनमें, कटैं कोट अघजाल रे मन० ॥ १ ॥ परमब्रह्म परमेश्वर स्वामी, देखैं होत निहाल। सुमरन करत परम सुख पावत, सेवत भाजै काल ॥ रे मन० ॥ २ ॥ इन्द्र फनिंद चक्रधर गावैं, जाको नाम रसाल। जाको नाम ज्ञान परगासै, नाशै मिथ्याजाल। रे मन० ॥३ ॥ जाके नाम समान नहीं कछु, ऊरध मध्य पताल सोई नाम जपो नित द्यानत, छांड़ि विषय विक-राल ॥ रे मन० ॥ ४ ॥

(६७)

तुम प्रभु कहियत दीनदयाल ॥ टेक ॥ आपन जाय मुकतमें बैठे, हम जु रुलत जगजाल ॥ तुम० ॥ १ ॥ तुमरो नाम जपैं हम नीके, मन वच तीनौं काल। तुमतो हमको कछू देत नहिं, हमरो कौन हवाल ॥ तुम० ॥ २ ॥ बुरे भले हम भगत तिहारे, जानत हो हम चाल। और कछू नहिं यह चाहत हैं, राग दोषकौं टाल ॥ तुम० ॥ ३ ॥ हमसौं चक परी सो बकसो, तुम तो

कृपाविशाल। द्यानत एक बार प्रभु जगतैं, हमको लेहु निकाल॥ तुम०॥ ४॥

(६८) राग ख्याल।

मैं नेमिजीका वंदा, मैं साहवजीका वंदा॥ टेक॥ नैन चकोर दरसको तरसैं, स्वामी पूरनचंदा॥ मैं नेमिजी०॥ १॥ छहौं दरवमें सार वतायो, आतम आनंदकन्दा। ताको अनुभव नित प्रति कीजे, नासै सव दुख दंदा॥ मैं नेमिजी०॥ २ देत धरम उपदेश भविक प्रति, इच्छा नाहिं करंदा। राग दोष मद मोह नहीं नहीं, क्रोध लोभ छल छंदा॥ मैं नेमिजी०॥ ३॥ जाको जस कहि सकैं न क्योंही, इंद फनिंद नरिन्दा। मैं नेमिजी०॥ ४॥

(६९)

मैं निज आतम कब ध्याऊंगा॥ टेक॥ रागादिक परिनाम त्यागकै, समतासौं लौ लाऊंगा॥ मैं निज०॥ १॥ मन वच काय जोग थिर करकै, ज्ञान समाधि लगाऊंगा। कब हौं त्ति

जावें पकश्रेणि चढ़ि ध्याऊं चारित मोह नशाऊंगा
रे म: मैं निज० ॥ २ ॥ चारों करम घातिया खन करि
होत परमातम पद पाऊंगा। ज्ञान दरश सुख वल
सेवत भंडारा, चार अघाति वहाऊंगा ॥ मैं निज० ॥
चक्र: ३ ॥ परम निरंजन सिद्ध शुद्धपद, परमानंद कहा-
ज्ञान ऊंगा। द्यानत यह सम्पति जव पाऊं, वहुरि न
जाके जगमें आऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ४ ॥
सोई:
राल।

(७०)

अरहंत सुमर मन वावरे ॥ टेक ॥ ख्याति
लाभ पूजा तजि भाई, अन्तर प्रभु लौ लाव रे ॥
ए अरहंत० ॥ १ ॥ नरभव पाय अकारथ खोवै, वि
पन ज षय भोग जु वढ़ाव रे। प्राण गये पछितैहै मन-
तुम० वा, छिन छिन छीजै आव रे ॥ अरहंत० ॥ २ ॥
वच तं जुवती तन धन सुत मित परिजन, गज तुरंग
हमरो रथ चाव रे। यह संसार सुपनकी माया, आंख
भगत दिखराव रे अरहंत० ॥ ३ ॥ ध्याव ध्याव रे अव
नहिं य है दाव रे, नाहीं मंगल गाव रे। द्यानत वहुत क-
॥ ३ ॥ हां लौं कहिये, फेर न कछू उपाव रे ॥ ४ ॥

(७१)

वन्दौ नेमि उदासी, मद मारिनेकौं ॥टेक॥ रजमतसी जिन नारी छाँरी, जाय भये बनवासी ॥ बन्दौं० ॥ १ ॥ हय गय रथ पायक सब छांड़े, तोरी ममता फाँसी। पंच महाव्रत दुद्धर धारे, राखी प्रकति पचासी ॥ बन्दौं० ॥ २ ॥ जाकै दरसन ज्ञान विराजत, लहि वीरज सुखरासी। जाकौं बन्दत त्रिभुवन-नायक, लोकालोकप्रकासी ॥ बन्दौं० ३ ॥ सिद्ध शुद्ध परमारथ राजैं, अविचल थान निवासी। द्यानत मन अलि प्रभु पद-पंकज, रमत रमत अघ जासी ॥ बन्दौं० ॥४॥

(७२)

आतम अनुभव कीजै हो ॥ टेक ॥ जनम जरा अरु मरन नाशकै, अनत काल लौं जीजै हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ देव धरम गुरुकी सरधा करि, कुगुरु आदि तज दीजै हो। छहौं दरब नव तत्त्व परखकै, चेतन सार गहीजै हो ॥ आतम० ॥२॥ दरव करम नोकरम भिन्न करि, सूक्षम दृष्टि धरी-

जै हो। भाव करमतैं भिन्न जानिकै, बुधि विलास न मरीजै हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ आप आप जानै सो अनुभव, द्यानत शिवका दीजै हो। और उपाय वन्यो नहिं बनिहै, करै सो दक्ष कहीजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

(७३)

कर रे! कर रे! कर रे!, तू आतम हित कर रे ॥ टेक ॥ काल अनन्त गयो जग भमतैं, भव भवके दुख हर रे ॥ कर रे० ॥ १ ॥ लाख कोटि भव तपस्या करतैं, जितो कर्म तेरी जर रे। स्वास उस्वासमाहिं सो नासै, जब अनुभव चित धर रे ॥ कर रे० ॥ २ ॥ काहे कष्ट सहै वनमाहीं, राग दोष परिहर रे। काज होय समभाव विना नहिं, भावौ पचि पचि मर रे ॥ कर रे० ॥ ३ ॥ लाख सीखकी सीख एक यह, आतम निज, पर पर रे। कोट ग्रंथको सार यही है, द्यानत लख नहि भव तर रे ॥ कर रे० ॥४॥

(७४)

भाई ज्ञानका राह सुहेला रे ॥भाई०॥टेक॥

दरव न चहिये देह न दहिये, जोग भोग न नवेला रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ लड़ना नाहीं मरना नाहीं, करना वेला तेला रे । पढ़ना नाहीं गढ़ना नाहीं, नाच न गावन मेला रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ न्हानां नाहीं खाना नाहीं, नाहिं कमाना धेला रे । चलना नाहीं जलना नाहीं, गलना नाहीं देला रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ जो चित चाहै सो नित दाहै, चाह दूर करि खेला रे । द्यानत यामैं कौन कठिनता, वे परवाह अकेला रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

(७५)

प्रभु तेरी महिमा किहि मुख गावैं ॥ टेक ॥ गरम छमास अगाउ कनक नग (?) सुरपति नगर बनावैं ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ छीर उदधि जल मेरु सिंहासन, मल मल इन्द्र न्हुलावैं । दीक्षा समय पालकी बैठो, इन्द्र कहार कहावैं ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ समोसरन रिध ज्ञान महातम, किहिविधि सरव बतावैं । आपन जातकी बात कहा शिव, बात सुनैं भवि जावैं ॥प्रभु०॥३॥ पंच कल्यानक थानक

स्वामी, जे तुम मन वच ध्यावैं। द्यानत तिनकी कौन कथा है, हम देखैं सुख पावैं ॥ प्रभु० ॥ ४॥

(७६)

प्रभु तेरी महिमा कहिय न जाय ॥ टेक ॥ थुति करि सुखी दुखी निंदातैं, तेरैं समता भाय ॥ प्रभु० ॥ १॥ जो तुम ध्यावैं, थिर मन लावैं, सो किंचित् सुख पाय। जो नहिं ध्यावै ताहि करत हो, तीन भवनको राय ॥ प्रभु० ॥ २॥ अंजन चोर महाअपराधी, दियो स्वर्ग पहुँचाय। कथानाथ श्रेणिक समदृष्टी, कियो नरक दुखदाय ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ सेव असेव कहा चलै जियकी, जो तुम करो सु न्याय। द्यानत सेवक गुन गहि लीजै, दोष सबै छिटकाय ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

(७७) राग विलावल ।

प्रभु तुम सुमरनहीमें तारे ॥ टेक ॥ सूअर सिंह नौल वानरने, कहौ कौन व्रत धारे ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ सांप जाप करि सुरपद पायो, स्वान श्याल भय जारे। भेक वोक गज अमर कहाये, दुरग-

ति भाव बिदारे ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ भील चोर मातंग जु गनिका, बहुतनिके दुख टारे । चक्री भरत कहा तप कीनौ, लोकालोक निहारे ॥ प्रभु० ॥ ॥ ३ ॥ उत्तम मध्यम भेद न कीन्हों, आये शरन उबारे । द्यानत राग दोष बिन स्वामी, पाये भाग हमारे ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

(७८) राग भैरों ।

ऐसो सुमरन कर मेरे भाई, पवन थँभै मन कितहूँ न जाई ॥ टेक ॥ परमेसुरसों साँच रहीजै, लोकरंजना भय तज दीजै ॥ ऐसो० ॥ १ ॥ जप अरु नेम दोउ विधि धारै, आसन प्राणायाम सँभारो । प्रत्याहार धारना कीजै, ध्यान-समाधि-महारस पीजै ॥ ऐसो० ॥ २ ॥ सो तप तपो बहुरि नहिं तपना, सो जप जपो बहुरि नहिं जपना। सो व्रत धरो कहुरि नहिं धरना, ऐसे मरों बहुरि नहिं मरना ॥ ऐसो० ॥ ३ ॥ पंच परावर्तन लखि लीजै, पांचों इन्द्रीको न पतीजै । द्यानत पांचों लच्छि लहीजै, पंच परम गुरु शरन गहीजै ॥४॥

(७९) राग विलावल।

कहिवेकों मन सूरमा, करवेकों काचा ॥टेक॥ विषय छुड़ावै और पै, आपन अति माचा ॥ कहिवे० ॥ १ ॥ मिश्री मिश्रीके कहैं, मुँह होय न मीठा। नीम कहैं मुख कटु हुआ, कहुँ सुना न दीठा ॥ कहिवे० ॥ २ ॥ कहनेवाले वहुत हैं, करनेकों कोई। कथनी लोक रिझावनी, करनी हित होई ॥ कहिवे० ॥ ३ ॥ कोड़ि जनम कथनी कथै, करनी विनु दुखिया। कथनी विनु करनी करै, द्यानत सो सुखिया ॥ कहिवे० ॥ ४ ॥

(८०) राग विलावल।

श्रीजिननाम अधार, सार भजि ॥टेक॥ अगम अतट संसार उदधितैं, कौन उतारै पार ॥ श्रीजिन० ॥ १ ॥ कोटि जनम पातक कटैं, प्रभु नाम लेत इक बार। ऋद्धि सिद्धि चरननसों लागै, आनँद होत अपार ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥ पशु ते धन्य धन्य ते पंखी, सफल करैं अवतार। नाम विना धिक मानवको भव, जल वल ह्वै है

छार ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥ नाम समान आन न-हिं जग सब, कहत पुकार पुकार। द्यानत नाम तिहूँ पन जपि लै, सुरगमुकति दातार ॥ ४ ॥

(८१)

देखे सुखी सम्यकवान ॥ टेक ॥ सुख दुख-को दुखरूप विचारैं, धारैं अनुभव ज्ञान ॥ देखे० ॥१॥ नरक सातमेंके दुख भोगैं, इन्द्र लखैं तिन मान। भीख मांगकै उदर भरैं न करैं चक्रीको ध्यान ॥ देखे० ॥ २ ॥ तीर्थंकर पदको नहिं चा-वैं जपिउदय अप्रमान। कुष्ट आदि बहु व्याधि दहत न, चहत मकरध्वज थान ॥ देखे० ॥ ३ ॥ आधि व्याधि निरबाध अनाकुल, चेतनजोति पु-मान। द्यानत मगन सदा तिहिमाहीं, नाहीं खेद निदान ॥ देखै० ॥ ४ ॥

(८२)

ज्ञानी जीव-दया नित पालैं ॥ टेक ॥ आरं-भतैं परघात होत है, क्रोध घात निज टालैं ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ हिंसा त्यागि दयाल कहावै, जलै

कषाय वदनमें । वाहिर त्यागी अन्तर दागी, पहुंचै नरकसदनमें ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ करै दया कर आलस भावी, ताको कहिये पापी । शांत सुभाव प्रमाद न जाकै, सो परमारथ व्यापी ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ शिथिलाचार निरुद्यम रहना, सहना वहु दुख भ्राता । द्यानत बोलन डोलन जीमन, करैं जतनसों ज्ञाता ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

(८३)

कारज एक ब्रह्महीसेती ॥ टेक ॥ अंग संग नहिं बहिरभूत सब, धन दारा सामग्री तेती ॥ कारज० ॥ १ ॥ सोल सुरग नव ग्रैविकमें दुख, सुखित सातमें ततका वेती । जा शिवकारन मुनि गन ध्यावैं, सो तेरे घट आनंदखेती ॥ कारज० ॥ ॥ २ ॥ दान शील जप तप व्रत पूजा, अफल ज्ञान विन किरिया केती । पंच दरब तोतैं नित न्यारे, न्यारी रागदोष विधि जेती ॥ कारज० ॥३ तू अविनाशी जगपरकासी, द्यानत भासी सुकलावेती । तजौ लाल ! मनके विकलप सब, अनुभवमगन सुविद्या एती ॥ कारज० ॥ ४ ॥

(८४)

चेतन खेलै होरी ॥ टेक ॥ सत्ता भूमि छिमा वसन्तमें, समता प्रानप्रिया संग गोरी ॥ चेतन० १ ॥ मनको माट प्रेमको पानी, तामें करुना केसर घोरी । ज्ञान ध्यान पिचकारी भरिभरि, आपमें छोरै होरा होरी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ गुरुके वचन मृदंग बजत हैं, नय दोनों डफ ताल टकोरी । संजम अतर विमल ब्रत चोवा, भाव गुलाल भरै भर झोरी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ धरम मिठाई तप बहु मेवा, समरस आनंद अमल कटोरी । द्यानत सुमति कहै सखियनसों, चिरजीवो यह जुगजुग जोरी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

(८५)

भोर भयो भज श्रीजिनराज, सफल होंहिं तेरे सब काज ॥ टेक ॥ धन सम्पत मनबांछित भोग, सब विधि आन बनैं संजोग ॥ भोर० ॥१ कलपबृच्छ ताके घर रहै, कामधेनु नित सेवा बहै । पारस चिन्तामनि समुदाय, हितसों आय मिलैं

सुखदाय ॥ भोर० ॥ २ ॥ दुर्लभतैं सुलभ्य ह्वै जाय, रोग सोग दुख दूर पलाय। सेवा देव करैं मन लाय, विघन उलट मंगल ठहराय ॥ भोर० ॥ ३ ॥ डांयन भूत पिशाच न छलैं, राजचोरको जोर न चलै। जस आदर सौभाग्य प्रकास, द्यानत सुरग मुकतिपदवास ॥ भोर० ॥ ४ ॥

(८६)

आयो सहज वसन्त खेलैं सब होरी होरा ॥ टेक ॥ उत बुधि दया छिमा बहु ठाढ़ीं, इत जिय रतन सजै गुन जोरा ॥ आयो० ॥ १ ॥ ज्ञान ध्यान डफ ताल बजत हैं, अनहद शब्द होत घनघोरा। धरम सुराग गुलाल उड़त है, समता रंग दुहूंने घोरा ॥ आयो० ॥ २ ॥ परसन उत्तर भरि पिचकारी, छोरत दोनों करि करि जोरा। इततैं कहै नारि तुम काकी, उततैं कहैं कौनको छोरा आयो० ॥ ३ ॥ आठ काठ अनुभव पावकमें, जल बुझ शांत भई सब ओरा। द्यानत शिव आनन्दचन्द छवि, देखैं सज्जन नैन चकोरा ॥

(८७)

अजितनाथसों मन लावो रे॥ टेक॥ करसों ताल वचन मुख भाषौ, अर्थमें चित लगावो रे॥ अजित०॥ १॥ ज्ञान दरस सुख बल गुनधारी, अनन्त चतुष्टय ध्यावो रे। अवगाहना अवाध असूरत, अगरु अलघु बतलावो रे॥ अजित०॥ २॥ करुनासागर गुनरतनागर, जोतिउजागर भावो रे। त्रिभुवननायक भवभयघायक आनँददायक गावो रे॥ अजित०॥ ३॥ परमनिरंजन पातकभंजन, भविरंजन ठहरावो रे। द्यानत जैसा साहिब सेवो, तैसी पदवी पावो रे॥

(८८) राग आसावरी।

अब हम अमर भये न मरैंगे॥ टेक॥ तन कारन मिथ्यात दियो तज, क्यों करि देह धरैंगे अब०॥ १॥ उपजै मरै कालतैं प्रानी, तातैं काल हरैंगे। राग दोष जग बंध करत हैं, इनको नाश करैंगे॥ अब०॥ २॥ देह विनाशी मैं अविनाशी भेदज्ञान पकरैंगे। नासी जासी हम थिरवासी,

चोखे हों निखरैंगे ॥ अब० ॥ ३ ॥ मरे अनन्त बार विन समझैं, अब सब दुख विसरैंगे । द्यानत निपट निकट दो अक्षर, विन सुमरैं सुमरैंगे ॥

(८९) राग आसावरी

भाई ! ज्ञानी सोई कहिये ॥ टेक ॥ करम उदय सुख दुख भोगेतैं, राग विरोध न लहिये ॥ भाई० ॥ १ ॥ कोऊ ज्ञान क्रियातैं कोऊ, शिव-मारग वतलावैं । नय निहचैं विवहार साधिकैं, दोऊ चित्त रिझावैं ॥ भाई० ॥ २ ॥ कोई कहै जीव छिनभंगुर, कोई नित्य वखानैं । परजय द्रवित नय परमानैं, दोऊ समता आनैं ॥ भाई० ॥ ३ ॥ कोई कहै उदय है सोई, कोई उद्यम बोलै । द्यानत स्यादवाद सुतुलामें, दोनों वस्तैं तोलै ॥ भाई० ॥ ४ ॥

(९०) राग आसावरी ।

भाई ! कौन धरम हम पालैं ॥ टेक ॥ एक कहैं जिहि कुलमें आये, ठाकुरको कुल गालैं ॥ भाई० ॥ १ ॥ शिवमत बौध सु वेद नयायक,

मीमांसक अरु जैना। आप सराहैं आगम गाहैं, काकी सरधा ऐना ॥ भाई० ॥ २ ॥ परमेसुरपै हो आया हो, ताकी बात सुनी जै। पूछैं बहुत न बोलैं कोई, बड़ो फिकर क्या कीजै ॥ भाई० ॥३ जिन सब मतके मत संचय करि, मारग एक बताया। द्यानत सो गुरु पूरा पाया, भाग हमारा आया ॥ भाई० ॥ ४ ॥

(६१) राग गौरी।

हमारो कारज कैसें होय ॥टेक ॥ कारण पंच मुकती मारगके, तिनमेंके हैं दोय ॥ हमारो० ॥१ हीन संघनन लघु आयूषा, अल्प मनीषा जोय। कच्चे भाव न सच्चे साथी, सब जग देख्यो टोय हमारो० ॥ २ ॥ इन्द्री पंच सुविषयनि दौरैं, मानैं कह्या न कोय। साधारन चिरकाल बस्यो मैं धरम बिना फिर सोय ॥ हमारो० ॥ ३ ॥ चिन्ता बड़ी न कछु बनि आवै, अब सब चिन्ता खोय। द्यानत एक शुद्ध निजपद लखि, आपमें आप समोय ॥ हमारो० ॥ ४ ॥

(६२) राग गौरी।

हमारो कारज ऐसें होय ॥ टेक ॥ आतम आतम पर पर जानैं, तीनौं संशय खोय ॥ हमा-रो० ॥ १ ॥ अंत समाधिमरन करि तन तजि, होय शक्र सुरलोय विविध भोग उपभोग भोगवैं, धरमतनों फल सोय ॥ हमारो० ॥२॥ पूरी आयु विदेह भूप ह्वै, राज सम्पदा भोय। कारण पंच लहै गहै दुद्धर, पंच महाव्रत जोय ॥ हमारो० ॥ ३ ॥ तीन जोग थिर सहै परिषह, आठ करम मल धोय। द्यानत सुख अनन्त शिव विलसैं, जनमैं मरै न कोय ॥ हमारो० ॥ ४ ॥

(६३) राग गौरी।

देखो! भाई श्रीजिनराज विराजैं ॥ टेक ॥ कंचनमनिमय सिंहपीठपर, अन्तरीक्ष प्रभु छाजैं देखो० ॥ १ ॥ तीन छत्र त्रिभुवन जस जंपैं, चौं सठि चमर समाजैं। वानी जोजन घोर मोर सुनि, डर अहि पातक भाजैं ॥ देखो० ॥ २ ॥ साढ़े वारह कोड़ दुन्दुभी, आदिक वाजे वाजैं।

वृक्ष अशोक दिपत भामंडल, कोड़ि सूर शशि लाजैं ॥ देखो० ॥ ३ ॥ पहुपवृष्टि जलकन मंद पवन, इन्द्र सेव नित साजैं। प्रभु न बुलावैं द्यानत जावैं सुरनर पशु निज काजैं ॥ देखो० ॥४

(६४) राग गौरी।

देखो भाई ! आतमराम विराजै ॥ टेक ॥ छहो दरव नव तत्त्व ज्ञेय है, आप सुज्ञायक छाजै ॥देखो०॥ १ ॥ अर्हत सिद्ध सूरि गुरु मुनिवर, पाचौं पद जिहिमाहीं। दरसन ज्ञान चरन तप जिहिसें, पटतर कोऊ नाहीं ॥ देखो० ॥२॥ ज्ञान चेतना कहिये जाकी, बाकी पुदगलकेरी। केवल ज्ञान विभूति जासुकै, आनविभौ भ्रमकेरी ॥३॥ एकेन्द्री पंचेन्द्री पुदगल, जीव अतीन्द्री ज्ञाता। द्यानत ताही शुद्ध दरबको जांनपनो सुखदाता ॥४

(६५) राग गौरी।

अब मोहि तार लेहु महावीर ॥टेक॥ सिद्धारथनन्दन जगवंदन, पापनिकन्दन धीर ॥ अब० ॥ १ ॥ ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, बानी गहर

गंभीर । मोक्षकेकारन दोपनिवारन, रोप विदारन वीर ॥ अव० ॥२॥ आनंदपूरत समतासूरत, चूरत आपद पीर । वालजती दृढ़व्रती समकिती, दुख दावानल नीर ॥ अव० ॥३॥ गुरु अनन्त भगवन्त अन्त नहिं, शशि कपूर हिम हीर । द्यानत एकहु गुन हम पावैं, दूर करैं भव भीर ॥ अव० ॥ ४ ॥

(६६) राग गौरी ।

जय जय नेमिनाथ परमेश्वर ॥टेक॥ उत्तम पुरुषनिको अति दुर्लभ, वालशीलधरनेश्वर ॥ज० ॥१॥ नारायन वहु भूप सेव करैं, जय अघतिमिर-दिनेश्वर । तुम जस महिमा हम कहा जानैं, भाखि न सकत सुरेश्वर ॥ जय० ॥२॥ इन्द्र सवै मिल पूजैं ध्यावैं, जय भ्रम तपत निशेश्वर, गुण अनन्त हम अन्त न पावैं वरन न सकत गनेश्वर ॥ जय०॥ गणधर सकल करैं थुति ठाढैं, जय भव जल पोतेश्वर । द्यानत हम छद्मस्थ कहा कहैं, कह न सकत सरवेश्वर ॥ जय० ॥४॥

(६७) राग गौरी ।

आदिनाथ तारन तरनं ॥ टेक ॥ नाभिराय-

मरुदेवी नन्दन, जनम अजोध्या अघहरनं ॥ आदि० ॥ १ ॥कलपबृच्छ गये जुगल दुखित भये-करमभूमि विधिसुखकरनं। अपछर नृत्य मृत्यु लखि चेते, भव तन भोग जोग धरनं ॥ आदि० ॥ २ ॥ कायोत्सर्ग छमास धर्यो दिढ़, बन खग मृग पूजत चरनं। धीरजधारी बरस अलारी, सहस वरस तप आचरनं ॥ आदि०॥३॥ करम नासि परगासिज्ञानको, सुरपति कियो समोसरनं। सब जन सुख दे शिवपुरपहुंचे, द्यानत भवि तुम पदशरनं ॥ आदि० ॥ ४ ॥

(६८) राग गौरी।

सैली जयवन्ती यह हूजो ॥ टेक॥ शिव मारगको राह बतावे और न कोई दूजो ॥सैली०॥१ ॥ देवधरम गुरुसांचे जानै, झूठो मारग त्याग्यो ॥ सैलोकेपरसाद हमारो, जिनचरनन चित लाग्यो ॥ सैली० ॥ २ ॥ दुख चिरकाल सह्यो अति भारी, सो अब सहज विलायो। दुरिततरन सुखकरन मनोहर, धरम पदारथ पायो ॥ सैली० ॥३॥

द्यानत कहै सकल सन्तनको, नित प्रति प्रभुगुन गायो । जैनधरम परधान ध्यानसौं, सब ही शिवसुख पावो ॥ सैलो० ॥ ४ ॥

(६६) राग सोरठ ।

देखो ! अेक फूल लै निकस्यो, विन पूजा फल पायो ॥ टेक ॥ हरषित भाव मरयो गजपगतल, सुरगत अमर कहायो ॥ देखो० ॥ ॥ मालिनि-सुता देहली पूजी, अपछर इन्द्र रिझायो । हाली चरूसों दृढ़व्रत पाल्यो, दारिद तुरत नसायो ॥ देखो० ॥ २ ॥ पूजा टहल करी जिन पुरुषनि, तिन सुरभवन बनायो । चक्री भरत नयौ जिनवरको, अवधिज्ञान उपजायो ॥ देखो० ॥ ३ ॥ आठ दरव लै प्रभुपद पूजै, ता पूजन सुर आयो । द्यानत आप समान करत हैं, सरधासों सिर नायो ॥ देखो० ॥ ४ ॥

अद्वितीय भजन माला

प्रथम भाग

संग्रह कर्ता—

श्रीयुत कुन्दनमलजी सोनी

सहायक मंत्री श्री जैन कुमार सभा, अजमेर।

प्रकाशक —

जैठमल बड़जात्या।

न्योछावर अष्ट आने। प्रथमवार।

॥ वन्दे जिनवरम् ॥

अद्वितीय भजन माला

प्रथम भाग

संग्रह कर्त्ता

श्रीयुत सुजानमलजी सोनी,

सहायक मंत्री, श्रीजैन कुमार सभा

अजमेर।

प्रकाशक—

जेठमल बड़जात्या,

सरावगी मोहल्ला,

अजमेर।

प्रथमसंस्करण) श्रीवीरनिर्वाण सं. २४५४ (न्यो. बारहआने

* प्रकाशकीय निवेदन *

——:o:——

मान्यवर बंधुवों !

प्राय आज कल संसारमें एक सांगीत विद्या ही ऐसी मनो रंजक है कि जिससे हरेक व्यक्तो वल्कि अनपढ तक इस के भावों को स्पस्ट समझ लेता है और उन भावों से आकर्षित होकर मंत्र मुग्ध होजाता है। हमारे भाग्य से हमारी दि० जैन समाज में ऐसे २ कई कवी होगये हैं कि जिन्होने आत्मलक्ष वैराग्य रस भगवंत प्राथना समाज की उन्नती सप्तव्यसन त्याग तत्त्व स्वरूप आदि विषयों पर मधुर रुपमें रसपूरित रचनाकी है 'जिस कालमेंये प्रसिद्ध२ कवि हुये हैं उस काल मे छापे का प्राय अभाव साहीथा, और जो कुछ था वो हस्त लिखित पुस्तकों में हीथा जो कभी २ हमारे सुनने में वयो वृद्ध पुरुषयोंसे आजाया करता है। उन प्राचीन भजनों को सुनकर शायद ही कोई ऐसा हो की जिसका मनआकर्षित न होताहो, अस्तु उन प्राचीन भजनों को समाज में प्रचलित करने की इच्छा से हमारे परमस्नेही मित्र श्रीयुत **सुजानमलजी सोनी** सहायक मंत्री श्रीजैन कुमार सभा।अजमेर नेजो कठिन परिश्रम भजनों को संग्रह करने में किया है उसके लिये वे धन्यवाद के पात्र हैं वैसे तो इनके पुज्य वावाजी श्रीमान हरकचंदजी साहव सरु से ही सांगीत विद्या के वहुत अच्छे जानकार हैं और आज उनकी वृद्धावस्था में भी हमारी अजमेर की जैन समाज में धार्मिक गयान में उनके मुकावले में शायद

ही कोई ठहर सकता हो, हमारे मित्र ने भी बचपन सेही आप ही के पास गायन विद्या का अभ्यास किया है। आज आपने इसी संगीत विद्याके अभ्यास में मुग्ध होकर अपने कठिन परिश्रम द्वारा हमारी समाज में जो बड़ी कमी थी उस की पूरती इस 'अद्वीतीय भजन माला' द्वारा कर जोउन प्रातस्मरणीय कवीयोंकी स्मृति को चिर स्मरणीय रखने का उद्योग कर समाज के सन्मुख यह संग्रह रखा है उसके लिये हमारे संग्रह कर्ता महोदय को जितना भी धन्यवाद दिया जाय थोड़ा है। अन्त में, मैं समाज से सविनय निवेदत करता हूं कि आप इस पुस्तक को अपना कर उन प्राचीन कवियों की कृत्ति अपने हृदय में रखते हुये आत्मानुभवकी तरफ लक्ष देवें।

भवदीय —

सरावगी मोहल्ला
अजमेर,

ता० १३-१०-२८.

जेठमल बड़जात्या,

नोट—हमारा विचार इस पुस्तक को सर्वाङ्ग सुन्दर बनाने का था पर समयानु भाव के वजह से जैसा चाहते थे वैसा न कर सके उसके लिये पाठक क्षमा करेंगे। प्रूफ संशोधनादि में कोई गलती रह गई हो उसको भी क्षमा करते हुये हमें सूचित करेंगे ताके आगामी संस्करण में गलतीयें ठीक करदी जावे।

प्रकाशक —

॥ नम्रनिवेदन ॥

दिगम्बर जैन समाज में ऐसे कई कवि होगये हैं जिन्हों ने सुन्दर रचनायें रचकर समाज का बड़ा उपकार किया है। उनके भाव पूर्ण पदों को गाने से गाने व सुनने वाले सबही सज्जन परमात्माकी भक्ति में तन्मय होजाते हैं। गूढ तात्विक विषयोंकी चर्चा उनमें इस खूबी के साथ की गई है कि उसपर मुग्ध होजाना पड़ता है। काल दोष से ऐसे पद भजन प्रायः दुष्प्राप्य होरहे हैं। वे यानो कभी वृद्ध जनोद्वारा सुनने में आते हैं अथवा कहीं प्राचीन हस्त लिखित पुस्तकों में दिखाई देजाते हैं। इस उद्देश्य से कि वे सर्वथा अप्राप्यही न हो जायँ बड़े कठिन परिश्रम से इस पुस्तक में ऐसे कुछ भजनों का संग्रह किया गया है। इस कार्य में मुझे मेरे पूज्य बाबाजी श्रीमान् हरकचंदजी सोनी श्रीमान् पन्नालालजी अजमेरा श्रीमान् फतहलालजी दोसी श्रीमान् मा० मोतीचन्दजी खिदूका आदि से पूर्ण सहायता मिली है एतदर्थ मैं उनका पूर्ण आभारी हूं। संग्रह जैसा कुछ होपाया है आपके सामने है यदि आपने कृपापूर्वक इसे अपनाकर मेरे उत्साहको बढाया तोमैं बहुत शीघ्रही इसका दुसरा भाग लेकर आपकी सेवामें पुनः उपस्थित होऊंगा आशा है सभी सज्जन वृंद इसका प्रचार बढावेंगे और इसके द्वारा उन प्राचीन कवियों की स्मृति को चिर स्थिर रखते हुये अपनी आत्मा का कल्यान करेंगे।

विनीत —

अजमेर

सुजानमल सोनी,
संग्रहकर्त्ता।

॥ समर्पण ॥

श्रीमान् धर्म प्रेमी परम आदरणीय कुं० भागचंदजी साहब.

की सेवा मैं

श्री धर्म प्रेमी जैनियों में कीर्त्ति स्तम्भ स्वरूप हो।
संगीत विद्याके विशारद सर्व विधि अनु रुप हो ॥
इनही गुणों से मुग्ध हो इस भजन संग्रह रत्न को।
सादर समर्पित करत हूं सो सफलकीजिये यत्न को ॥

मान नीय बंधुवर !

आपमैं कविता प्रेम धर्म परायणता समाज हितैपिता नम्रता ललित कलाओं मैं अनुराग आदि गुणोंका समावेश देखकर मेरी रुचि भी सुंदर सरस शांति प्रदायनी कविताओं की ओर हुई, परन्तु ऐसी कविताओं की प्राप्ति दुर्लभ देखकर मैंने बडेपरिश्रमसे अनेक मित्रोंके सहयोग सेएक संग्रह तैयार किया, आज यह संग्रह लेकर आपकी सेवामें उपस्थित हुवाहूं यह सब आपके उत्साह प्रदानका ही फलहै, यह संग्रह कैसा होपाया है इस के विषयमेंमैं कुछ नहि कह सकता. फूल या पंखुरी जो कुछ है श्रद्धा पूर्वक आपको समर्पितहै.

भवदीय गुणानुरागी-
आश्विनशु सं१९८९ } सुजानमल सोनी, संग्रह कर्त्ता.

श्रीमान् धर्म-प्रेमी कुँवर भागचंदजी सोनी

अजमेर.

* विषयानुक्रमणिका *

इसके आगे की सूची आखरी १४६ के पृ० पर देखो.

॥ श्री जिनायनमः ॥

॥ अद्वितीय भजन माला ॥

॥ दोहा ॥

करुं प्रणाम जिनराज को आतम हित के काज,
भजनों का संग्रह करुं अपनावो जैन समाज।

राग टप्पा तिल्लाना कल्याण (१)

ॐ पाचों परमेष्ठि ध्याऊं ध्याऊं सुमरि सुमरि गुण गण गाऊं। अब हरप हरप करि उमगि २ मैं वार वार जस गाऊं।टेक।

अरहंत सिद्ध आचारज स्वामी। उवझाय साधु पंच पद नामी सब जिन प्रतिमा अरु जिनवाणी। कृतिम अकृतिम जिनगृह धामी॥ इन सब को निशि दिन घडिपल बार वार शिर नांऊं ॥१॥

येही मंगल येही उत्तम । इनको शरण धारि कर अब हम ॥ वीन मृदंग बांसुरी लेकर । ताल बजाय नृत्य तांडव करि ॥ सप्त सुरन सो तीन ग्राम जुत श्रीजिनेन्द्र गुण गाऊं ॥ २ ॥ सरे गम पद्नीसा । नीनीधप मगरेसा । ता थेई थेई तत् तत् गगर गगर सारे गम पद्नीसा नादिर तानी तुम दिर तानी ॥ तुम तन दिरना मंगल गाणा आनंद सों करना ॥ मन वच तन करि बलदेव प्रभुको हिरदे में पधराऊं ॥ ३ ॥

राग कल्याण (२)

दीना नाथ काटो करम की बेडी ॥ टेक ॥

हा हा खात तोरे पैयां परत हूं । इतनी अरज सुन मोरी ॥ १ ॥ मैं अनाथ इनके वश होय के भ्रम्यो चतुर्गति फेरी ॥ २ ॥ बलदेव को निज दास जान के दीजो शिव सुख सेरी ॥ ३ ॥

राग मांड (३)

थांसू प्रभु म्हारो मन म्होजी लुभाय ॥ टेक ॥

वीत राग छवि निरख रावरी । मिथ्या देव दिये छिटकाय ॥ १ ॥ तुम पद पंकज को प्रभु अब मैं । सेऊं मन वच तनड़ो लगाय ॥ २ ॥ तुम हो जगत के बांधव प्रभु । बिन कारण सब को सुख

दाय ॥३ ॥ तुम को दीन दयाल जान कर। वल देव शरण गही तोरी आय ॥ ४ ॥

राग ठूमरी (४)

सुजरा हमारा लीजे प्रभु ॥ टेक ॥

हे जिनराज दयाकर मोकूं अपनो दर्शन दीजे ॥ १ ॥ देव न दीसे तुम सम कोई मोपै जस काम सरीजे ॥ २ ॥ अब प्रभु दीन दयाल कृपा कर वलदेव को निज कीजे ॥ ३ ॥

खमाच (५)

प्रभु थारी छव म्हारे मन भाय रही। थानैं निरखत अति सुख थाय जिया ॥ टेक ॥

वीत राग सब दोप रहित प्रभु त्रिभुवन आनंद दाय सही ।१। और देवकी छवि ना सुहावे वेशगदो समद छाय रही ॥ २ ॥ वलदेव के निश दिन थारी छव दिल बिच खूब समाय रही ॥३॥

मलहार (६)

तुम से लागे नैन हमारे तुमसे ॥ टेक ॥

निशदिन घड़ी पल लगी रहत लौ नेकन चाहत न्यारे ॥१॥

होत हर्ष अति निरख निरख अब दर्श देख प्रभुथारे ॥ २ ॥ वलदेव भव भव यह जाचत मोय दीज्यो दर्श तिहारे ॥ ३ ॥

मल्हार धूलीया (७)

अर्ज सुनो महाराज प्रभुजी म्हारी ॥ टेक ॥

जन्म जारा मृत दुख वहु देवें मेट गरीबन वाज ॥ १ ॥ आन देव सेये वहुतेरे । सरियो नही मो काज वडे भाग अब तुम प्रभु भेटे तारण तरण जहाज ॥ २ ॥ तुम प्रभु पतित अनंत उधारे सारे सव काज । वलदेव के भवफंद कटादयो दीजो शिव रो राग ॥ ३ ॥

दादरा भैरवी (८)

मेरी ओर निहारो प्रभु मैं चरणों का दास भया ॥टेक॥

तुमबिन आन देव संग मेरा अवतक वहुत अकाज भया ।१। काल लब्धि से अब तुम भेटे तुम्है देख भ्रम भाजगया ॥२॥ त्रिभुवन मैं तारक तुमही हो मो उर निश्चय आज भया ॥ २ ॥ वलदेव तुमरी शरण गई है तुम्है परस मैं निहाल भया ॥ ४ ॥

मांड (९)
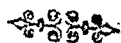
हो महाराजा स्वामी थेतो म्हानै त्थारो म्हाकाराज॥टेक॥

थेही तारन तरन छोजी थे छो गरीवनवाज। अधम उधारन जानके शरणैं आया री लाज ॥ १ ॥ जीव अनंता त्यारिया जाको अंतन पार। अधम उदधि तिरंजचके बहुत किये भवपार ॥२॥ ऐसी सुणकर साख तिहांरी आयो छूं दरवार। भवउधि डूवत काढ मोंकू सरणैं आया की लाज ॥ ३ ॥ अर्ज करुं कर जोड के विनवूं वार वारं। वलदेव प्रभु है दास तिहांरो दीजो शिवपुर वास ॥४॥

(१०)

राखोगे जिनंद प्रभु लाज हमारी ॥ टेक ॥

आन पड्योहूं तुम चरणन मैं मनवच तनसे शरण तिहांरी।१।
दुष्ट कर्म दुख दे अनादि से गतिचारों में भ्रमाया मोये भारी।२।
तुम सम ओरन देव जगत मैं त्यारन वाला तुही सुखकारी।३।
तुम हो प्रभु करुणांके सागर। वलदेवको प्रभु करो सुख कारी।४।

भैरवी ११

आज महावीर स्वामि वंदो मन लायके ॥ टेक ॥

सिद्धार्थ राजा पिता त्रशलादे राणी माता कुंडलपुर जन्म उछव कीनो इन्द्र आयके ॥१॥ सुरनर मुनि करत सेव है प्रभु देवाधि देव गणधरादि ध्यावैं हैं गुणानुवाद गाय के ॥२॥ मन वचन काय लाय बलदेव तुम शरण आय अष्ट अंग नायके सो वार२ ध्यायके॥३॥

राग जंगला

देख देखो नेमि पिया नई लोरथ फेरै प्रभुने मेरी सुधना तनक लईजी ॥ टेक ॥

ब्याहन आयेजी सब मन भायेजी पशुवन शोर सुनैया उलट गिरजैया । जायगिर पर तप धरि दीनोजी ॥१॥ हमसे नेहा तजके शिवसे नेहा कीनाजी, हम उनके संग जैया प्रभुके गुन गैया बलदेव नमि चरण शर्णे लयोजी ॥ २ ॥

(१)

श्री पार्श्वदासजी रचित ।

विनय धर्म शुभ भावना विन आतम हित नहीं चीनारे ।टेक।

पर कर्मन फंस जग मांही तूं उत्तम से भयो हीनारे ॥ १ ॥ दर्शन ज्ञान चरण तपधारक इन का विनय न कीनारे । तन धन सुत दारादिक संगरचि हुवा राग में लीनारे ॥ २ ॥ मान आगका

मत जल जियरा बिनयामृत रस पीनारे पारस बिनय धार अति सो है सुवरण मैं ज्यों मीनारे ॥ ३ ॥

(२)

मार्दव धर्म गहो सुज्ञानी जिया ॥ टेक ॥

आठों मद ज्ञानी न करत है मिथ्या जान न हो । कामदेव चक्री हर हलधर कोऊ थिर न रहो ॥१॥ सब संयोग वियोग सहित लख परकूं काहे चहो । पारस मान करैं ते भोरे आपमैं आप रहो ॥२॥

(३)

चंद जिन भवाताप मेटे । या कारण सुरनर मुनि मिलि सब चरण कवल भेटे ॥ टेक ॥

तीन लोक विजई हू जाके पडन सके नेटे । ऐ सो मोह महा तम जिनकें आप भयो हेटे ॥ १ ॥ अब मम हरो अज्ञान तिमिर बहु काल रह्यो पेटे । पारस बडो भाग्य जिन पाये चंद चरण भेटे ॥ २ ॥

मांड (४)

राणी रजमतिरा भरतार नेमजी त्यारन्यां हीमरे । थांका हर्ष हर्ष गुण गावां ॥ टेक ॥

शिवा नंद जिनराज सांवरो तुम बिन करुणा कौन करे ॥१॥ वसुविधि मेरे ऐसें कीजे फेर न ज्ञान हरे । तुम बिन दुर्गति के दुख भोगे सो अब क्यों न टरे ॥२॥ तुमरो नाम सुनत परसंती पशु प्राणी उधरे । पारस दृढ श्रद्धान भजे तो क्यों नहि मुक्तिवरे ॥३॥

कालंगड़ा (५)

आज वीर जिन मुक्ति पधारे त्रिभुवन जन मिल आये सारे ॥ टेक ॥

पांवा पुर ढिग सुंदर वन मैं सकल देव जय जय उच्चारे । अग्नि कुमार अग्नि चंदन जुत मुकुट अग्निका भस्म करारे ॥ १ ॥ भस्मी सुरपति मस्तक धारे भवि जन आवे शोर सुनारे । वर पर दीपक ज्योति जगारे तादिन से उत्सव चलियारे ॥२॥ शतक च्यार सतर संवत्सर पीछे विक्रम राज धरारे । कार्ती सुदी चतुर्दशी कोरे पिछली निशि के इक घटियारे ॥३॥ मोदि कादि नैवेद्य संवारे सोले भविजन पूज रचाले सो उच्छव अब लग लख पारस मुक्तिगमन श्रद्धान धरारे ॥ ४ ॥

(६)

परकों क्यों अपनायारे अज्ञानी ॥ टेक ॥

तूं अज्ञानी और सव अज्ञानी तैं यहनाहि पिछानी। परके नेहसों वहु दुख भोगे वहुत भये हरौनी ॥१॥ अजहूं चेत संभाल निजातम समझावे जिनवानी। पर सम्वंध कुवंध करत है त्यागे ते शिव थानी ॥२॥ राग द्वेश तज हो समता मय सम्यक गुरु ते जानी। पारस निज स्वरुपही सुख मय समता कूं गुरु ते जानी ॥ ३ ॥

(७)

सांवरिया तेरो दर्शन मोये भावे म्हारो जामन मरन मिटावे ॥ टेक ॥

यदु कुल चंद उजागर नागर सुरनर खगपति नावे। चंद चकोर मोरयव तिम जलयों ऋषि मुनि सव ध्यावे॥१॥ तूंही वुद्ध जिनपति व्रह्मा शिव नारायण कहलावे। न्यायवाद कर्तार कहै तोय कर्ममि मांसक गावे ॥२॥ अलख निरंजन रुपी अरुपी अजन्मा दर्शावे। एकांती तेरा रुप न पावे पारस ध्यावे सोही पावे ॥ ३ ॥

(८)

जिनंदजी विरद सुन्यो थांको वांको, उपकार करो क्योंना म्हाको ॥ टेक ॥

अंजन से तुम अधम उधार कीनो सव अधसाको। चांडाल

द्रह मांहि पड़्याको अतिशय प्रगट्यो यांको ।१। रघुपतिराणी पड़ी अग्नि विच नाम लेत इक थांको । अग्नि कुंड को जल कर डारो पद्म प्रगटायो ताको ।२। त्यारे बहुत सुना आगम में कहतां अंतन जाको । पारस दास कहाय कोन ये जाय कहाऊं काको ।३।

(९)

आली मोरा जियाकी ना पिया सुनता गया ॥ टेक ॥

सुन पुकार पशुवन की मग में करुणा रस चित है गया, हमरे मंदिर से रथ मोड़ा गढ़ गिरनारी चढ़गया ॥ १ ॥ मात तात परिवण न सुहावैं खान पान विष है गया, अब हम कों घर में नही रहनो चित दर्शन बिन वहगया ॥ २ ॥ जो हम कीनी सो हम चीनो जोग धरन मन होगया पार्श्वदास धन रजमति जग में उत्तम तप कर सुरभया ॥ ३ ॥

(१०)

जिनवाणी मों मन भावे या संशय तिमिर मिटावे ॥टेक॥

नव तत्वक की समझ करावे स्वपर भेद दरसावे, मिथ्या अलट मिटावन कारण स्याद्वाद मय थावे ॥ १ ॥ चंद्र भानु मणि नाम पटंतर बाहिर तिमिर मिटावे, बाह्य अभ्यन्तर मेंटे वाणी तीन लोक

शिरनावे ॥ २ ॥ जप तप संयम यामैं गर्भित श्री गुरु श्रुत मैं गावे या विन दूजा शिय पथ नाही यातैं शुभगति पावे ॥ ३ ॥ रतन त्रय याही तैं मिलि है या बिन नहि उपजावे, पारस जावो शिव नही होवे उर तिष्टो यह चावे ॥ ४ ॥

(११)

जियारे जिनवाणी सुख दायनी उरधारो हो जिन सूत्र विचार आन कथा दुख दायनी मति धारो हो ॥ टेक ॥

जियारे संवर निर्जरा समझ समझ उर धारो हो हित रुप विचार, आश्रव वंधन जानके इन टारो हो जिया ॥ १ ॥ जियारे मुक्ति त्रिया की बाजू सखी उरजानो हो, स्याद्वादनी माय शुद्ध तत्व प्रकाशनी जी उर धारी होजिया ॥ २ ॥ जियारे मिथ्यामति को चंद ज्योति सम जानो हो, आपा पर दर्शाय हेया हेय प्रकाशनी नित ध्यावो हो जिया ॥ ३ ॥ जियारे जिन मुख पंकज वासनी सुख खानि हो, पारस नित ध्याय भव समुद्रमें नो का सम जिन वांणी होजिया ॥ ४ ॥

राग गोपी चंद १२

जिया तुम चोरी त्यागोजी विन दिया मत अनुरागोजी । टेक ।

पाप पांचके मध्य विराजे नाम सुनत दुख जाजे, हितू मिलापी

छल कर मांने सुख सुपनै नहीं आवे ॥१॥ राजा दंडे लोका मंडे सज्जन पंच विहंडे, पंच मेर सुत समस्त तज्यां ज्यूं पद्धति थारा मंडे ॥ २ ॥ प्राण समान जान पर धनको मत कोई हरना विचारो, हिंसातें भी बडो पाप यह भाख्यो श्री गणधारो ॥ ३ ॥ सत्य धरम यातें सुख पावे और भी कुगति टुलावे, पारस त्याग कियां सुख पावे उभय लोक उजलावे ॥ ४ ॥

लावणी मरेठी १३

तुम बिन मेरा तीन लोकमें थाली वाग्स ना कोई, जो दीखे ज्यों सकल विनस्वर वसु विधी वश दीखे सोई । टेक ।

कांपे जाऊं दीखे न कोई पराधीनता बिन जोई, ज्यों सागर बिच नौका पंछी परतणा बिन मैं सोई ॥१॥ मैं तुम बिन भटक्यो दुख भोगे तुमतें छानी ना कोई, अब मम दुख मेटो सुख दीजे यातें शरणा गही तोरी ॥ २ ॥ तन धन जोबन क्षणभंगुर है निर्णय कर लीनो थो ही, पर परणति तज निज परणति लहिकर मांगू पारस योही ॥ ३ ॥

सोरठ १४

होजी हो गुरांजी म्हां का राज थांहीं का वचन म्हा म्हाने लागे ॥ टेक ॥

थांकी तो बचा थ्यो गुरां म्हाने थांकी तत्व की बचा क्यो

हो म्हा का राज । १ । रागी संग धारी तो सुनाई वाणी खोटी, एकांत मय तजा द्यो हो म्हा का राज । २ । पारस कूं रचाद्यो निज परणति मैं, परसे विरचा दयो हो म्हां का राज । ३ ।

राग मांड १५

कुमति तोमैं याछै वुरी कुवान चेतननैं जग भरमायारे।टेक।

पंच भेद मिथ्यात तास मैं त्यूं थापो मद पायो, विषयन मैं सुख की कर आशा प्यासा म्टग वत ध्यायो ॥ १ ॥ सात विशन संग युं लपटायो कफ मांखी वत गायो, पांच पाप तै दुख भुगतायो श्रत मैं सोखुण आयो ॥ २ ॥ थारे संग चेतन ते जड़ भयो भव कानन भरमायो, सुमति कहै मो पारस आयो सोही शिव पहुंचायो ॥ ३ ॥

राग मांड १६

जिन राज आज तुम वैन सुनत म्हारी नींद तो गई ॥ टेर ॥

देव धरम गुरु सम्यक मिथ्या की पहिचान भई, लाख चोरासी भ्रमता भ्रमतां अब मोहे सुध जु हुई । १ । निज परतत्व हिता हित समझे पर परणति विलयीं, ममता तज समता मम प्रगटी निज सुख ज्ञानमई । २ । पारस जाचत त्रिभुवनपति मोये दीजो वोधि नई, अंत समय लो तुम वच रचियों तो कृत कृत्य थई । ४ ।

मांड १७

श्रीजी म्हाने पार उतारोजी प्रभु भवदधि अगम अपार प्रभु, म्हाने प्यारा लागोजी ॥ टेक ॥

चहुंगति मैं भ्रमतो फिर्यो कर मिथ्यामन पान भाग्य उदय तुम पाईया मेटा कुगति कुज्ञान । १ । बाल मरण कीने घने विन तुम सम्यक्ज्ञान, अंत समय लो दीजिये प्रगटै आतम ज्ञान । २ । सेवाफल तुम दिया हम धनी धरोहर पार, तापन पंडित मरण ज्यों गर्भ चरणनपास । ३ । कमठ मान मद भंज के भये केवलानंद सो ही वर जानूं अवही हर पारसदास दुखद्वंद ॥४॥

राग पटरस १८

सुने हम बैन श्री गुरु ज्ञानी से ॥ टेक ॥

सब तत्वन मैं सार हैजी आतमा ज्यों मुख ऊपर नैन । १ । याही लखे सबही लखैजी या विन नांहि मिलै सुख चैन । २ । या की महिमा को कहैजी, जाकूं ध्यावत मुनि दिन रैन । ३ । पारस ध्यावो तासकोजी, पावो शिव भाखी वच जैन । ४ ।

पद राग चरचरी भरु १९

चेतन अनुभव विचार चेतो उरमांही मूढ हुयोतृथा भ्रम्यो माया के तांई ॥ टेक ॥

आया कोन गति से जावोगे कदांही, तुम माया नहि लेर

चले रहैगी यहां ही ॥१॥ नाहि मिलै जात पांत नाहि मिलै परकूं नाहक अगेज वृथा कुगति पाई ॥ २ ॥ सम्यक् गुरु देशना विसार संग भेसना पारस निज ज्ञान संपदा सम्हार भाई ॥ ३ ॥

राग बिलावल २०

या मानुष भवरत्न द्वीप मैं श्री अर्हंत भक्ति इकसार । टेक ।

पाप विनाशै, पुन्य प्रकाशै, भव सागर तै करत उद्धार ॥१॥
तुमरे नाम सुनै जो निश दिन, भव सागर तै उतरै पार ॥२॥
पारस भक्ति धरै तेरा है निश्चै मुक्ति त्रिया भरतार ॥ ३ ॥

सोरठ की ठूमरी २१

घर आवोजी जियाजि सुख माणनानै थानै कुणजी नटै अठै आवता नै ॥ टेक ॥

थांनै हिंसरो काज छुडायस्यांजी सातां विसनारो संग निवार वानै ॥ १ ॥ थांकी परणति भी छुडायस्यांजी रुडी निज परणति सो, मिलाय वानै ॥ २ ॥ थांनै ज्ञान मई ढोलणी पोढाय स्यांजी निजरुप मैं तिहूं लोक लखाय वानै ॥ ३ ॥ थानै मुकति प्यारी परनावस्यांजी पारस दास को कारज सारवानै ॥४॥

लावणी २२

सुन तूं जीवारे ऐसी नर पर जाय पाय वृथा मति गमाय ।टेक।

याकूं चाहत सुरपत फणपत इक संजम की चाह, चक्रवर्त

तीर्थंकर तज तज राज गये बन पाय ॥१॥ दुर्लभ मिल्यो जात कुल उत्तम और निरोगी काय. सतसंगति सतगुरु की शिक्षा पाई पुन्य वसाय ॥ २ ॥ शक्ति प्रमाण धार तप संजम वसुविधि कर्म नसाय, पारस अवसर चूक गये तो दुर्गति में पछताय ॥ ३ ॥

झंझोटी २३

जिन दर्शन तें मोहि कांप्यो थर रर ररर ॥ टेक ॥

इन्द्रियां वशकर सुध ज्यों लगाई, सुध ही को लाग्यो मानों तीर निकस्यो सर रर ररर । १ । अशुभ प्रकृति में रस सब विनस्यो, शुभ में बढ गयो नीर देखो अर रर ररर । २ । पारस जप तप तदपि बनत है, मस्त अहो दृढवीर गरज्यो धर रर ररर । ३ ।

खमाच २४

हो मोहे डगर बतादे सुख कारीजी ॥ टेक ॥

तुमरे बिन मोये कुगुरु भ्रमाये, कुगति लही दुखकारीजो ।१। तुमरे नाम मंत्र सब ऊपर । सात्र गण शिर धाराजी ॥ २ ॥ रतन त्रय पद देय हजूरी पारस विनवै थानैंजी ॥ ३ ॥

होली सारंग २५

नित ध्याया कर जिन जासें शिव पासी ॥ टेक ॥

अष्ट कर्म के बंधन तेरे । आप ही खुलता जासी ॥ १ ॥ ध्यान किया निज रुप लखावै स्वर्ग सम्पदा हो दासी ॥ २ ॥ जिन

ध्याये तिन शिव सुख पायो । आगम में सत गुरु भासी ॥ ३ ॥
पारस ध्यान किया निज घट में ज्ञान ज्योति परगट भासी ॥ ४ ॥

२६

तिहारी छव मोहग समा रही तिहारी प्यारी या छवि आन भान सब की शरण दुख की हरण सुख की करण ॥टेक

मनवा मेरा तुम पद लगिया । विसर जात मेरा कुगति गमन १ ॥ तुम गुण कहन सके सुरपति से । मैं कैसे करहूं वर्णन ।२। कब गृह तज के ध्याऊं प्रभु पारस ताते मिलि है मुक्ति रमन् ॥३॥

मांड २७

म्हारा परमातमा जिनंद कांई थारे मारे करमांड्रो आंटो परमातमा जिनंद ॥ टेक ॥

जाति नाम कुल रुप सबजी तुम हम ऐका मेक । व्यक्ति शक्ति कर भेद दोय कोई कीने करम अनेक ॥ १ ॥ तुमतो वसुविध नाशिके भये केवलानंद । मैं वसुविध वश पड रह्यो मोय करो निर फंद ॥ २ ॥ अधम उद्धारण विरद सुनजी पारस शरन गहीन । बत्ती दीप समान तुम प्रभु मोये आप समकीन ॥ ३ ॥

तीर्थ कर तज तज राज गये वन पाय ॥१॥ दुर्लभ मिल्यो जात कुल उत्तम और निरोगी काय, सतसंगति सतगुरु की शिक्षा पाई पुन्य वसाय ॥ २ ॥ शक्ति प्रमाण धार तप संजम वसुविधि कर्म नसाय, पारस अवसर चूक गये तो दुर्गति में पछताय ॥ ३ ॥

भंभोटी २३

जिन दर्शन तैं मोहि कांप्यो थर रर ररर ॥ टेक ॥

इन्द्रियां वशकर बुध ज्यों लगाई, बुध ही को लाग्यो मानों तीर निकस्यो सर रर ररर । १ । अशुभ प्रकृति में रस सब विनस्यो, शुभ में वढ गयो नीर देखो भर रर ररर । २ । पारस जप तप तदपि वनत है, मन्त्र अहो दृढवीर गरज्यो घर रर ररर । ३ ।

खमाच २४

हो मोहे डगर बतादे सुख कारीजी ॥ टेक ॥

तुमरे बिन मोये कुगुरु भ्रमाये, कुगति लही दुखकारीजी ।१। तुमरे नाम मंत्र सब ऊपर साव गणा शिर धाराजी ॥ २ ॥ रतन त्रय पद देय हजूरी पारस विनवै थानेजी ॥ ३ ॥

होली सारंग २५

नित ध्याया कर जिन जासैं शिव पासी ॥ टेक ॥

अष्ट कर्म के बंधन तेरे । आप ही खुलता जासी ॥ १ ॥ ध्यान किया निज रूप लखावै स्वर्ग सम्पदा हो दासी ॥ २ ॥ जिन

ध्याये तिन शिव सुख पायो । आगम में सत गुरु भासी ॥ ३ ॥

पारस ध्यान किया निज घट में ज्ञान ज्योति परगट भासी ॥ ४ ॥

२६

तिहारी छव मोदग समा रही तिहारी प्यारी या छवि आन भान सब की शरण दुख की हरण सुख की करण ।।टेक

मनवा मेरा तुम पद लगिया । विसर जात मेरा कुगति गमन १ ॥ तुम गुण कहन सके सुरपति से । मैं कैसे करहूं वर्णन ।२। कब गृह तज के ध्याऊं प्रभु पारस ताते मिलि है मुक्ति रमन् ॥३॥

मांड २७

म्हारा परमातमा जिनंद कांई थारे मारे करमांइरो आंटो परमातमा जिनंद ॥ टेक ॥

जाति नाम कुल रुप सवजी तुम हम ऐका मेक । व्यक्ति शक्ति कर भेद दोय कोई कीने करम अनेक ॥ १ ॥ तुमतो वसुविध नाशिके भये केवलानंद । मैं वसुविध वश पड रह्यो मोय करो निर फंद ॥ २ ॥ अधम उद्धारण विरद सुनजी पारस शरन गहीन। वत्ती दीप समान तुम प्रभु मोये आप समकीन ॥ ३ ॥

सोरठ २८

गूरां म्हानै जातरूप तुमरो पद रूढो लागे, रूढो लागे चोखो लागे अशुभ करम सब भागे ॥ टेक ॥

पर परणति तज निज परणति लख आतम हित मति जागे ।१। कब गृह तज कर पाऊं पारस शिव पुर के अनुरागे ॥ २ ॥

२९

दुर्लभ नरभव पाय के मत खोवे रे भाई ॥ टेक ॥

सहज मिला चिंतामणि सम यह नरभव शिव सुख दाई, मत खोवे तूं विषयन साटे फिर पीछे पछताई ॥ १ ॥ पंच इन्द्री विषयन के वशि होय झूठे सुख ललचाई, ऐसी रीति अज्ञानी जनकी पड़ें कुगति बिल लाई ॥ २ ॥ समता भाव संभारो अपनो तज परणति परमांही, अनादि काल की पर परणति तें निज पिछाण नहीं आई ॥ ३ ॥ वीतराग उपदेश मिल्यो तोय जिन वाणी सहजांई, पारस न्हवन करो या मांही निश्चय शिवपुर जाई ॥ ४ ॥

३०

अशुभ कर्म रस भोगतैं कहा रोवरे भाई ॥ टेक ॥

पहले हँस हँस बन्ध किया तैं कारणमी कुछ नांही, श्रीगुरु भाषित पंथ गहो नहिं पाप करत न अघाई ॥१॥ पाप नाम नरपति

को किंकर विशन सात दुख दाई, नर्क नगर मैं बास करावै तजो संग इन भाई ॥ २ चहुं कषाय दुर्गति की पोरी इनतैं दूर रहाई, वीत राग उपदेष धारि उर स्वपर भेद दरशाई ॥ ३ ॥ सुख दुख पाय राग रिस तजिये श्री गुरु शिक्षा याही, पारस राग द्वेष तजि वे तैं होवेगा शिव राई ॥ ४ ॥

३१

परनारी विषवेल कूं मत जोवेरे भाई ॥ टेक ॥

रावण तीन खंड को राजा पड्यो नर्क के मांई, औरसुनी आगम मैं बहुजन यातें दुर्गति पाई ॥१॥ मदिरा पीकर होत बावरो लख्या सपरस्यां नांही, लख्यां सपरस्यां सुगरण कीयां वह मारे सहजांई ॥ २ ॥ दृष्टी विष श्रुत हीं मैं सुनी है प्रत्यक्ष कोऊना सखाई, दृष्टी निषा प्रत्यक्ष येम तैं तजो दूतैं याही ॥ ३ ॥ जपतप ज्ञान ध्यान संयम यम संगति कियां नशाई, आतम काज करोतो पारस याकी तज छोछांई ॥ ४ ॥

ठूमरी ३२

कुमता के संग जाय चतेन बरजो नही मानत मानी । टेक।

कुमता म्हारी जनम की बैरन मोह लियोजी ज्ञानी रे याही विषयन लिपटानी । १ । चोरासी के दुख भुगताये तोउ न दिल

विच आनीरे योहे दुर्गति दुख दानी । २ । पारस सीख सुगुरुकी धरकर तज कुमता दुखदानीरे यातें पावो शिवरानी । ३ ।

राग गोपीचंद ३३

जिनवाणी माता दर्शन की बलहारियां ॥ टेक ॥

जिनवर सुमरुं सरस्वतीजी गणधरजी नें ध्याऊं, कुंद कुंद आचार्य जिन्होंके चरणां शीश नमांऊ ॥ १ ॥ जून लाख चोरासी मांही भ्रमता महा दुख पायो, तारण विरद सुन्यो मैं माता शरण तिहारी आयो ॥ २ ॥ जोजिव थारो शरणों लीनो अष्ट कर्म क्षय कीनों, जामन मरण मेटकर माता मोक्ष वास तें दीनो ॥ ३ ॥ वार वार मैं विनऊं माता महरज मोपे कीजे, पारस दास ने दोट कर जोडै अष्ट कर्म क्षयकीजे ॥ ४ ॥

काफी होरी ३४

भाग्य उदय अब आया भला जिनमत तें पाया ॥ टेक ॥

मद्य मांस मधु पंच उदंबर जनमतही न चखाया, विन छान्यो जल रात्रिका भोजन आरंभ गमन घटाया नाम जैनी कहलाया ।१। हिंसा रुप व्योपार न जा में कुलकी रीति लहाया, साधर्मिन की संगति सेती तत्वारथ समझाया ज्ञान सम्यक् दर्शाया ॥ २ ॥ दोष रहित सम्यक्त धारी उर कीज्यो मंद कपाया पारस धर समता ममता तज नर भव सफल कराया ॥ ३ ॥

आसवरी ३५

हो ज्ञानी कैसे विसर गई मतियां ॥ टेक ॥

वेर वेर तोये गुरु समझावत तजि विषयन से लतियां ॥१॥ तूं चेतन जडतैं किम राचत ये तो जोग नहीं वतियां, पारस निजपर की करि छांटण पावो पंचम गतियां ॥ २ ॥

श्री जोंहरीलालजी रचित।

राग आसावरी १

आज जिन दर्श तिहांरो पायो, म्हारो भाग्य उदय अब आयो ॥ टेक ॥

अशुभ गये शुभ प्रगट भये हैं मोह मिथ्यात नशायो, सम्यग दर्शन पाय अनूपम निज परभेद लखायो । १ । राग द्वेष अरु क्रोध मान छल लोभ मांहि ललचायो, नव हांस्यादि अनादि लगे संग तिन तैं ममत तुडायो । २ । ज्ञान अनंत दर्श सुख वीरज आप मांहि दर्शायो. सो वक्सीस करो निज ज्होंरी हात जोड सिर नायो । ३ ।

लावणी २

आज अति हर्ष हिए आई हे जिनवर तुम दर्शन करतां अनुपम निधी पाई ॥ टेक ॥

मेरो शुद्ध स्वभाव चेतना चिर ते विसराई, तुम प्रभावते आप आप कर आप ही प्रगटाई ॥ १ ॥ रागादिक पर निमित होत है ये मुक्ति निवलाई, वीतरागता प्रगट होत ही छिन में नशिजाई ।२। मैं ज्ञायक सब ज्ञेय वस्तुको जड़ते भिन्न भाई, ये सब अतिशय जिनवर तुमरे ज्होंरी सरधाई । ३ ।

आसावरी ३

आज जिन चरण शरण हम पायो म्हारे आनंद उरन समायो ॥ टेक ॥

अशुभ गये शुभ प्रगट भये हैं निजपर भेद लखायो. जड सपरस रस गंध वरण मय तिन तें ममत तुडायो ॥ २ ॥ जीव चेतना ज्ञानमयी है वाको पार न पायो, लोकालोक चराचर दर्शत दर्पण सम झलकायो ॥२॥ ज्ञान अनंत दर्श सुख वीरज देखत मन ललचायो, ये जिन महिमा सुनत जोंहरी मन वचशीश नमायो ॥ ३ ।

काफी ४

जी म्हारे झगड़ो करम को जिनवर द्यो सुरझाय ॥ टेक ॥

मेरो तो इतनो ही दोष है पर कूं निज सरधाय । १ । कर्म अनंतानंत रुप होय जिय गुणलेत दवाय, प्रकृति प्रदेश जुथिति अनु भागन बंधन मांहि बंधाय ।२। गति गति मांहि फेर रहे मुझे जामन मरण कराय, अष्टादश दुख देत अनंते वचतें कहिय न जाय । ३ । और कछु मैं जांचत नांही मिथ्या भाव मिटाय, रागादिक परिणामन उपजे जोंहरी जाचत पाय ॥ ४ ॥

राग रसिया ५

श्री गुरु विन मतलब हितरी जग जन मतलब कीसगरी ।टेक।

छहूं काय के प्राणी ऊपर करुणा भाव करी, मनवच काय विराधे नांही कृतकारित जुतरी । १ । पर परणति तैं भिन्न रहत है कमल नीर समरी, तीन काल की सहै परीषह राग द्वेष विनरी । २ । विन अपराध दुष्ट मिल मारे नाना त्रासधरी, समभावनि तैं सहै दया धरि उनकी विपति हरी । ३ । निंदक वंदक भेदन कीनो शर्ण गही सोतेरी, ज्होंरी श्री गुरु पार लगायो बांह पकड हमरी ॥ ४ ॥

आसावरी ६

आज निज आतम रूप पिछाएयां निज निज निज पर पर जाएयां ॥ टेक ॥

षट द्रव्यन में इक चेतन है शेष जो जड ठहराना, जिय निजरूप विसर पुद्गल को आप रूप सरधाना ॥ १ ॥ है बहिरातम तज अध्यातम भ्रमत फिर्यो चहुं थाना, जन्म जरा मृत बंधन भुगतत तोयन ज्ञान न आना ॥ २ ॥ काल लब्धि जिन धुनि श्रवणन सुनिभेद भाव हरसाना निज परगुण को परख जोंहरी लखि निज चेतन वाना ॥ ३ ॥

राग मांड ७

सांचो तो पिछान्यो ज्ञानी थे तो निज देश आपा पर जान्यो ज्ञानी मिटियो क्लेश ॥ टेक ॥

दर्श रह्यो है ज्ञानी लोकाऽलोक शेष, उपमा न याकी ज्ञानी जग मैंन लेश । १ । रागादि विभाव ज्ञानी पर निमित्त सें, तुमतो विरागी जस गावत सुरेश । २ । धन्य तो जनम ज्ञानी आज को दिवेश जोंहरी तो अचल पद पायसी शिवेश ॥ ३ ॥

(८)

एक सीख सत गुरु कहे भवि सुन चित ओरी रागभाव पर में करे येही बुध भोरी । टेक ।

राग कियो पर त्रिय विषैं रावन चित जोरी, अपयश भयोजु लोक में गयो दुर्गति घोरी ॥ १ ॥ तजिये राग कषाय को ममता न धरोरी, जड चेतन कूं भिन्नकर चेतन चितधोरी ॥ २ ॥ शुद्ध शुद्ध अनुभव करो थिर अचल रहोरी जोंहरी कर्म खिपाय कैं शिव सुख विलसोरी ॥ ३ ॥

मल्हार ९

हो त्रिभुवन ज्ञाता निजपरणति क्योंनाजोय ॥ टेक ॥

पर परणत को निज कर मानत यह चतुराई कोय । १ । स्पर्श रस फुनि गंध वर्णमय जड़ पुद्गल अवलोय । २ । रागादिक विनाश तुझि मांही परके निमित तैं होय । ३ । तूं दृग ज्ञान चरण शुद्धातम निश्चय जानो सोय । ४ । या विधि निज पर परख जोंहरी सुगुरु सिखावत तोय । ५ ।

मलार सोरठ १०

मानोजी मानोजी मानोजी म्हारी बात पर संगति जग भरमात ॥ टेक ॥

चेतन चिद्गुण विसर अयाना जड़ संग जात छिपात ॥ १ ॥ पुद्गल में परतीति अनाद हि भेदन भाव लखात, एक सास दुख

भरन आठदश सो दुख कहियन जात, ॥ २ ॥ इकंव तें चव पन इन्द्री धरी जन्मे फिर मरजात सुरनर नारक पशुगति मांही पुन्य पाप दुख पात ॥३ ॥ याविधि काल अनादि गुमायो भ्रमत फिरत दिन जात, जेचेतें तो दाव भलो है जोंहरी तज उत्पात ॥४॥

(११)

आतम परखोरे भाई जापरख साध निज थाई ॥ टेक ॥

मन इन्द्री द्वारे लखो सोतो पुद्गल जिन गाई, देखे जाणोसो सहीरे दर्पण सम झलकाई ॥१॥ राग द्वेष भ्रम क्रोध मान छल लोभ महा दुखदाई, सोविभाव जिवन के निजनहि पर निमित्त उपजाई ॥ २ ॥ सब विभाव तें आप भिन्न है आप आप थिरताई, च्यार घातिया घात जोंहरी लोकालोक लखाई ॥ ३ ॥

सोरठ १२

जिया तूं मानरे कह्यो जड सम है क्यों रह्यो ॥ टेक ॥

पर संग रच रच पच पचमर मर नाहक संकट सह्यो । १ । पर स्वभाव तुझसम कबहु न है तूं निश्चै नाहुवो, झूंटी प्रीति लगी अनादि की अब तक चेतना हुयो । २ । ज्ञान अनंत दर्श सुख वीरज आगम जिनयों कह्यो, सो स्वरूप निज जानत नांही पर फांसी

फंसियो । ३ । जोचेत तो अवसर नीको कारण सब मिलियो, जोंहरी निज अनुभव करिके अब जिन चरणन को नयो ॥ ४ ॥

सोरठ १३

जिया तेरी बात है खरी और सब झूठ की थरी ॥ टेक ॥

तुम ज्ञायक सब ज्ञेय वस्तु को देखन जाननरी ॥ १ ॥ ज्ञान विषैं सबही दर्शत है तूं सब रुपनरी, रागादिक पर है संजोगी तिन मैं ममत बरी ॥ २ ॥ तूं तूही में पर परही में कबहु न मिल तनरी सदा सास्वता है अबिनाशी राग द्वेष विनरी ॥ ३ ॥ ज्ञान अनंत दर्श सुख वीरज अनुभव दृष्टी करी, जोंहरी मन अति आनंद उमग्यो धनिदिन आज घरी ॥ ४ ॥

सोरठ १४

कर्म गति टारी हू टरे समता चित्त धरे । टेक ।

तन धन घर सूं ममत छांडि के इन्द्री विषयहरे । १ । लाभ अलाभ सरस सम नीरस बिकल्प नांहि करे, महल स्मशान कनक कंकर में राग न रोष करे । २ । मन वचतन थिर आसन मांडे विपता में न डरे, शुद्ध स्वरुप चिदांनंद थिरके मोह खवीश मरे ।३। लोकालोक विलोक वसेशिव फेरन जन्म धरे, ऐसे सिद्धन को शिर नावत जोंहरी काज सरे । ४ ।

गज़ल १५

निज दृष्टि तैं निहारा जग मैं न कोय थारा ॥ टेक ॥

सुत तात मात दारा परिवन जो मित्रसारा, सब ये सगे गरज के विन गर्जे होत न्यारा ॥ १ ॥ तन माल खान द्वारा जियकूं न देसहारा, इनका नहीं पत्यारा मुनिराज जान छारा ॥ २ ॥ रागादि का विकारा पर निमित दोप भारा, ज्होंरी परख विचारा चिन्द्रूप है हमारा ॥ ३ ॥

(१६)

हो जिव ज्ञानी चेतो क्यों नैं भव दुख भ्रमण निवारो क्यौंनें ॥ टेक ॥

मोह नदी मैं अनादि कालके सूते हो क्या जागो क्यौंनें ।१। परको आपजान निज पोषत यावुधि भोरी छांडो क्यौंनें । २ । पर रस मद पी वहु दुख पायो निज अमृत पी खुश हो क्यौंनें, तन धन त्रिय आकुलता कारण भज समता सुख धारो क्यौंनें । २ । विषय कापयतस के कारण कुमतिनार छिटकाओ क्यौंनें, चेतै है तो चेत बावरे ऐसा अवसर आवे कौंनें । ३ । पुन्य उदय अव अवसर पायो जिनपद्म कमल भ्रम रहो क्यौंनें, अनुभन दृष्टि लगाय जौहरी निजगुण पर गुण परखो क्यौंनें । ४ ।

राग तमोलन १७

इक वात सुनी सुख कारी होराज चेतन हित कारीजी ।टेक।

तूं ज्ञायक सवज्ञेय वस्तु को तन जड़ तैं क्या यारी होराज॥१॥ याके संग तैं चिर दुख पाये फिर किम लागत प्यारी होराज, तुम स्याने स्यानप कहां खोई निज सुध बुध जू विसारी होराज ॥२॥ कोलूं कहूं तुमरी चतुराई जड़ मैं आपाधारी होराज ॥ ३ ॥ ज्ञान अनंत दर्श सुख वीरज सो अपना न विचारी हो राज, अवहू चेतैं तो न गयो कछु शिव पावन की वारी होराज, जोंहरी निजपर परखतैं परलख आनंद चितारी होराज ॥ ४ ॥

(१८)

जिया तेरी कोन कुवाण परीरे सीख मानत नांहि खरीरे ।टेक।

मोह महा मद पी अनादि को परको कहै अपनीरे, सोतेरी कवहु नहि है शठ किन तेरी वुद्धि हरीरे ॥ १ ॥ परसुभाव अपनी परणति सा होय न एक घडीरे, तू चेतन पुद्गल जड रुपी किन विध मेल वनीरे ॥२॥ अवहु समझ गयो न गयो कछुतो निज काज सरीरे, निज परगुण को परख जोंहरी ज्योवे शिव वनडी रे ॥ ३ ॥

(९)

संपति पाकर क्या किया किया नहिं उपकार ॥ टेक ॥

मोह उदय ममता वधी समता सुख दिये छार, तृष्णा सागर डूबिवो निकसत नांहि लगार । १ । निश दिन चिन्ता मैं रहै, सब जगको धनभार, मेरे घर मैं आ वसे जबधनि धनि अवतार ।२। घर गहना बनवायके व्याह सुता सुत नार ये कारिज करने घने फिर उपकार विचार । ३ । पहर दोय रजनी गये निद्रा होत विकार, चिमक चिमक उठे परे करणों काम अपार । ४ । भूख प्यास की सुध नही भोजन वेलां टार कर्म मिलावे जब भले देखो दुख संसार । ५ । इन्द्री भोग न भोग है यामैं धन न विगाड कठिन कुमायो आप मैं राखूं पुर्ण सम्हाल । ६ । बहु आरंभ के योग तैं दुर्गति दुख अपार नर्कन की वेदन सहै इम भाखे गण धार ॥ ७ ॥ सम्पति इच्छा सबनि के पूरणता विनधार जौंहरी धनि जे जगत मैं त्यागे जान असार । ८ ।

लावणी २०

काहेको अपणायरे या झूंठी माया छिन छिन विनसी जातरे थांरी काची काया ॥ टेक ॥

आदि संग आई नहीं संग अंतन जाया, विच आई विच ही

गई तूं क्यों बिलखाया ॥ १ ॥ मंत्र जंत्र तंत्रादि कर केई देव मनाया, स्थिती पूरी भये ना रहै तुझे किन बहकाया ॥ २॥ रुदन करे क्यों सोचकरे नाहक बिलखाया, कोई पुकार सुने नहि क्यों कूटत काया ॥ ३ ॥ मात पिता सुतनार कर घर वार वनाया संग अनेक धराय के केई नाच नचाया ॥ ४ ॥ छिन रोवे छिन मैं हंसे छिन सुख दर्शाया विकल्प किए अनेक ते बहु कर्म कमाया ॥ ५ ॥ इत्यादिक विपता सहे जिन वाणी गाया, तोहूं शठ चेते नहि क्यों भांग पिलाया ॥ ६ ॥ जे चेतै तो दाव है कोई भागन पाया, जोंहरि त्याग विटंबना निज चेतन ध्याया ॥ ७ ॥

लावणी २१

तोये त्रिय बहकाया निज मतलब के कारणे निज दास बनाया ॥ टेक ॥

द्रव्य उपाजन काढ़िया बहु देश भ्रमाया सुख दुख की पूंछी नहिं गीत अपनांही गाया ॥ १ ॥ कोई पुन्य संयोग तें धंन चाया पाया, गेह चुनाय गहना किया मन मैं हर्षाया ॥ २ ॥ काम भोग संयोग तैं कन्या सुतजाया, कठिन कुमाया द्रव्य कूं इनके लगवाया ॥३॥वह दिन तो जाता रहा बूढापनछाया, खाने को धन ना रहा

बहु शोच कराया ॥ ४ ॥ सरधा तन मन की घटीन कुमाया जाया, नारि कहै मैं क्या करुं कुछ लावो माया ॥ ५ ॥ इत्यादिक विपता सही दुख सहियन जाया. स्थिति पुरी कर अपनी दुर्गति को ध्याया ॥ ६ ॥ नारिन की संगति बुरी कोई चेत न पाया, पाप अनेक कुमाय के जग मैं भरमाया ॥ ७ ॥ श्री गुरु करुणां लायके ऐसे फरमाया जौहरि त्रिय का त्याग तैं अविचल पद पाया ॥ ८ ॥

राग काफी होली २२

आयु रही अबथोरी कहा करै मोरी मोरी ॥ टेक ॥

मात पिता परलोक सिधारे पास रही नहि गोरी, सुत मित बांधव राज संपदा छिन २ विनसतसोरी फेर नहि मिलत बहोरी । १ । तन पींजर अब जर्जर दीसत लाल पड़े मुख ओरी, गीट गीट कफमिटते नांही दांत डाढ जड छोंडी लग्यो दुख दर्द घनोरी ॥२॥ रोग पिशाच लगे तन भीतर अग्नि भई मंदोरी, वात पित्त कफ है नित घट कंठ विपति अनेक सहोरी, कहत नही आवत ओरी । ३ । कर पग कम्पत लाड हाथ शिर कमर कूब निकसोरी, लकड़ी हाथ डिगत ठोकर कर तोयन समझत घोरी, यह गत मोह भगोरी । ४ । याविधी परख पिछाण जौहरी पर सूं ममत तजोरी, आप आप वसो उर आय मिली शिवगोरी परमानंद हुवोरी ॥ ५ ॥

लावणी खडी २३

अरे अज्ञानी तजो विरानी नार न अपनी होव रै भर भर नैनन मूरख जोवै आपों आप डबोवै रे ॥ टेक ॥

पर नारी ना सगी किसी की हुई न अवना होवैरे, तूं किन कारण पीछे लाग्यो हाथ न आवे चेड़िरे । १ । चोड़ै दाव लगे नहि तेरो पंच राज दंड देवैरे, धृक धृक जगजन यों सब कहसी बात आपनी खोवैरे । २ । छाने छिपके गली कुगैली रैन अन्धेरी होवैरे कोई किस विध दाव लगे तो चिमक २ उठजोवैरे । ३ । नैन नकी सुख रुप नदी से वचनालाप लखोवैरे झट पट काम निमेरो मालिक मत कोई जन जोवैरे । ४ । इत्यादिक दुख होत घनेरे कहत न आवे ओरोरे तजो पराई वनिता भाई जोंहरी सुखिया होवैरे ॥ ५ ॥

काफी २४

चेतन समझन नांही कोलूं कहूं समझाय ॥ टेक ॥

परकी कूं अपनी कर मानत अपनी खवर न पाय । १ । जड़ स्पर्श रस गंध वर्ण मय पुद्गल की परजाय याही के सब काम करत है आतम शक्ति गुमाय । २ । जब चेतन निजरुप संभालै फिर नहि परसंग जाय, आप आप मैं रमत जोंहरी ज्ञानानंद उमगाय । ३ ।

लावणी मरेठी २५

तनकूं तजो विराना रे अशुचि अपावन ग्लानि रूप तैं ममत तुड़ानारे ॥ टेक ॥

हाड मांस मल मूत्र रींट कफ भऱ्या खजानारे, ऊपर चाम मंढी सुंदर लख कहा लुभानारे । १ । मात रुधिर अरु पिता वीर्य्य तैं तूं उपजानारे, गर्भ मांहि जेजे दुख पाये अकथ कहानारे । २ । बाल पने कुछ ज्ञान नंही हित अनहित जाणारे जोवन वनिता अंग लगी सुध बुध विसरानारे । ३ । वृद्धापण मैं अंग थक्यो सब सिथिल रहनारें, खसर करता पड्या खाट मैं होय हराना रे ।४ । धर्म कर्म की बातन न जानी पाप कुमानारे, आप चला दुर्गति को यह तन जला मसानारे । ५ । धन परिजन कोई काम न आवै समझ अयानारे, दुर्गति मांही जाय अकेलो फिर पछतानारे । ६ । जोचेतैं तो चेत सयाना गुरु समझानारे, आपा परकों परख जोंहरी को शिव थानारे । ७ ।

(२६)

निज पर नांहि पिछान्यारे मोह मिथ्यात उदय पर जड कूं निज कर मान्यारे ॥ टेक ॥

जड़ स्पर्श रस गंध वर्ण पुद्गल परवानारे, तूं ज्ञायक सब ज्ञेय

द्रव्य को भेद न पानारे ॥ १ ॥ तन धन परियण राज संपदा मांहि भुलानारे, मात तात सुतनार सदन मैं ममत धरानारे ॥ २ ॥ मैं कालो मैं गोरा लंवो रुप सराना रे, मैं पंडित मैं सूर सुभट जी तूं रणथानारे ॥ ३ ॥ क्रोध मान माया छल वल कर लोभ लगानारे पंच ईन्द्रिय के विषय वाग मैं मग्न रहानारे ॥ ४ ॥ या विधि काल अनंत गयो जग जन्म धारनारे, मर मर फिर २ जन्म धारके हुयो हरानारे ॥ ५ ॥ अव चेतै तो दाव भलो है जिनशर्ण गहानारे, शुद्ध चिदानंद ध्यान करो पावो शिवथानारे ॥ ६ ॥ ज्ञान अनंत दर्श सुख वीरज गुण प्रगटानारे, जोंहरी निज पर भेद करो लख चेतन वानारे ॥ ७ ॥

२७

सोच विचार करे मन मूरख तेरो विचार धन्यो ही रहेगो ॥ टेक ॥

जा तन की तूं रक्षा चाहै ताही कूं यम छिन मैं हरेगो ॥१॥ मात तात सुत वांधव वनिता तूं इन मैं ममता धर रमता, कोई न तेरे संग रहेगो संग मिल्यो सो ही विछड़ैगो ॥ २ ॥ राज संपदा भोग भोगवे मान शिखर चढ़ नीचों जोवै पाप उदय छिन नांही रहेगो, तूं एकाकी नर्क सहेगो ॥ ३ ॥ जोंहरी सोच विचार तजो अव शुद्ध चिदानंद मांहि रमैगो, देखि ज्ञानि ज्ञान अनंत मैं सोही है छिन मांहि टरैगो ॥ ४ ॥

(२८

चेतै छै तो आछी वेल्यां चेतरे ज्ञानिजिया मोह अन्धेरी शिवपुर आंतरो ॥ टेक ॥

यादेही को झूंठो अभिमानरे ज्ञानि जिया विनश होवै रे ढेरी राखकी । १ । अरे जिया तुम तो जानी मेरा परिवाररे लेर न आयो नहि जावसी । २ । लक्ष्मी तो दिन चार रे काज सुधारो निज आपनों । ३ । पूरव पुन्य प्रभावरे उत्तम श्रावक कुल लयो । ४ । पाये २ श्री जिनराजरे जोंहरी चित चरणन धरो । ५ ।

राग गोपीचंद बिकानेरी २९

यां झूंठी माया तन धन जोबन कामनी ॥ टेक ॥

धन जोबन तन कामनी सजी छिन छिन चित्त चुरावै, ममता फांसी डार जीव के भव मांही भरमावैजी ॥ १ ॥ इन्द्र धनुष विजली जल वुद वुद वत या जगरीति जुमानूं, देखत विनश जात हैं अंजुजि जल ठहरानुंजी ॥ २ ॥ ज्ञानी जन इन मैं न रचेजी मूरख लख हर्षावै या ठिगनी के वश पड़े ते जगमांही दुखपावै ॥ ३ ॥ जो ठिगनी को ठिग लई सजी सो गुरु परम कहावै, तिनके चरण कमल की रज कूं जोंहरी शीश चढावै ॥ ४ ॥

राग गोपीचंद ३०

या जग मांही स्हैली विन गैली वातां होरही ॥ टेक ॥

देव धर्म कूं छांडि अभागी कुगुरुन सेवा जावे पुवा पूडी राख रावडी सीली वासी खावै । १ । मूलगुणन कूं जानत नांही सात विसन कूं ध्यावे, पर की निंदा मुख से भाखै आप वड़ाई गावै ।२। पर जीवन की दया नांहि चित झूंठ बोल हर्पावै, पर धन पर त्रिय कूं चूरै श्वान विल्ली पर जावै । ३ । श्रावक कुल कूंपाय अयांना चित विचार नहि लावै, खाद्य अखाद्य रैन दिन मांही पशुवन ज्यों चर जावै । ४ । हलवाई के वरतन भांड़े पोण छत्तीस मंगावे, तामध्य सोध तनी जोमिठाई पहली रात वनावै । ५ । उत्तम कुल की उपजी वनिता गहनों मांग मंगावै, दीन वचन को सोचन आने ताहि आवरु गावै । ६ । पैर आभूषण परके मांगे जात न्यात मैं जावै, रस्ते रोडी वैठ अयाना माल गटा गट खावै । ७ । च्यार जनी मिल गाली गांवैं भंडवचन उचरावै, पर पुरपन को मोहित डोलै शील कहांतै पावैं । ८ । जिन मंदिर को द्रव्य लेय कर व्याज वणिज उपजावै, ताको अंश रखो घर भीतर निर्म्मायल कूं खावै ।९। मुये ढोर की चर्वी लेकर कुप्य भांड वनवावै, घृत जल तेल ताहि को लेकर चोका मैं धसजावै । १० । ढोरन की भृष्टा भेली कर ताकूं थाप सुखावै, न्हाय धोय के करै रसोई ग्लानि कहां नशिजावै

।११। हाट हवेली गहना कपड़ा वेचर जात जिमावै, नाती गोती दुखिया देखत करुणा भाव न लावे ।१२। लोकाचार जाय मरघट मैं ठंडाई घुटवावै, छाण पीयकर दम्म लगावै जर्दा बीड़ीखावै ।१३। गोठ करन को आगन गांही जिगरा जाय जलावे, हरित काय की दया न आवे मूंछा हात लगावै ।१४। जिन प्रभावना होय तहां वहुलोग लुगाई जावे, पाठ बीनती वात न जाणे राग रंग रस गावै ।१५। व्याह विनायक मंगलके हित भींत कुदेव थपावै जिन मंदिर कूं बैठ पालकी वेस्या नाचती जावै ।१६। सज्जन जन कूं न्योत जिमावे फेर विदा चित ल्यावे, चोपड़ जियको उदर चीर कर टींको लाल कडावै ।१७। वर वूढा को वेटी व्याहे पहली दाम गिणावे, परण मरे व्यभिचार जु सेवै हा हा कर विललावै ।१८। वर मूवा वैठक करवावै फिरन लुगायां आवे, तीज तिंवार मिठाई लावे छाने सी गटकावै ।१९। विधवा होय सिंगार वनावै सव गहणा पहरावे पक्की मलमल चीरा औढ क्यों नहि काम सतावै ।२०। प्रथम व्याह मैं रात जगावे भृष्ट गीत वहु गावै, आस पास के पुरुष सुनै सो सव कामी होजावै ।२१। फेरों के दिन सव तिरिया मिल टूटयो सांग वनावे, एक जणी को वींद वणावे परणी को परणावै ।२२। सुत सुसरा के तोरण मारण

टूट्यो सांगी जावै, छोटी मोटी नारयां मिलकर अष्टम अष्टा गावै । २३ । तोरण से फिर पीछी आवे छत ऊपर चढजावै, काम विकार पुकार कहे वहु हाथनि छाज वजावै । २४ । त्रिया धर्म के पंच दिवस मैं इक थल स्थिर जिन गावे, तीजे दिन ही न्हाय धोय पग मैंदी हात लगावै । २५ । हात रचावे शीश गुंथावे न्यात जीमणे जावै, सब सखियन मिल गीत जो गावे ग्लानि चित्त नहि लावैं । २६ । एक दोय मिल टका उगावे वागन जीमण जावै, नर नारी मारग मैं घिल मिल रंग गावतै आवै । २७ । तिरिया के जब पल्लो लागे अथवा पग पड जावै, झिल मिल दीया टांमण टूमण झाड़ू जाय झड़ावै । २८ । विस्फोटक को रोग होय जब माता पूजन जावै, एक लुगाई के सिर सिगडी और शीतला गावै ॥ २९ ॥ तन धन सुत तिय पति रक्षा हित हिंसा जतन करावे, काली गोरी देवी ध्याडी भैरुं यक्ष मनावै ॥३० ॥ बालक के सिर चोटी राखे बोलारी बोलावै कुगुरादिक को सेवत डोलै खाज्यापीर मनावै ॥ ३१ ॥ मुर्दा के दो अगल वगल छातीपर पिंड धरावै विचले वांसे तर्पण करके शिर पर चोट लगावै ॥ ३२ छाणा देकर पानी देवैं फिर भाटा खुडकावै, तीया के दिन फूल मंगावे कच्चा न्योति जिमावै ॥ ३३ ॥ मांसरु मंदिरा खावत जिनको दूधरु धृत मंगवावै ताको सोध गिने शठ जन ज्ये बुद्धि कहां तैंपावै॥३५॥

परके ओगुण सुन तृणका सम मूसल ढोल बजावै, आपजो दोप करे मेरु सम ताको लेत छिपावै ॥३५॥ इत्यादिक वहु निंद क्रिया करि मनमैं हर्प उपावै, काल दोप यह जान जौंहरी आप आप समझावै ॥ ३६ ॥
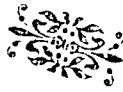
* श्री नवलदासजी रचित *

राग स्याम कल्याण १

आज कोई अद्भुत रचना रची ॥ टेक ॥

जुगल इन्द्र दोऊ चँवर ढुरावत निरत करत है सची ॥ १ ॥ समव सरण महिमा देखन की होडा होड मची, स्वर्ग विमान तुल्य छवि जाके देखत मन न खची ॥ २ ॥ जिन गुण सारथ सव इन मैं ये जिन जात खची नवल कहै उर आवत ऐसे हर्प धार के नची ॥ ३ ॥

राग कव्वाली २

वड़ी धन आजकी ऐही सरे सव काज मोमनका गये अघ दूर सव भज कैं लखा सुख आज जिनवर का ॥ टेक ॥

विपत नासी सकल मेरी भरे भंडार संपति का सुघाके मेग हू वर्षे लखा मुख आज जिनवरका ॥१ ॥ भाई परतीत है मेरे सही हो देव देवन का करी मिथ्यात की डोरी लखा मुख आज जिन वरका ॥ २ ॥ विरद ऐसो सुनो मैं तो अजत के पार करने का नवल आनंद हूं पाया लखा मुख आज जिनवरका ॥ ३ ॥

सोरठ धनाश्री ३

वांकडी करम गत जायना कही हो मह्रा ॥ टेक ॥

चिंतत और बनत कछु और ही होण हार सो होय सही ॥ १ ॥ सीता सती बडी पतिव्रता जानत सकल मही झूठो दोष दियो रघुपति नैं पावक कुंड में डार दई ॥ २ ॥ सकल साज सजिये व्याहन को राजल की चित चावठई, सुनी नेम गिरनार सिधारे बिलख वदन मुरझाय रही ॥ ३ ॥ ज्ञायक सम्यक दृष्टी श्रेणिक कोणिक निज सुत बंधदई, सुध बुध विसरगई नर पति की आपन ही अपघात लई ॥४॥ छिन में रंक छिनक में राजा अकथ कथा मोतैं जायना कही, उलट पलट बाजी नट की सी नवल जगत में व्याप रही ॥ ५ ॥

सोरठ ४

नैंना मोरे दर्शन कूं उमगे ॥ टेक ॥

परम शांति रस भीनी मूरत हिय मैं हर्ष जगे ॥ १ ॥ नैनन करत ही अति सुख उपजै सब दुख जात भगे ॥२॥ नवल पुन्य तैं जोग मिल्यो है चरणंन आन लगे ॥ ३ ॥

सारंग होरी ५

चित लाग्यो म्हारो जैन फकीरी में ॥ टेक ॥

ज्यो सुख है जिनराज भजन मैं सो सुख नांही अमीरी मैं ॥१॥ भली बुरी सबकी सुनलीजे, कर गुजरान गरीबी मैं ॥ २ ॥ नवल तनी अरदास यही है मत रहना मगरुरी मैं ॥ ३ ॥

धनाश्री व विहाग ६

सखी मोहे प्यारो लागे जिनंद ॥ टेक ॥

सब गुण लायक वंछित दायक, सांचा सुर तरु कंद ॥१॥ माता सेवादे राणी जाया समद विजय कुल चंद जाके तन छवि कहां तक वरणूं ऐसा नांही जिनंद ॥ २ ॥ जाके चरण कमल की

सेवा चाहे इन्द्र नरेन्द्र, नेम नवल प्रभु बालचंद सम राजल हिरदै समंद ॥ ३ ॥

मांड ७

म्हारा तो नैना में रही छाय जिनद थांकी मूरत ॥ टेक ॥

जो सुख मोउर मांही भयो है सो सुख कह्यों है न जाय।१।उपमा रहित विराजत हो तुम मोपे वरणी न जाय, ऐसी सुन्दर छवि जाके ढिग कोड़ मदन छिप जाय । २। तन मन धन निछरावल कर के भक्ति करुं मन लाय यह विनती सुन लेउ नवल की जामन मरण मिटाय । ३ ।

सोरठ देस ८

सांवरियाजी होराज म्हाने दर्श दिखावो ॥ टेक ॥

मोमनकी सब वांछा पूरो नेहकी रीति जतावो । १ । ये अंखियां दर्शन की प्यांसी सीच सुधामृत पावो, नवल नेह लाग्यो नहि छूटै अब मत विलंब लगावो । २ ।

काफी ९

अटके नैना जिन चरना राज म्हारी याही सुफल घड़ी मैं ॥ टेक ॥

अनुराग लगे मानुं ऐसे लोभलगे सिमटटके ॥ १ ॥ भागो भरम लगै मानु ऐसे भरत सुधा रस नटके ॥ २ ॥ नवल नेह लाग्यो नहि छूटै जिन चरण चित अटके ॥ ३ ॥

मांढ १०

प्यारा म्हानै लागोछोजी नेम कंवार ॥ टेक ॥

सूरत थांकी सोहनीजी देखत नैन संवार, और बड़ाई थांकी कांई करुं जी पुन्य बढ़ै अवजाय ॥ १ ॥ भोग रोग सब जान कै दिये सर्व छिटकाय, बालपनै दिक्षा धरी सब जग अथिर लखाय ॥ २ ॥ निज आतम रस पीयकै भये त्रिभुवन केराय, तुम पर पंकज को सदा नवल नमैं शिर नाय ॥ ३ ॥

सोरठ ११

बिना भाव किरिया सब बायदे गई ॥ टेक ॥

जैन पुराणन मैं सुन अतिही जो जल मांही मीन रही जो न्हायां सूं होय शुद्धता मच्छादिक जल मांयही रही ॥१॥ मूंड मूंडाया काज सरे तो, भेड़ मुंडत २ केई बारभई, भस्म लगाया सिद्ध होय तो खर अंग कितनी छाय रही ॥ २ ॥ नगन रहे सैं कोन नफा है पशु वस्त्रादिक नांहि कही, मोन गहे सैं काज सरे

तो परम हंस कोनांही कही ॥ ३ ॥ अग्नि तपे सै कोन नफा है सारी देह पतंग दही, नवल वीच वसना है जग मैं जिन ऐसीविध जान लई ॥ ४ ॥

राग काफी ठूमरी १२

परावे जिन ननूंदा येही सुभाव ॥ टेक ॥

जिन दर्शन विन छिन नहि रहदा, येही अडीव अडाव अडावे इस ननूंदा ॥ १ ॥ होत खुसी लख रुप अनूपम भक्त जंजीर जडाव जडा नवल कहै अवमई है पवित्तर पातिग सकल झडाव झडावे इस ननूंदा ॥ २ ॥

काफी ठुमरी १३

नित मूरत तैंडी आन त्रिलोकूं भाईयां मानुवे ॥ टेक ॥

तैंडे देखण दीघणी अभिलाखा, जूं चहदा हमारा मना नांहि भूला रैन दिन तनूं ॥ १ ॥ जिया जिन विन अति अकुला नहि रहदा इक घडी उचना, तुम देख्यां मिटत अचनूं ॥ २ ॥ सुन लीजिये अर्ज करां छां, यह अचल वासशिव ही भला यह नवल कहै मुझ देनूं ॥ ३ ॥

१४

जैन धर्म पायो दोईलो सेवो मन लाय ॥ टेक ॥

भैरवी २

नर भव पाकर धर्म न कीना सोसब निफल गमायारे ।।टेक।।

ज्यो सर कमल विना नदि जल विन जीव विनां ज्यां कायारे। गुण विन पुत्र लूण विन भोजन कष्ट विनां ज्यां गायारे ॥१॥ धन विन भोग जोग विन जोगी कर विन ज्यों असि पायारे, दृग विन वदन सत्य विन वार्ता घृत विन अन्न ज्यों खायारे ॥ २ ॥ दंत विना गज अक्षर विन श्रुति मेंह विन ज्यों घन छायारे गुरु विन ज्ञान सभा विन पंडित दया विन वृत न सुहायारे ॥ ३ ॥ यह जान जिन धर्म करो नित सफल करो निज कायारे। अमोल सुत हीराचंद कहत है पुण्य उदय अब आयारे ॥ ४ ॥

भैरवी ३

समझ देख जिया इस जग मांही कोई न साथी आवेरे ।।टेक।।

सदन जहां का तहां रहेगा धन घर में रह जावेरे । त्रिया रहेगी घर द्वारन में पशु गोष्टा में रहावैरे ॥ १ ॥ भ्रात तात सज्जन जन मिल कर अग्नि स्मशान लगावैरे। देह रहेगा तब ही चिता में जीव अकेला जावेरे ॥ २ ॥ आय अकेलो जाय अकेलो आप अ-केलो कुमावेरे। नर्क गति में जाय अकेलो दुख अकेलो पावैरे ॥३॥ पुण्य

ध्या कर जात अकेलो स्वर्गन के सुख पावैरे । नाश कर्म को करे अकेलो मुक्ति अकेलो जावैरे ॥ ४ ॥ तातैं अधर्म त्याज्य धर्म कर हीरालाल यह गावैरे । पर लोकन में जीव के साथी पाप पुण्य दोय जावैरे ॥ ५ ॥

आसावरी जंगला ४

कबें निर्ग्रन्थ स्वरूप धरुंगा तप करके मुक्ति को वरुंगा ॥टेक॥

कब गृह बास आश सब छांड़ू कब वन में बिचरुंगा । बाह्य अभ्यन्तर त्याग परिग्रह उभय लोक सुधरुंगा ॥ १ ॥ होय एकाकी परम उदासी पंचाचार चरुंगा । कब स्थिर योग करुं पदमासन इन्द्रिय दमन करुंगा ॥ २ ॥ आतम ध्यान सजि दिल अपनो मोह अरीसे लडूंगा । त्याग उपाधि समाधि लगा कर परिषह सहन करुंगा ॥ ३ ॥ कब गुण स्थान श्रेणिपर चढ के कर्म कलंक हरुंगा । आनंद कंद चिदा नंद साहिब चिन सुमरे सुमरुंगा ॥ ४ । ऐसी लब्धी जब पाऊ तब मैं आपे आप तिरुंगा अमोलक सुत हीराचन्द कहत है वहुरि ना जगमैं पडूंगा ५

भववन धीरज के विषै भरम्यो चिर काल, कोई यक पुन्य संयोग सूं उपज्यो नर आय । १ । और सकल सब संपदा पाई बहुवार, जिन गुण संपति पायवो दुर्लभ संसार । २ । सब जग स्वार्थ का सगा तेरा नहि कोय, तेरा संघार्ता धर्म है निश्चै करजोय । ३ । करणी होय सो करचलो, औसर बीत्यो जाय फिरयो दाव मिलै नहीं पाछैं पछताय । ४ । जिन वाणी सुनिये सदा रुचि सों देकान, नवल लाभ हु लीजिये भजिये भगवान । ५ ।

गजल रेखता १५

मुझे है चाव दर्शन का निहारोगे तो क्या होगा ॥ टेक ॥

सुनों श्री नाभि के नंदन परम सुख देन जगवंदन मेरी विनती अपवान की विचारोगे तो क्या होगा ॥ १ ॥ फंसा हूं कर्म के फंदे मुझे तुम विन छुडावे कोन, तुमही दातार हो जग के सुधारोगे तो क्या होगा ॥२॥ यह भव सागर यथा ही है झकोरे कर्म की निश दिन, मेरी है नांव अति जंजरी उभारोगे तो क्या होगा ॥ ३ ॥ अरज सुन लीजिये मेरी करों विनती प्रभुतेरी, नवल आनंद हू पायो छुडा दोगे तो क्या होगा ॥ ४ ॥

राग अठाणो १६

दगरही दगरही छाय जिन थांकी मूरत दगरही छाय ॥टेक॥

जो सुख मोउर मांहि भेयो है सो सुख कह्यो यन जाय ॥१॥ उपमां रहत विराजत हो तुम महिमा वरनी न जाय, ऐसी सुन्दर छवि जाके ढिग कोडि भानु छिप जाय ॥ २ ॥ तन मन धन नोछावर करिके भक्ति करुं गुन गाय, यह विनती सुन लेउ नवल की आवा गमन मिटाय ॥ ३ ॥

श्री हीराचन्दजी रचित

राग प्रभाती १

वंदो जिनराज सदा चरण कमल तेरे चहूंगतिके दुखहरो मेरे भव फेरे ॥ टेक ॥

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन केरे, सुमति पदम श्री सुपार्श्व
१ २ ३ ४ ५ ६ ७
चंद्र प्रभुसेरे ॥ १ ॥ पुष्पदंत शीतल श्रेयांस गुण घनेरे, वास पुज्य
८ ९ १० ११ १२
विमल अनंत धर्म जग उवेरे ॥ २ ॥ शांति कुन्थु अरह मल्लि मुनि
१३ १४ १५ १६ १६ १८ १९ २०
सुव्रतमेरे, नमि नेम पार्श्व वीरनाथ थिर भयेरे ॥ ३ ॥ और अनागत
२१ २२ २३ २४
अतीत श्रीजिन सकेरे, अमोलिक सुत हीराचंद चरणन के चेरे ॥ ४ ॥

भैरवी २

नर भव पाकर धर्म न कीना सो भव निष्फल गमायारे ॥टेक॥
ज्यो सर कमल विना नदि जल विन जीव विनां ज्यों कायारे।
गुण विन पुत्र लूण विन भोजन कण्ठ विनां ज्यों गायारे ॥१॥ धन
विन भोग जोग विन जोगी कर विन ज्यों असि पायारे, हग विन
वदन सत्य विन वार्ता घृत विन अन्न ज्यों खायारे ॥ २ ॥ दंत
विना गज अक्षर विन श्रुति मैंह विन ज्यों घन छायारे गुरु विन
ज्ञान सभा विन पंडित दया विन व्रत न सुहायारे ॥ ३ ॥ यह जान
जिन धर्म करो नित सफल करो निज कायारे। अमोल सुत हीराचंद्र
कहत है पुण्य उदय अब आयारे ॥ ४ ॥

भैरवी ३

समझ देख जिया इस जग मांही कोई न साथी आवेरे ॥टेक॥
सदन जहां का तहां रहेगा धन घर में रह जावेरे । त्रिया
रहैगी घर द्वारन में पशु गोष्ठा में रहावेरे ॥ १ ॥ भ्रात तात सज्जन
जन मिल कर अग्नि स्मशान लगावैरे । देह रहैगा तब ही चिता में
जीव अकेला जावैरे ॥ २ ॥ आय अकेलो जाय अकेलो आप अ-
केलो कुमावैरे। नर्क गति मैं जाय अकेलो दुख अकेलो पावैरे ॥३॥ पुण्य

ज्या कर जात अकेलो स्वर्गन के सुख पावैरे । नाश कर्म को करे अकेलो मुक्ति अकेलो जावैरे ॥ ४ ॥ तातैं अधर्म त्याज्य धर्म कर हीरालाल यह गावैरे । पर लोकन में जीव के साथी पाप पुण्य दोय जावैरे ॥ ५ ॥

आसावरी जंगला ४

कवें निर्ग्रन्थ स्वरूप धरुंगा तप करके मुक्ति को वरुंगा ॥टेक॥

कव गृह वास आश सव छांडू कव वन में विचरुंगा । वाह्य अभ्यन्तर त्याग परिग्रह उभय लोक सुधरुंगा ॥ १ ॥ होय एकाकी परम उदासी पंचाचार चरुंगा । कव स्थिर योग करुं पदमासन इन्द्रिय दमन करुंगा ॥ २ ॥ आतम ध्यान सजि दिल अपनो मोह अरीसे लडूंगा । त्याग उपाधि समाधि लगा कर परिषह सहन करुंगा ॥ ३ ॥ कव गुण स्थान श्रेणिपर चढ के कर्म कलंक हरुंगा । आनंद कंद चिदा नंद साहिब विन सुमरे सुमरुंगा ॥ ४ । ऐसी लब्धी जव पाऊ तव मैं आप आप तिरुंगा अमोलक सुत हीराचन्द कहत है वहुरि ना जगमें पडूंगा ५

कालिंगडा ५

क्यों वर मांही भूल्यांरे अभागी ॥ टेक ॥

धरम सुध्यान करन कूं मूयो पाप करन कूं फूल्यो अभागी॥१॥
काल अनंत इन करणी सों नर्क निगोद रुल्यो अभागी ॥ २ ॥ मोह मदिरां पान करके कर्म हिंडोले झूल्यो अभागी ॥ ३ ॥ कहत हीराचन्द नर भव पायो अब तुझ भाग खुल्यो अभागी ॥ ४ ॥

कालिंगडा ६

सुखया न दीसे कोई या जग मांही ॥ टेक ।

केई कामनि कारण झूरत केई के सुतनाही । जिस ही के नित कलह कुरूपी सुन्दर तो हठ ग्राही ॥ १ ॥ केई कुग्राम म्लेछ थल उपजे सुकृत हीन पड़तांही । केई निर्धन रोग पीडित तन तातैं दुख अधिकाई ॥ २ ॥ केई पुत्र कलित्र वियोगी सोचत है दिललाई कहत हीराचन्द सुखी संतोषी अवर दुखी सब आई।३।

रेखता ७

गिरनार गया आज मेरा नेम दे दगा खाविंद विना क्या करूं दिल श्याम से लगा ॥ टेक ॥

वलभद्र कृष्ण जादवा सब साथ ले सगा । व्यांहन कूं सज के आये जिनके लार सुर खगा ॥ १ ॥ पशुवन की सुन पुकार ज्ञान दिल में है जगा । चले छोड पशु वंध संयम ध्यान में पगा ॥ २ ॥ अमोलक सुत कहत हीरालाल दिल लगा । तब राजमती ने ही घर बार को तजा ॥

रेखता ८

तकसीर बिना छोड़ चले हम को क्यों पिया । अब क्या करू कित जाऊं निकसत जात है जिया ॥ टेक ॥

करुणा निधान स्वामी पशु खुलास करा दिया । मेरी भी दया क्यों ना की कठिन क्यों भया हिया ॥ १ ॥ तुम तो हो मेरे नाथ आठ भव की मैं त्रिया ॥ सो ही नेह आज हम से छांडि क्यों दिया ॥ २ ॥ कहे नेम यह संसार सब असर रहे त्रिया । रासा सुन के राजुल भूषण डार सब दिया ॥ ३ ॥ अमोलक सुत कहत हीरालाल सुन जिया । नेमनाथ साथ जाके संयम सार तपलिया ॥ ४ ॥

सोरठ मल्हार ९

जिया कांई सोवोरे दिन रातड़ियां ॥ टेक॥

यह वाहे मुवा इम तूर बजत ये क्यों ना डरत निज धात-

डियां ॥ १ ॥ घड़ी २ घडियाल बजत तिथी जम आ दंगी लातड़ियां ॥ २ ॥ जप तप संयम दान पूजा व्रत और करो जिन जातरियां ॥ ३ ॥ जो निज हित कछु चाहे हीराचन्द तो सुन सद्गुरु वातड़ियां ॥ ४ ॥

भजन नरवा १०

तू तो यह नरभव निकल गुमायो फुलवन में मालती ने जोजै ॥ टेक ॥

श्री जिन भक्तिपूजा नहीं कीनी जिन गुण मुख से न गायो । जैन सिद्धांत सुन्यो नहीं कबहू विधवन जपना करायो ॥ १ ॥ उत्तम पात्र कूं दान न दीनो भावना मन में न भायो । शीलरत्न नहीं पाल्यो यत्न कर परतिय मांहिलुभायो ॥ २ ॥ उत्तम तीर्थ साधु की सेवा धर्म में मन ना लगायो । तत्व अतत्व विचारन कीनो सम्यक् रत्न हरायो ॥ ३ ॥ परिग्रह आरम्भ बहु विध करके अहनिश पाप कुमायो अमोलक सुत हीराचन्द कहत है नर्क उपाय उपायो ॥ ४ ॥

आसावरी

कंचन काच बराबर जाके हम वैसे के चाकर हैं ॥ टेक ॥

शत्रु मित्र सुख दुख सिल सेज्यां जीवन मरण समाकर है ।

लाभ अलाभ वड़ाइ निंद्या महल मसाण थथा कर है ॥ १ ॥ यथा जात नग्न स्वरुप ही दोनू हात झुला कर हैं, निर्विकार बालक वत ठाडे नासा दृष्टि लगा कर है ॥ २ ॥ पिच्छी कमंडलु शास्त्र परिग्रह तिल तुस ओर न ल्याकर है। वाहिज मलीन दीख उर उज्वल विषय कषाय घटा कर है ॥ ३ ॥ पंच महावृत पंच सुमति के तीन गुप्ति रक्षा कर है। रत्नत्रय-दशविधि धर्मधर बारै भावन भाकर है ॥ ४ ॥ बाइस परीषह सहै निरन्तर, द्वादश विधि तपस्या कर है, सहश्र अष्टादश भेद शील पाल अंतरध्यान लगा कर है ॥ ५ ॥ ग्रीषम ऋतु रवि तपै सरस के दव सम अचल दहा का है, ताती स्वच्छ सिला पर जोगी पद जुग धर थिरता कर है ॥६॥ वर्षा काल भयानक रेणी मूसल धार वर्षा कर है। ऐसे पावस में तरु नीचे छिन छिन विन्दु सया करे है ॥७॥ शीत पडे जल जमै जहां बन तरु भस्म हुआ कर है, ताल नदी दरिया वनके तट काष्ट समान रया कर है ॥ ८ ॥ श्रावक घर ऊंच नीच न देखै जायउ ठंड रया कर है। दोष छियालिस टाल मुनीस्वर अमरा हार गया कर है ॥ ९ ॥ अठाईस मूल गुण अरु उत्तर गुण लख चौरासि निभाकर है, कहत 'हीराचंद' वै कव मिलसी पूरण मोमनसा कर है ॥ १० ॥

श्याम कल्याण १

आद जिनंदा जीरा गुन गास्यां ॥ टेक ॥

सहस अठोतर कलसा भरके न्हवन करास्याजी में न्हवन करास्यां ॥ १ ॥ अष्ट द्रव्य ले पूजा करके। शीश नवास्या जी म्हे शीश नवास्या ॥ २ ॥ अब सेवग हित कर गुन गावे। शिवपुर जास्यां जी म्हे निजपुर जास्यां ॥ ३ ॥

ईमन कल्याण २

परम गुरु परम दयाल परम पद देन हार समरथ जिनराय टेक

तारन तरन हरन पावन जग। परमानंद रो पराजित सब। जीवन ताप भूजाय ॥ १ ॥ परम जोति परमात्मा परम वैरागी परमोदारिक पाय। परम विभूत निहारो निश्चय। उदय परम पद पाय ॥ २ ॥

ईमन कल्याण ३

माधोरी जिन बान चालोरी सुनये ॥ टेक ॥

विपुलाचल पर बाजे बाजत। भनक पड़ी मेरे कान ॥ १ ॥ वर्द्धमान तीर्थंकर आये वंदों निज गुरु जान ताके देखत पैयत ऐरी मुकति महा सुख खांन ॥ २ ॥ सखियन संग चेलना रानी चली

भक्ति उर आन दर्शन कर कर भई प्रफुल्लित जग प्रभु से हित सान ॥ ३ ॥

स्याम कल्याण ४

दरश परवारी जाऊं नाभ जिनंदा ॥ टेक ॥

तुम पद पंकज निस दिन सेवूं । सुरनर वंध जिनंदा ॥ १॥ सव देवन मैं आप शिरोमण । ज्यूं तारा विच चंदा ॥ २ ॥ सुर-नर मुनि थांको ध्यान धरत है । काटो करम का फंदा ॥ ३ ॥ अव सेवग हितकर गुन गावे मैं चरणन का वंदा ॥ ४ ॥

राग झंझोटी ५

मूरत निरखी सांवरी नींद उछट गई सघरी मोह की ॥टेक॥

नेमीसुर के पद परसत ही । पायो मैं विसरामरी ॥ १ ॥ ध्यानारुढ निहार छवी को । छूटत भव दुख दामरी ॥ २ ॥ मुनि जन या को ध्यान धरत ही । पायो आतम रामरी ॥ ३ ॥

कल्याण ६

तुम से पुकार मेरी काटो करम की वेडी ॥ टेक ॥

ये चार वडे दुख दाई तन मन मैं आग लगाई ॥ १ ॥ ये

पांचों में जो अकेला कछु जोर चलेन मेरा ॥ २ ॥ 'द्यानत' मन सुमन विचारो । म्हारो कर्म काट अघ टारो ॥ ३ ॥

राग झंझोटी ७

जिनवरजी मोहे द्यो दरशनवा ॥ टेक ॥

विरद तिहारो मैं सुन आयो । अब मोमन तुम करो परसन वा ॥ १ ॥ मोह तिमर के दूर करन कूं नांहि दिवाकर तुम सम अनवा ॥ २ ॥ अव सेवग हितकर गुन गावे । उमग उमग परसे चरणन वा ॥ ३ ॥

राग काफी की होली ८

तुह कूं प्रभु लाज हमारी ॥ टेक ॥

कर्म शत्रु मोहें घेर रह्यो है दुख दे है अति भारी । नर्कादिक गति भ्रमन करावे मोह की भुरकी डारी वुद्धि विसराई सारी ॥ १ ॥ क्रोध मान माया मद रुपी कीने पाप कलारी । एक पलक छांडत नहि मोकों मानत नांही अनारी लूटत निज निधि ये सारी ॥ २ ॥ गुरु मुखतें ये वचन सुने मैं जिन दर्शन अवटारी । याही तें जिन चरण शरण की भक्ति हिये चित धारी आन सब सरधा छारी ॥ ३ ॥ करुणा सागर भवदधि त्यारण दुख हारण सुख कारी

इन तैं वेग छुडावो नाथ तुम वनवच शरण तिहारी देय शिव सुंदर नारी ॥ ४ ॥

केदारा ९

मघ वतलाना मानोंजी मोखि दावे सांहिया ॥ टेक ॥

तैंडे चरणों दातारी वे एक शरणा है मैंडे सैंयां और से नांही पुकारना वे साहियां ॥ १ ॥ भवदध भारी वे ते उतरावे मैंडे सईयां मोकूं भी पार उतारना वे सांहियां ॥२॥ बुधजन चेरा वे यों जाचत मैंडे संहियां हात पकर के उवारना ॥ ३ ॥

राग काफी १०

थांसूं म्हारी अर्जी राज यही थे तो तीन लोक का नाथ सही ॥ टेक ॥

यह अष्ट कर्म की दुष्ट चाल । मैं फस्यो मोह मिथ्यात जाल दृढ कर्म बंध चक चूर चूर काटन को और नहीं ॥ १ ॥ तुम वीत राग विज्ञान पूर भ्रम मोह तिमिर को हरन सूर संसार द्वार तैंतार तारन को ओर नहीं ॥ २ ॥

राग ख्याल ११

कर जोड कहे राजुल नारी मत जावो प्रभुजी गिरनारी ॥टेक॥

सज अगत जुनागढ आई, पशुवन करुणा चित धारी ॥१॥ प्रभुनेमनरको मैं दासी तिहारी, अब काहे विसरयारी ॥२॥ दुली चंद उग्र सेन सुना की धीज गई अनुवन सारी ॥ ३ ॥

राग मोलाकी चाल में १२

प्रभु आतम बोध करादो मुझे, सचे अमृत का पान करादो मुझे ॥ टेक ॥

निजको नहि पहिचानता मैं परको निज हूं जानता, गाफिल हुआहूं मोह में निज को नहीं पहचानता, प्रभु भेद विज्ञान करादो मुझे ॥१॥ विनरा जानं आत्माके भ्रमण करता ही रहा, कहुं कहां लो दुख प्रभुजी जाय नहि मुख से कहा, चारों गतियों के दुख से बचालो मुझे ॥ २ ॥ कोटि बातों का खुलासा है यही मेरे प्रभु, पंचमी गति दीजीये जिन फिरन कुछ जाचूं प्रभु, मोती कहता हैं और न चाह मुझे ॥ ३ ॥

दादरा १३

जिन चरणों में सरको झुकाय जायंगे. अष्ट द्रव्य से पूजा करके प्रभु के गुणानुवाद गाय जायंगे ॥ टेक ॥

मोहका सख्त ज़बरदस्त है चूंगिल कातिल, नहि रखता है यह जालिम किसी काबिल कातिल, यह आलमों कू बना देता है जाहिल कातिल, काम भये क्रोध लोभ साथ हैं कातिल, तुरंम भक्ति से इनको हटाये जांयगे ॥ १ ॥

मल्हार १४

यह अर्जी मोरे सैंया तुम तार लो गहि बैंया ॥टेक॥

इन कर्मन के वशहोके, मैं भटक्यों चहुंगति मैया, इनते उबार लैयां ॥ १ ॥ मैं तारण विरद सुन्यो छै मैयातें शरणे गहियां अबलों नांहि जाना सैयां ॥ २ ॥ हितकर के दास निहोरु कर जोरुं परुं मैं पैयां शिव देहु क्योंना सैयां ॥ ३ ॥

राग मांड १५

मोरी लागी लगन नेम प्यारे सै ॥ टेक ॥

सुनरी सखी इक अर्ज हमारी, कहियो कंथ हमारे से ॥ १ ॥ जोगन होय तेरे संग चलूंगी प्रीति तजूंगी जग सारे सै ॥ २ ॥ नाम सुने तै आनंद हूं उपजै कीरति हो उरधारे सै ॥ ३ ॥

भैरवी १६

करुं कहा जगमें सुख नांही तुमस्तुति करने में आया ॥टेक॥

सुख के कारण किये पाप बहु फल चहुंगति न चखाया, मुनी अब प्रभु तुम तारक हो इम लख उर हर्षाया । १ । भूल हमारी कहैं कहां लो हीन देव गुण गाया, तारण देव सुने जब तुम कूं उन सब कूं छिटकाया । २ । हम सुन लोभी तुभ सुख दायक ये शुभ मेल मिलाया, जन्म सफल तूं काले अबनो महावीर ननि पाया ।३।

झंझोटी १७

गिरवा पठाय दीजोजी सहेलियो नेम पै मोये ॥ टेक ॥

और काम कछु ना कर सजनी यह सुन लीज्योजी । १ । बिन कारण उनजोग धरयो है चिरंजीव रहीजोजी । २ । मैं उनके संग राम लखूंगी मोहनी कीजोजी । ३ ।

ठूमरी धनाश्री १८

प्यारी लागै छै म्हाने थांकी बतियां सैंया ॥ टेक ॥

दूर होत मिथ्यात अंधेरो निज परिणति की बढत लतियां सैंया । १ । सम्यग्ज्ञान जग्यो उर अंतर, विषयन संग छुटत लतियां सैंया । २ । राम कहै तुम बदन विलोकत जोवत शिव सुंदर बतिया सैंया ॥ ३ ॥
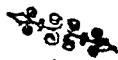
-:o:-

राग झंझोटी १९

मैंडी सुध लीज्योजी हो जिन प्याराजी ॥ टेंक ॥

मैंहूं दीन दीन वंदौ तुम, अपनौ विड़द समीज्योजी । १ । काम क्रोध अरु मोह लिपट रह्यो, सुख समता रस दीज्योजी । २ । चैन विजय की याही वीनती, निजर महर की कीज्योजी । ३ ।

झंझोटी २०

सेवग कूं जान के मोहे दर्शन दीजोजी ॥ टेक ॥

कुमति छांडि सुमता मोये हि दीज्यो, यो जस लीज्योजी।१। योसंसार असार जलधतैं, पार करीज्योजी ॥ २ ॥ लालचंद की अर्ज यही है, शिव मग दीज्योजी ॥ ३ ॥

झंझोटी २१

कहां लूं कहूं सैया वतियां अमण की ॥ टेक ॥

नर्क दुख देख मोरी छतियां फटत है तिर्यञ्च गति जैसे नदियां श्रावण की । १ । मानुष गति में इष्ट अनिष्ट हैं, कष्ट बहुत सैया नाही कहन की । २ । स्वर्गन मैं पर संपदा देखी झाल उठत

जैसे अग्नि पतंगसी । ३ । चारुं गति के दुख सहे अनादि के ज्ञान मांहि प्रभु जानो सबनकी ।४। अब मोहे कूं तारोगे हितकर नांवलगी प्रभु तिहारे चरन की । ५ ।

झंझोटी २२

दृगन सुख पायो जिनवर देख ॥ टेक ॥

आकुलता मिट सुख भयो मेरजी, अंग अंग हुलसायो कुमत भंज जिया सुमत प्रवेश ॥ १ ॥ अब हम जानि मेंड कर्म नशायेजी सुगुरु वचन मन भाये शिव मग लेलीया हित उपदेश ॥ १ ॥

राग गोपीचंद का २३

छवि नयन पियारीजी देखत मन मोहै मूरत आपकी ॥ टेक ॥

श्याम वरनऔर सुन्दर मूरत सिंहासन के मांहि म्हारा प्रभुजी सिंहासन के मांहि, सिंहासन के मांहि क मूरत सोहनी निरत करत है शची सभा मन सोहनी ॥ १ ॥ ठाडो इन्दर नृत्य करत है देख रहे नर नार म्हारा प्रभुजी देख रहे नर नार, देख रहे नर नार के मनमैं चाह है गुगरु ताल मृदंग अरु बीन वजाय हैं ॥ २ ॥ ठाडो सेवक अर्ज करतहै सुनो गरीबनवाज म्हारा प्रभुजी सुनो गरीबनवाज

सुनो गरीबनवाज के थ्यावस दीजिये आन पड्यों हूं दुख दूर कर दीजिये ॥ ३ ॥

राग खमांच २४

मेरी सूरत प्रभु तुमसे लागी महर करोगे मो माऊंजी ॥टेक॥

आन देव मैं भूलर सेये अबना उनके संगजाऊंजी ॥ १ ॥ पांय परुं मैं करुं वीनती उर बिच आंनद अति पाऊंजी, पदमासन लख प्रीति वढाउं हात जोर कर शिर नाऊंजी ॥ २ ॥ अष्ट द्रव्यले पूजा रचाऊं ये अवसर में नित चाहूंजी, दास कहै प्रभु तुमको पूजू शिव रमणी को वरचाहूंजी ॥ ३ ॥

कहरवा २५

कहा सोवैं महारानी लला गोदी लेलेरी ॥ टेक ॥

नींद सफल भई मोरा देवी माई भरवालेरी गोद लल्ला । १ । आये इन्द्र धरणेन्द्र नरेन्द्र सब मच रहाहै हल्ला । २ । हम हू न्हवन कियो गिर ऊपर क्या है तेरी सल्ला । ३ । दग सुख दास आशभई पूरण होगया उजल्ला । ४ ।

झंझोटी २६

थेई २ याद म्हाने आवो दरद मैं ॥ टेक ॥

सुख संपति का सब कोई सीरी भीड पड्यां भग जावे दरद मैं

। १ । थेही म्हारे वैध थेही धनंजय थांहीने नाड़ी दिखाऊं दरद में । २ । भाई बन्धु और कुटब कवीला इनसंग मन ललचावे दरद में । ३ । प्रेम दिवाना अलि मस्ताना थांही का गुण नित गावां दरद मैं । ४ ।

राग होली जंगला २७

साहिब आप जिनंद कहावो मोहे अपने ही रंग में रंग द्यो ॥ टेक ॥

रंग मिथ्यात लग्यो अनादि को । सो अब इनकू त्रण द्यो॥१॥ रतनत्रय निधी तुमपैं देखी । सो अब मुजकूं सज द्यो ॥ २ ॥ तुम से साहिब और न जग में आप समाना करद्यो ॥ ३ ॥

राग भैर २८

भज करुणा सागर प्रभु चंद ॥ टेक ॥

चंद पुरी में जन्म लियो है सब जन कूं आनंद कंद ॥ १ ॥ ज्यां सुमरयां पंचम गति पावे बिन जिन भगत जनम गंध ॥ २ ॥ छांडि परिग्रह दिक्षा धारी काटे तुरत मोहफंद ॥ ३ ॥ इन्द्रादिक जाको नित सेवत श्रीराम ताको वंद ॥ ४ ॥

काफी २९
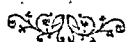
आज दर्शन की लगन मोये भईजी । जिनवर की ओ ओर जाके सुनत वचन सुख कारी छक छक ॥ टेक ॥

एक तो भयो री मेरे लाभ ज्ञान को । प्रगट भयो गुण निज झक झक ॥ १ ॥ मोह सेन्या सब पाछी फिरन लागी विषयों डरन हारी थक थक ॥ २ ॥ आयोरी अंत भ्रमण को आज मेरे प्रगट मैं लख लख ॥ ३ ॥ जब ही जन्मो कृतारथ मेरो आतम राम लखूं तक तक ॥ ४ ॥

भैरवी ३०

नदियां में नैया डूबी जाय तुम सुन हो प्रभूजी हो ॥ टेक ॥

गहरी नदियां नांव जर्जरी खेवटिया नहि थाय । कोन भांति से पार लगेगी मझधारे घुमराह ॥ १ ॥ इस नदियां के विकट किनारे बल्ली बांस न खाय । लख चोरासी मगर फिरत है उन से लेहू बचाय ॥ २ ॥ तुम समान खेवटिया कोई दूजा नांहि लखाय चिंतामणि तबही सुख पावे प्रभु तुम होउ सहांय ॥ ३ ॥

गुजराती मांड ३१

मोपै करुणा करो भगवानरे। मत जावो गिरनारी अकेली
छांडि के मोरा प्राण रे॥ टेक॥

नव भव संग मैं राख के मत जावो तुम छोड। दशवें भव न विसारिये अर्ज करुं कर जोड॥ १॥ पशुवन की करुणां करी मेरी सुध दी विसार तुम तोरण से रथ फेरिया मैं बैठ रही जिय हार॥ २॥ 'राजुल' की अर्जी यही सुनिये प्राणाधार। संग मुझे ले चालिये सेवग ओर निहार॥ ३॥

जंगला ३२

नैना लाग रहे मोरे जिन चरनन की ओर॥ टेक॥

निरखत मूरत तेरी नैना। जैसे चंद्र चकोर॥ १॥ जैसे चात्रक च्हात मेघ कूं घन गरजत जिम ओर॥ २॥ ज्ञान कहै धन माल हमारा वंदै दोउ कर जोर॥ ३॥

षटरस वरवा ३३

पांय परु प्रणाम करुं निशि वासर ध्यान धरुं प्रभु तेरा॥टेक॥

आन देव सेये बहुतेरे। इन तै काज सरे नहि मेरा॥ १॥

दीन दयाल जान तुम भेटे दुष्ट कर्म को करोजी नवेरा ॥ २ ॥
कारज कारी साहिब मिलिया मोहे राखो चरनन का चेरा ॥ ३ ॥

कालंगडा ३४

मोतियन के थाल भरके मैं करुं नछरावल तुम पैंजी ॥ टेक॥

जब जिनवर का दर्शन पाया । नैना आनन्द बरसै ॥ १ ॥
सम्यक दृष्टी श्रावक मिलिया । सम्यक चारित धर के धन्य घडी मोये साधु मिलन की हिवडै आनंद बरसै ॥ २ ॥

कानडा ३५

मोरे दृगन वा मैं तोरी छबि छाई वे आई अति थिर ताई प्रभुताई दरसाई, आई, अधिक समाई सुखदाई मनभाई वे ॥ टेक ॥

सूझपड़ी, अनेकांत डगरियां, सगरियां, सरल तरताई दृढ़ताई भई अपर विमल सुध पाई विसराई वे ॥ १ ॥ दूर गई दिस भूल भुलैयां, फुलैयां, कुमतियां, विमल, सुध पाई । ये धन प्रेम कपूर की अंखियां, हरखियां, परम लह लाई, हुलसाई करुं, कितनी बडाई वर धाई जिन राई वे ॥ २ ॥

मांड मारवाड ३६

मन लीनो हमारोजी म्हारा जादूपत सरदार हटीलो छल कीनो रंग भीनो ॥ टेक ॥

समद्र विजैजी का लाडला, सेवा देवी रा नंद । श्याम वरण सुहावना, मुख पूनम को चंद्र ॥ १ ॥ तोरण पर जब आईया ले जादव संग लार । पशुवन की सुण वीनती, जाय चढे गिरनार ॥२॥ तोड्या कांकण डोरडा तोड्या नव सर हार । सहसावन में जाय सांवरा, लीनो संजम धार ॥ ३ ॥ मुझे छांडि प्रभु मुक्ति सिधारे, आवा गमन निवार । चंद्र कपूरा वीनवै चरण शरण आधार ॥ ४ ॥

राग ख्याल ३७

आज यहां जिन दर्शन मेला है । नगर द्वारका जन्म लियो है सुरपति आय उछाव कियो है समद विजय सेवा देवी का नंदन तीनूं ज्ञान भरेला है । टेक ॥

ऐरावत हस्ती आया है लखि भोजन एक सवाया है । इन्द्राणी महल पठाया है । जिनराज कूं गोद जगाया है । समद विजय सेवा देवी के घर जय २ कार हुआ । सब देव अपसरा हर्ष भई जहां तांडव नृत्य करेला है ॥ १ ॥ ले मेरू शिखर

पहुंचाया है। सिंहासन पर पधराया है । क्षीरोदधि देव पठाया है। जल हाथूं हाथ मंगाया है। सौ धर्म अरु ईशान इन्द्र सहस्र अठोत्तर भुजकर कै। वसु एक सु च्यार प्रमाण तहां, जहा मघवा कलश ढुरेला है ॥ २ ॥ इक दिन सभा विस्तारी है। जहां पांडव हर गिरधारी है। जहां वात चली वलकारी है। तहां अंगुरी सांसर डारी है। सब ही जोधा मिल खींचत हैं। तहां कृष्ण गोपका मुसकत हैं। हरि हर्ष धार मन में विलखे। अब कारन कौन करेला है ॥ ३ ॥ वलभद्र कृष्णावत लाया है । गोपियन कूं जाय सिखाया है। उग्रसेन सूं नेह लगायां है। प्रभू व्याह कबूल कराया है। छपन कोड़ि जादू सव मिलके सजि चाले जूनागढ़ कूं। जहां तोरण पे गये नेम प्रभू। तहां देख्या पशु सकेला है ॥ ४ ॥ प्रभु द्वादश भावना भायां है। गिरनारी पे ध्यान लगा-आ है तहां घातिया कर्म खिपाया है । प्रभू केवलज्ञान उपाया है। आप मुक्ति का राज किया मैं शर्न आपकी आनलया। करि इन्द्र अन्द्र कर जोर कहैं मोये जगसे पार करेला है ॥ ५ ॥

चाल नाटक ३८

तारन वाला नाम सुना जिनराज तुम्हारा मैं आ आ आया ॥ टेक ॥

दुखिया मैं दीन हूं विषयों में लीन हूं करता हूं पाप रात-

दिन विलकुल में लीन हूं ॥ १ ॥ अब तो मुझे बचा में दिलका हूं कचा मुझ तेरा 'सेवग' जान के शिवपुर का फल चखा ॥ २ ॥

झंझोटी ८९

मोये तारो महाराज श्रीजिनजी म्हारो जन्म मर्ण दुख मेटो महाराज श्रीजिनजी ॥ टेक ॥

लख चोरासी में अति दुख पायो मैं तो आयो तुम दरबार महाराज श्रीजिनजी ॥ १ ॥ आन देव सेये बहु तेरे म्हारो सरियो न एक हू काज महाराज श्रीजिनजी ॥ २ ॥ 'सेवग' की विनती सुनलीजो मोये दीजिये शिव पुरवास महाराज श्रीजिनजी ॥ ३ ॥

मांड ९०

हो म्हारा नेमीस्वर गिरवरियाजी कोई, म्हानै भी लेचालो थारी लार ॥ टेक ॥

भव भव केरीप्रीतडी वाला परतन तोडी जाय । करुणा कर दिल में बसो म्हासूं तरसन देख्यो जाय ॥ १ ॥ चरण कमल सेवा करु म्हारा जीवन प्राण । थां विन वडियन आवडै म्हारा सुंदर श्याम सुजान ॥ २ ॥ पशुवन की करुणा करीजी जादव केरो साथ । 'सेवग' मिल अर्जी करै म्हारी एकन मानी बात ॥ ३ ॥

सोरठ ४१

पिया पै मैं भी जाऊंगी ये सखि अब ले चल गिरनारी दर-
शन कर सुख पाऊंगी ॥ टेक ॥

हमकू छांडिगये निर्मोही । मैं तो नेह निभाऊंगी ॥ १ ॥ अब मैं भी सब छांडि परिग्रह । बारा भावन भाऊंगी ॥ २ ॥ हित कर रांजुल दोऊ कर जोडै चरणा शीश नमाऊंगी ॥ ३ ॥

कल्याण ४२

लगी म्हारा नैना की डोरी हो जिन सैया ॥ टेक ॥

सोहनी सूरत मोहनी मूरत जब देखू तब तोरी ॥ १ ॥ तुम गुण महिमा कह न सकत हूं। मोमैं है बुध थोरी ॥ २ ॥ 'चंद्रखुशाल' दोउ कर जोडै । मेटोना भव भव फेरी ॥ ३ ॥

राग गनगोर ४३

जिन थाकी छव मोमन अति सुखदाईजी ॥ टेक ॥

सहश्र नयन कर मघवा निरखत तोऊ तृपतन थाईजी ॥ १ ॥ कोट दिवाकर कोट निशाकर तिन दुतितन अधिकाईजी ॥ २ ॥ 'नेम' दरसवा जो उरधारे भव समुद्र तर जाईजी ॥ ३ ॥

कैदारा ४४

तुम से जिनराज हितवा, लागिल होवे, वेग बताओ शिवराह पियारे ॥ टेक ॥

कनक कामनी कछुना सुहावे । सकल काम तज दीने सारे ॥ १ ॥ सुमति सखी अब भावन मोकू । शुभ गति की ले जावन हारे ॥ २ ॥ अब 'सेवग' हित कर गुनगावे । जामन मरन मिटावो प्रभु म्हारे ॥ ३ ॥

इन्द्र सभा ४५

श्री आदिनाथ आद ब्रह्मा याद कर आदं सहंश्र भुजा धार इन्द्र गयो उसी दम ॥ टेक ॥

बनाये रूप अदभुतं बचाये एकदम् नीलां जना खिरी निहार जिनसे जग आदम् ॥ १ ॥ ह्वै कै विराग रूप करि कलित सब छिद्रम् । करि अर्क चैन पूर्ण भा विभास शिव पदम् ॥ २ ॥

लावणी ४६

हो कृपा निधान म्हाने वेग तारोजी ॥ टेक ॥

कर्म शत्रु लेर लाग्यो दुख भारोजी । गिद्ध आदि त्यार दिये

विरद थांरोजी ॥ १ ॥ अब लों मैं नांहि सुन्यो नाम थारोजी । जन्म मरण आदि रोग मेट म्हारोजी ॥ २ ॥ सुगुरु सीख पाय गहुं चरण लारोजी मोह जीत मुक्तिवरुं दे नगारोजी ॥ ३ ॥

राग वखत ४७

तारण तारण जिनेश्वर स्वामी अपना विरद निभाना होगा ॥ टेक ॥

सब के नाथं जग विख्यातं नर्कों सेती बचाना होगा ॥ १ ॥ चोरी भी कीनी दिक्षाहु ना लीनी । सब मेरा ऐब छिपाना होगा ॥ २ ॥ कर्मोंने मारा कैद में डारा । जमराजा से बचाना होगा ॥ ३॥ जब लग मुक्ति न होई चैन की चरनो सेती लगाना होगा ॥ ४ ॥

गजल ताल पस्तो ४८

आज चमका है मेरा ताला हो जिनराज सांहि तसवीर देखी तेरी न कही देखने में आई ॥ टेक ॥

हाथ प्रलंबित्त कर कैं कृत कृत्य गुन धरकैं नासका के अग्र भाग चस्म कूं लगाये तांही ॥ १ ॥ देखना न बाकी कछु विलोक लोक अर्थ बहु । जुगल पाद कंज निश्चल भूम पैं लगाय वांही ॥२॥ श्रवन सुन्यान कछु चाहिये कानन टाडा ऐसी मुद्रा लख द्रग हर्ष

उर मैं न समाई ॥ ३ ॥ कीजिये निहाल अब दुकृत पै माल कर कैं । दीजिये शिवाल चैन अनन्त काललों गुसांई ॥ ४ ॥

भैरवी ४९

प्रभु थांकी आज महिमा जानी ॥ टेक ॥

काहेको तो भवबन मांहिफिरतो काहे को हो तो दुख दानी ॥ १ ॥ नाम प्रताप तिरे अंजन से कीचक से अभिमानी ॥ २ ॥ ऐसी साख सुनी ग्रन्थन में जैन पुरान वखानी ॥ ३ ॥

भैरवी ५०

आनंद मंगल आज हमारे आनंद मंगल आजजी ॥ टेक ॥

श्रीजिन चरण कमल परसत ही विघन गये सब भाजजी ।१। सफल भई जब मेरी कामना सम्यक हिये विराजजी ॥ २ ॥ नैन वचन मन शुद्ध करन को भेटे श्रीजिन राजजी ॥ ३ ॥

धनाश्री ५१

दृगन भर देखन दे मुखचंद ॥ टेक ॥

माता मोरा देव्याधन तुम जाया रिषभ जिनंद ॥ १ ॥ जाके

दर्शन तैं सुख उपजै । मिट जावै दुख फंद ॥ २ ॥ वाके मुख पर वारुं मैं हित कर । चिरंजी रहो तेरा नंद ॥ ३ ॥

लावणी जिला सोरठ-वामाड ५२

सखी म्हारी नेमीसुर वनड़ा नैं गिरनारी जाता राख लीजो ये ॥ टेक ॥

समद विजय जीरा लाडला ये मांय ।सखी म्हारी दोनूं छै हल धर लार पिताजिनैं जाय कहिजोये ॥ १ ॥ नेमी सुर वनड़ोवणयोहे माय । सखी मारी खूब वणी छैं वरात झरोका मैं झांक लीजो ये ॥ २ ॥ तोरण पर जब आईया ये मांय ।सखी म्हारी पशुवन सुणी पुकार पाछो रथ फेरियोये मांय ॥ ३ ॥ तोडया छै कांकण डोरडा ये मांय।सखी म्हारी तोडया छै नवसर हार दिक्षा उर धारलीनी हे ॥ ४ ॥ संजम अब मैं धारस्यां हे मांय । सखी म्हारी जास्यां गढ गिरनार कर्म फंद काटस्यां हे मांय ॥ ५ ॥ मो सेवक की वीनती ये मांय । सखी म्हारी मांग्यो छै शिवपुरवास दया चित धार लीजो ये ॥ ६ ॥

झंझोटी ५३

जिन छविपर जाऊं वारियां ॥ टेक ॥

परम दिगंम्बर मुद्रा धारी । अशुभ कर्म सब टारियां ॥ १ ॥
आपा पर की विधी दरसावे । भविजन को ले तारियां ॥ २ ॥ राम
कहै या छवि शिव कारण । बड़े बड़े मुनि धारियां ॥ ३ ॥

बधाई ५४

लिया रिषभ देव अवतार निरत सुरपति नें किया आके निरत
किया आके हर्षा के प्रभुजी के नव भव कूं दर्शा के
सरर सरर कर सारंगी तंबूरा बाजे पोरी पोरी मटका
के ॥ टेक ॥

प्रथम प्रकासी वानें इंद्रजाल विद्या ऐसी । आजलों जगत में
सुनी न कहुं देखी ऐसी, आयो वह छबीलो छटकीलो है मुकट बंध,
छम्म देसी कूदो मानु आ कूदो पूनम को चांद, मनको हरत गत
भरत प्रभु को पूजै धरनी को शिर नाके ॥ १ ॥ भूजों पें चढाये है
हजारों देव देवी तानैं, हाथों की हथेली में जमाये हैं अखाडे तानें,
ताधिन्ना ताधिन्ना तबला किट किट धित्ता उनकी प्यारी लागे, धुम
किट धुम किट बाजा बाजे नाचत प्रभू के आगे । सैना में रिझावें
तिरछी ऐड लगावे उड जावे भजन गाके ॥ २ ॥ छिन में जावें
दे वोतो नंदीश्वर द्वीप जाय पांचो मेर बंद आ मृदंग पें लगावे थाप ।
बंदे ढाई द्वीप तेरा द्वीप के शकल चैत्य तीन लोक मांहि

त्रिम्व पूज आवै नित्य नित्य, आवे वो भपट समही पै दोडा लेने दम
कर छम २ मन मोहन मुसका के ॥ ३ ॥ अमृत की लागी भड़ बरषै
रतन धारा, सीरी २ चाले पोनं बोलै देव जय २ कारा, भर २ भोरी
वर्षावै फूल दे दे ताल, महकै सुगन्ध चहक सुचंग पटताल, जन्मै यों
जिनेन्द्र भयो नाभि के आनंद 'नयनानंद' यों सुरेन्द्र गये भक्ति को
वतलाके ॥ ४ ॥

झंझोटी ५५

कांई गुनो भयोरी सखी पिया आय गिरिकों गये हो ॥टेक॥

पशुवन को मिसकर रथ फेरयो, याही वात लखी ॥ १ ॥
सब जादव समझावण आये, अपनी टेक रखी ॥ २ ॥ जगत जाल
तज रजमति शिव ल्यो, हित की वात हकी ॥ ३ ॥

जंगला ५६

अब मैं शरण लयोजी अजी लयोजी जिन म्हाका राज अब
मैं ॥ टेक ॥

अवलों तुम गुण भेदन पायो भागन गुरु उपदेश दयोजी ॥ १ ॥
जप तप संजम बन तन मोकूं निश दिन नाम उचार लयोजी ॥ २ ॥

निज आतम ध्यावो शिव कारण हित कर तुम पद शीश नयोजी ॥ ३ ॥

राग परदेसियां की ५७

गिर नारियों पर चलूंगी प्रभूजी थांरी लार ॥ टेक ॥

सुन सुनरी सजनी ये संसार असार नहि नहि रे मैं तो जाऊंगी जहां भरतार ॥ १ ॥ सुन सुनरी सजनी आभूषण लेवोनी उतार नहि नहि रे मुझको फीको लागै छै संसार ॥ २ ॥ सुन सुन ये सजनी मंत्र जपूंगी नव कार हां हां जी नैया जिससे लगेगी भवपार ॥ ३ ॥ सुन सुन ये सजनी मोहन की अरदास नहीं नहीं जी मुझको भक्ति सिवा कुछ काम ॥ ४ ॥

५८

दर्शन कीनो आज शिखरजी को जी बीसजिनको ॥ टेक॥

बीस कोस सूं गिरवर दीखै । भाग्यो भ्रम शकल जियको ॥१ ॥ मधुवन ऊपर सीतां नालो वाको नीर अधिक नीको ॥ २ ॥ वीस टोंक पै वीस ही धुमटी ज्यां विच चरण जिनेश्वर को ॥ ३ ॥ आठ टोंक पश्चिम दिश वंदों द्वादश वंदा पूरव को ॥ ४ ॥ इन्द्र भूषण जीका सांचा साहिब सांचा शर्ण जिनेश्वरको ॥ ५ ॥

झंझोटी ५९

वास पुज्य महाराज विराजो चंपापुर में ॥ टेक ॥

अरुण वर्ण अविकार मनोहर । देखत आनंद कार दर्शन पायो अब मैं ॥ १ ॥ गन धर फन धर और असनधर । खग पति पूजें पाय धारुं मन वच तन मैं ॥ २ ॥ फागुन वदि तेरस वंदन तिथी नेम मनोरथ पाय सुगुरु खिण २ पलमें ॥ ३ ॥

सोरठ ६०

आज म्हारे जिनवरजी को शरणों । टेक ॥

सुंदर मूरत प्रभुजी कि कहिये, नित उठ दर्शन करणो ॥१॥ धन दोलत ओर माल खजाना । इनको म्हारे कांई करणो ॥ २ ॥ अब 'सेवग' हित कर गुन गावै । भव दधि पार उतरणो ॥ ३ ॥

६१

मोक्ष सुगामी हो जग में तुम नामी अंतर जामी हो ॥ टेक ॥

तुम हो तीन भुवन पति नायक, मैं शरणैं एका की हो । चहुं गति के दुख में अति भोगे, तुम ही साखी हो ॥ १ ॥ नर्कन के दुख चिर बहु भोगे वध बंधादि घनेरे हो । मेरो याद करत मन

सकै, तुम ही धनेरे हो ॥ २ ॥ वासठ लाख भेद तिर्यञ्च के, त्रस थावर वहु पाई हो । जामन मर्ण भूख त्रस बंधन, मै दुख पाये हो ॥ ३ ॥ मानुप गति के चिर दुख देखे, इष्ट अनिष्ट अनेकों हो । योग वियोग भये वहुतेरे, सुख नहि लेखो हो ॥ ४ ॥ देव विभूति पाय अति सुंदर, भोग मगन होय राच्यों हो । जब माला मुरझावन लागी, तब वहु नाच्यो हो ॥ ५ ॥ या विधि चहुंगति के दुख भुगते, अव मोरी नहि शक्ती हो । वुध मोहन की अर्ज मान कर द्यो मुझे मुक्ती हो ॥ ६ ॥

६२

किस विधि कीने कर्म चक चूर, थांकी उत्तम क्षमा पै अचंभो
म्हानै आवै ॥ टेक ॥

एक तो प्रभु तुम परम दिगम्बर, पास न तिल तुस मात्र हजूर । दूजे जीव दया के सागर, तीजे संतोसी भरपूर ॥ १ ॥ चोथे प्रभु तुम हित उपदेशी, तारण तरण जगत मासूर । कोमल वचन सरल सत वक्ता, निर्लोभी संयम तपसूर ॥ २ ॥ कैसे ज्ञानावर्णी जिना रयो, कैसे गेरयो अदर्सन चूर । कैसे मोहमल्ल तुम जीत्यो, कैसे किये च्यारुं घांतिया दूर ॥ ३ ॥ कैसे केवल ज्ञान उपायो, अंतराय कैसे किये निर्मूल । सुर नर सेवै मुनि चर्ण तुमारे, तो भी नहिं प्रभु

तुमकूं गरुर ॥ ४ ॥ करत आस अरदास नैन सुख, दीजे यह मोहे दान जरुर । जनम जनम पद पंकज सेवूं, और न चित कछु चाह हजूर ॥ ५ ॥

६३ होरी काफी

कब ऐसा अवसर पाऊं भला कब पूजा रचाऊं ॥ टेक ॥

रतन जड़ित सुवर्ण की झारी, गंगाजल भरवाऊं । केशर अगर कपूर घिसाऊं, तांदुल धवल धुवाऊं । माल पुष्पन की चढाऊं ॥ १ ॥
षट रस व्यंजन तुरत बनाके, अष्टक थार भराऊं । दीपक ज्योति उतारुं आरती, धूप की धूम्र उड़ाऊं । श्रीफल भेट चढाऊं ॥ २ ॥
पाठ पढूं अरु पूजा रचाऊं, लेकर अर्घ बनाऊं । शांति छवि महाराज रूप लख, हर्ष हर्ष गुण गाऊं । करम का योग मिटाऊं ॥ ३ ॥
बाजत ताल मृदंग बासुरी, लेकर बीन बजाऊं । नाचत चन्द्रा प्रभू पद आगे, बेर बेर शिर नाऊं । निछावर दर्शन पाऊं ॥ ५ ॥
या विध मंगल पूजन कर के, हर्ष हर्ष गुण गाऊं । सेवक की प्रभू अर्ज यही है, चरण कमल शिर नाऊं । जिस से तर जाऊं ॥ ५ ॥

६४ होरी काफी

आयो परव अठाई चलो भवि पूजन जाई ॥ टेक ॥

श्री नन्दीश्वर के चहुं दिश में, बावन मन्दिर गाई। एक अंजन गिरि चार दधि मुख रतिकर आठ बनाई। एक एक दिश में ये गाई ॥ १ ॥ अंजन गिरि अंजन के रंग है, दधि मुख दधि सम पाई। रतिकर स्वर्ण वर्ण है ताकी, उपमा वर्णि न जाई निरूपमता छवि छाई ॥ १ ॥ स्वर्ग लोक के सर्व देव मिल, तहां पूजन को जाई। पूजन वंदन को हमरो जी बहुत रह्यो ललचाई। कह्यो क्या ज्ञान सकाई ॥ ३ ॥ यातैं निज थानक जिन मंदिर तामैं थाप्यो भाई। पूजन वंदन हर्ष से कीनो, तन मन प्रीत लगाई। 'सिखर' मनसा फल दाई ॥ ४ ॥

६५ ठूमरी देश

नाथजी मोरी विनती सुनोना ॥ टेक ॥

भव २ भटकत बहु दुख भुगते, जो दुख मुझ से जात कहेना ॥१॥ लख चोरासी के दुख भुगते, अब ये मोतैं जात सहेना ॥२॥ ज्यों होऊं मैं तुम सम प्रभुजी, लाख बात की एक सुनोना ॥ ३ ॥

६६ कान्हड़ा

पारस जिनंदा मोरी अरज सुनीजे ॥ टेक ॥

अर्ज सुनीजे दर्शन दीजे, कृपा करीजे प्रभु मोपै, सत गुरु नैं बताया, जब ज्ञान में आया, सत असत वही जानीजे । आ आ आ आ आ आ ॥ १ ॥ कुगुरु कुदेव को बहुत ही ध्याये, भव समुद्र में गोता खाये, पारन पाया में तो शरणो में आया, मोरी चोरासी मिटा अबदीजे । आ आ आ आ आ आ ॥ २ ॥ मैं जीवन प्रभु-दास तिहारो कृपा करी प्रभु मोहे उबारो प्रभु तुमरो मैं चाकर, प्रभु तुम मेरे ठाकर, चारों गति से बचाय अबलीजो आ आ आ आ आ आ ॥ ३ ॥

६७ चाल अच्छा पिया की

आतम अनुभव निज हित तज क्यों पर परणति में ध्यावत हो, चंड चिदानंद भाव सुगुण तुम काहे विभाव रचावत हो ॥ टेक ॥

अनंत ज्ञान का धारी तूं है चेतन ज्ञानी, अनन्त वीर्य सुक्ख बल अनंत का स्वामी, यही है भाव तेरा सार समझ ले प्राणी, अखंड चंड है अविनाशी तेरी राजधानी हो ताहि विसर तुम रंक

भये क्यों पर घर मांहि लजावत हो ॥ १ ॥ यह रागद्वेष आवरणादि आदि जग धंधे, पुत्र दारादि के कुटुम्ब विटम्ब के दुख दंदे, इन्हैं निज जान के वसु ग्रामें फंसा इन फंदे, नहीं ये साथि तेरे घाति समझिये बंदे। हां ये जड़ अथिर अमर तुम चेतन कैसे एक बतावत हो ॥ २ ॥ इन्हों ने मिल के तेरा निज स्वरूप फांसा है, भाव को ढांक के विभाग को प्रकाशा है, नहीं है मुझको खबर तेरा कहां वासा है, जहां लेजाय ये वस उस में तूं रचा सा है, हां ये कलिमल दुर्गति दुख दारुण इनतैं हेत मिलावत हो॥ ३ ॥ अनादि काल तैं सुभाव भाव भूले हो, अनंत सुख विसार रंच मांहि फूले हो, ये सुखा भास अथिर व्यार से वंबूले हो, इन्हीं प्रसाद चहुं गति में झार झूले हो, हां अब हूं चेत विचार सयाने नरतन दुर्लभ पावत हो ॥ ४ ॥ ये राग आग की ज्वाला प्रचंड न्यारीहै, इसी के नाश को सम्यक्त सिंधु भारी है, यही गुरु सीख की महिमा प्रभू प्रचारी है, अष्ट दुष्टों को नाश मोक्ष जा निहारी है। हां कुंजी लाल' नित आगम ध्यावो नाहक दाव गमावत हो ॥ ५ ॥

सोरठ ६८

क्यों ज्ञानी पिया, विसरे निज देश कुमति कुरामिनी सौत संग राचे छाय रहे परदेश ॥ टेक ॥

अनंतकाल परदेश न छाये पाये बहुत कलेश, देश तुम्हारो सुपद सम्हारो, त्रिभुवन होउ नरेश ॥ १ ॥ भ्रम मद पाय छकाय रहो धन, ज्ञान रहो नहि लेश दुखी भये विललात फिरत हो, गति २ धरि दुर्भेष ॥ २ ॥ यह संसार असार जान लखि, सुख नहिं रंच कलेश 'मानिक' काल लब्धि पावस लहि सुमति हाथ उपदेश ॥ ३ ॥

६९

जिनवर चरण भक्ति वर गंगा ताहि भजो भवि नित सुख
दानी ॥ टेक ॥

स्याद्वाद हिम गिरतें उपजी मोक्ष महा सागर हिं समानी ॥ १ ॥ ज्ञान विराग रुप दोउ ढाये संयम भाव मंगर हित आनी धर्म ध्यान जहां भंवर परत है शम दम जामैं शान्ति रस पानी ॥२॥ जिन संस्तवन तरंग उठत है, जहां नहीं भ्रम कीच निसानी, मोह महा गिरी चूर करत है रतन्त्रय शुध पंथ ढलानी ॥ ३ ॥ सुरनर मुनि खग आदिक पक्षी, जह रमतंहि नित शांतिता ठानी, 'मानिक' चित्त निर्मल स्नान करि फिर नहिं होत मलिन भव प्रानी ॥ ४ ॥

स्याम कल्याण ७०

बसी रे मन जिन छवि द्दगन बसी ॥ टेक ॥

निर्विकार निर्द्वंद अनूपम ध्यानारूढ लसी ॥ १ ॥ जाके लखत नसत रागादिक, सुमति सुतिय हुलसी ॥ २ ॥ श्रीजिनचंद्र छवी भ्रमतम हर, 'मानिक' चित निवसी ॥ ३ ॥

७१

प्रभु को सुमर ल्योजी मन गहला, थानै सत गुरु दे छै हेला ॥ टेक ॥

मानुष जन्म पदारथ पायो, कर संतन सूं मेला । टोर टोर दूं सुरत समेटो तजद्यो मन का फैला ॥ १ ॥ कुटंब कबीलो अपणों कीनो ये तो है सब पैला । जमका दूत पकड़ ले जासी माथै मुग्दर देला ॥ २ धन जोबन में छटक्यो डोलै मन में बण रह्यो छैला । सुख संपति में सबही सीरी दुख में दूर रहेला ॥ ३ ॥ धन जोबन का गर्व न कीजे, ये दोउ थिर न रहेला, कहै 'जिणदास' सुनो भविजीवो अगम पंथ का गहला ॥ ४ ॥

लावणी ७२

नाम नहीं लियो जिनंद भज कै । सुमति की सेज गयो तज कै ॥ टेक ॥

आप में रात दिवस जाता धर्म मारग में नहिं आता, बोलता मुख से मीठि बातां, माल पराया ठिग खाता बण गया खूब डील नाता, सदा विषयन के संग राता, करम तैं किया खूब सज कै ॥ १ ॥ खलक का ख्याल खूब जोता नींद भर सेजन में सोता, जाल जंजाल सब ही थोथा, गगन उठ गया हंस तो था, सजन सब भेले होय रोता अकेलो आप खाय गोता, चलो चड पूत बारभ करकें ॥ २ ॥ खावता खीर हाथ रांधी घणां घर में सोना चांदी । आतमा हुई तेरी आंधी, स्वर्ग की रीति नहीं साधी, कालनैं फांस आण फांदी, आडि कुण फिरत बिवी बांदी, नर्क उठ चल्यो पाप सज कै ॥ ३ ॥ रोपी जब काल आन खूंटी आंत सब देही की टूटी येही मन काय तेरी लूटी, कहै 'जिणदास' आस छूटी, कियो भव मूल विसन सेकैं ॥ ४ ॥

सोरठ ७३

जब निज ज्ञान कला घट आवे तब भोग जगत ना सुहावे ॥ टेक ॥

मैं तनमय अरु तन है मेरो, फिर यह बातन भावे ॥ १ ॥ खाज खुजात मधुरसी लागै, फिरत न अति दुख पावे त्यों यह विषय जान विषवत तज, काल अनंत भ्रमावे ॥ २ ॥ सपने वत सब जग की माया, तामैं नांहि लुभावें । 'चैन' छांडि मन की कुटलाई ते शीघ्र ही शिव जावे ॥ ३ ॥

गजल ताल पसतो ७४

आद जन्म पाया तैं नाहक खट कार जायेगा। काग के उड़ाणे कों मणि वगा पछितायगा ॥ टेक ॥

सागर दो सहश्र मांहि सोला भव मानुष के, ताहि तूं व्यतीत कर निगोद मांहि जायगा ॥ १ ॥ आर्य क्षेत्र जन्म पाना, तीन वर्ण का उपजाना, इन्द्रियावर्णी क्षयोपशमता, यह अब सरन लहायगा ॥ २ ॥ 'सुगुरु सीख समझ अब, आतम अनुभव करि कैं, 'चैन' तूं शिव थान मांहि शीघ्र ही हो जायगा ॥ ३ ॥

लावणी ७५

मैं पकड़े पद जिन नाथ सुपार्श्व तेरे। सब हटे कलुष दुख द्वंद मिटे भव फेरे ॥ टेक ॥

तुम विन चतुरानन सही, त्रास अति भारी । ...

विलास मुद्गल प्रकाश तैयारी । नहि लख्योचिदानंद अलख सकल दुख दाई । तब बड़ी प्यास पर आस विपा दुख दाई ॥ १ ॥ पर मैं बहु इष्ट अनिष्ट कल्पना जारी । करि राग द्वेष के फंद भयो जु भिखारी । चहुं गति चौरासी लाख श्वांग धर धर के । बहु नचो विमुख निज शक्ति पच्यो मर मर के ॥ २ ॥ इम भ्रमत भ्रमत शुभ उदय मिली तुम वाणी । ता सुनत जीव पुद्गल की एकता जाणी मैं गहूं ज्ञान दरशन सुभाव पर नांही । तब लहूं 'चैन' तुम निकट गये शिव मांही ॥ ३ ॥

७६

सुन नैन चैन जिन वैन अरे मत जन्म वृथा खोवै । जन्म वृथा तूं अब मत खोवै । मत सूली चढ निर्भय सोवै, भींच देगा चान चक्र, काल गला आन, तब मूंड पकड रोवै ॥ टेक ॥

जैसे कोई मूढ राज, साज गज राजन को, खींच के जडाउ होदा, खात ढोयरीझै है । कंचन के भाजन में, मोरी की समेट कीच, फूल हेत बोवै शूल, अमृत से सींचै है ॥ चिंतामणी रत्न को पाय, के बगाय सिंधु, काग के उडाय पे कूं, मूढ हाथ भींचै है त्योंही नरभव, अब पाय के कियो न तप, वासना मिटीन छिन छिन

आयु छीजे है ॥ सासो स्वास दुद्धारा. वजै शिर. आरा घाव धो पट्टीमत घोवै ॥ १ ॥ तरस तरस के निगोद से निकास भयो, तहां एक श्वास में अठारा वार मरे थो । सूक्षम से सूक्षम थी तहां तेरी आयु काय, पर जाय पूरी न करेथो, फिर मरे थो । तहां से निकस पंच थावरा में,, पृथ्वी काय मांही तूं समाय के अनंत दुख भरे थो, हीरा मज्जि सज्जिशोरा गंधक पाषाण, लूण लूण से लकडियां, पिंडोल तन धरे थो । अरे भया पारा हड्ताल रसायण कोई तुझ में हो है ॥ २ ॥ जल में जन्म धर्‍यो धरणी पैं आय पड्यो मोरीन मैं जाय सड्यो पोखर मै रुक्यो है । काहू न झकोर डार्‍यो काहू न वखेर डार्‍यो ग्रीषम की लागी धूप पवन लागी तन सूक्यो है। काहू न अचेत किया काहू न सचेत किया मूत के वहाय दिया उपरां सूं थूक्यो है, पावक में गयो तो न पायो चैन काहू भांति काहू न वुझायो काहू दाव्यो काहू धोक्यो है॥ किन हूं तपा कर घात करी घन घात तहां तेरा चकना चूर होवै ॥ ३ ॥ पवन शरीर धार्‍यो, शीतल से देदे मार्‍यो, अपनो ही अंग तहां पायो वहु त्रास रे। कव हूं वनास्पति भयो मूल कंद जात फल फूल, कली फली साग पत्ता घास रे । छील छोंक भोन के भुलस के शरीर तेरो, तोर मोर . चूंट प्राणी कर गयो ग्रास रे । भया तूं विकल, तीन भांत वे अकल ज्ञव कीडा चीटि हो भोंरा कहायो माखी डांस रे ॥ ना ना विधि किये मर्ण नही कोई शर्ण सहाई दया विन को होवै ॥ ४ ॥ मीन मृग

अज सुशा पारधी पकर लियो केर के उधेर डारो काहून बचायो है मार्‍यो लायो बैल भैंसा, ऊंट घोडा गज खर बांध्यो धूप सीत में न खायो है। स्वर्गन में झुरा देख दूसरे की संपदा को, नर्कन में मार गार चामडो उडायो है। मानुष में इष्ट वा अनिष्ट को संयोग भयो चेत चेत जैन की तू अैन मांही आयो है। वैठ कहीं एकंत यहीं है तंत आंगन में कांटे मत बोवै ॥ ५ ॥

खमाच ७७

त्रिभुवन पत छवि कैसी छाजेजी, चमक दमक आगै, दामनि दमक कहा, ज्याकि ज्योति आगै, चंद्र सूर्य ज्योति लाजे ॥ टेक ॥

रतन सिंहासन, अधर विराजे, चहुं दिश सब ही को दर्श होत, निरखत दृग मन नहि त्रपत होत, अैसी अद्भुत शोभा साजेजी ॥ १ ॥ सुरे नर पशु मन मोह लिया है, चहु दिश हारी ज़ाकी मधुरि वानि 'कुन्दन' गन धर जाको पारन पावे। अैसी गिरा जाके तन साजेजी ॥ २ ॥

७८

आपा क्यों ना संभारो कहत गुरु ॥ टेक ॥

तू चेतन चिद्रूप अमूरत अज्ञेय सुख मय सारो । शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अविनाशी, सकल ज्ञेय ज्ञायक पर न्यारो ॥ १ ॥ आनंद कंद अनंद अनोपम शिव कमला भरतारो। राग द्वेष मोहादि अविद्या यह स्वभाव परिणत सब टारो ॥ २ ॥ जहां जु देह तेल तिल संग ज्यूं है अनादि प्रगटारो सोभी भिन्न चिदानन्द तोतें, तो फिर सुत दारा किम लारो ॥३॥ स्वपर भेद अनुभव कर 'कुंदन' मम बुध पर परि-हारो । प्रगट अनंत ज्ञान सुख वीरज, दरशन ज्ञान भानु उजियारो ४

७९

सोता है कि सनींद उमर बीती जाती सारी ॥ टेक ॥

चेत चेतर मूरख क्यों उन्मत दशा धारी । जो विषयों में मग्न हुवा निज सुध बुध परिहारी ॥१॥ सुत दारा दिक, मोह फांस जो तैं गल बिच डारी । सो सब स्वारथ सगे लगे नहिं कोई तेरी लारी ॥ २ ॥ कहूं वृथा मोहवश करत ज्यों पाप क्रिया भारी । इनका फल नर्कादि भोगना होगा दुख कारी ॥ ३ ॥ जैसे नेह धरे त्रिय सुत ज्यों जैसे जग स्यारी । 'कुन्दन' निश्चय जान होय शिव त्रिय भरता थारी ॥ ४ ॥

राग इंद्र सभा ८०

कुमत प्रीति के हम सताये हुये हैं, विषय भोग धोखे में आये हुये हैं ॥ टेक ॥

न हम हैं किसी के ना कोई हमारा. सिरफ मोह के वश फंसाये हुये हैं । १ । कभी स्वर्ग में है कभी नर्क में हैं, अरहट को तरह से भ्रमाये हुये हैं । २ । पिता पुत्र माता और बन्धु भाई न साथ आये नालाये हुये हैं ।३। सुमति से कभी हम मिलेंगे 'कुन्दन यही लो प्रभू से लगाये हुये हैं । ४ ।

चाल नाटक ८१

तारो २ स्वामी तिहारे चर्ण वार वार पूजें ॥ टेक ॥

कर्मों से हम बहुत दुखी स्वामी दुखटारो ॥ १ ॥ फिरते हैं मोह वश संसारी, यह वार वार देखैं कर्मों का खेल, अय 'त्रिमन' जिनवर शरन, शिव पहुंचाने वाले, तत्व ज्ञानी परमातम हो स्वामी तिहारे चर्ण वार वार पूजें ।

होली काफी ८२

नेम ने मोरी एक न मानी न मानी ॥ टेक ॥

ठाडी थी मैं अपने महल में पिया दर्श की लहानी; तोरण से

रथ फेर चले प्रभु, सुन पशुवन की वानी। मेरी सुध बुध विसरानी ।१। विन व्यवहार मोक्ष मग नाहीं जिन शासन मैं गानी, और तीर्थ कर भोग जगत सुख पीछे दिक्षा ग्रहानी । गुनी सब लोक कहानी ॥ २ ॥ जगत प्रसिद्ध बाल ब्रह्मचारी, अब क्या चित में ठानी, छांडि मुझे शिव रमणी कूं चाहो जग होगी हंसानी। देखो जादुराय की रानी ॥ ३ ॥ चढि गिरनार धरी प्रभु दिक्षा मुक्ति पुरी की निशानी, त्याग विभूति 'चिमन' जब राजुल प्रभू पद शीशनमानी मुझे संग लीज्यो ज्ञानी ॥ ४ ॥

८३

मैंडा दिल लागा प्रभु चरणों नाल ॥ टेक ॥

अधम उधारक विरद तुम्हारो सो पाल्यो जग पाल ॥१॥ भव सागर में भ्रमतां २ गयो अनंत काल ॥ २ ॥ पुन्य उदय कर नर भव पायो अबतो करो जी निहाल ॥ ३ ॥ इन्द्रादिक शिव पदवी दायक प्रभु तुमरी गुण माल ॥ ४ ॥ यातें शरण 'चिमन' तुम पद मेटो जग जंजाल ॥ ४ ॥

राग स्याम कल्याण ८४

मेटो जिन स्वामी मेरी भव पीर ॥ टेक ॥

मैं तो चहुंगति दुख बहु पायो, जानत हो बलवीर ॥ १ ॥ सुत दारा दिक सबही साथी, चाहैं धन में सीर । विपत्त पड़े कोई

काम न आवे, नहीं पावे कोई नीर ॥ २ ॥ तुमही अनन्त चतुष्टय स्वामी, तुमही नायक धीर। यातें 'चिमन' शरण तुम पद को वेग हरो भवपीर ॥ ३ ॥

८५

जिनदेव भजो परनेह तजो मिटजाय कर्मका फंदा ॥ टेक ॥

जिन देव बड़े उपकारी, सब जीवन को सुखकारी, उठ भोर भक्ति मनलाय, जिनालय जाय, जिनेस्वर ध्याय मिटावे चतुर्गति का फंदा ॥ १ ॥ प्रभु पूजन का फल भारी मेंढ़क अमर गति धारी कर भाव शुद्धता धार चले नर नार, प्रभू के द्वार, हुवा ये 'चिमन' प्रभू का बन्दा ॥ २ ॥

कालिंगडा भैरवी ८६

रे मन करत सदा संतोष यातैं मिटत सब दुख दोष ॥ टेक ॥

बढ़त परिग्रह मोह बाढ़त अधिक तृष्णा होत, बहुत ईंधन जरत जैसे अग्नि ऊंची जोत ॥ १॥ लोभ लालच मूढ़ जन सो कहत कंचन दान, फिरत आरत नहिं विचारत धरम धन की हानि ॥२॥ नारकिन के पाय सेवत सकुचि मानत संक, ज्ञान कर चेतहु 'बनारसि' को नृपति को रंक ॥ ३ ॥

भैरवी ८७

चेतन उलटी चाल चले, जड संगत तैं जडता व्यापी निज
गुण सकल टले ॥ टेक ॥

हित्त सों विरच ठगनि सों राचे मोहपिशाच छले, हंस २ फांद सवार आपही मेलत आप गले । १ । आये निकसि निगोद सिंधु तै फिरि तिह पंथटले, कैसे परगट होय आग ज्यों दबी पहाड़ तले । २ । भूले भव भ्रम बीच बनारसि तुम सुरज्ञान भले धर शुभ ध्यान ज्ञान नौका चढि बैठे ते निकले ॥ ३ ॥

काफी ८८

तू भ्रम भूलनारे प्राणी ॥ टेक ॥

धर्म विसार प्रतत्र विषय, सुख सेवत वे मति हीन अज्ञानी ॥ १ ॥ तन धन सुत जन जीवन जोवन डाभ अणी ज्यों पानी, देख दृगा प्रतत्र 'बनारसि' नाकर होउ विरानी ॥ २ ॥

भैरवी ८९

चेतन तू तिहूंकाल अकेला, नदीनाव संजोग मिलै ज्यों त्यो
कुटम्ब का मेला ॥ टेक ॥

यह संसार असार रूप सब, ज्यों पट पेखन खेला, सुख

संपति शरीर जल बुद २, बिनशत नांही बेला ॥ १ ॥ मोह मगन आतम गुण भूलत, परीतोहि गल जेला, मैं मैं करत चतुरगति डोलत, बोलत जैसे छैला ॥ २ ॥ कहत 'बनारसि' मिथ्या मति तज होय सुगुरु का चेला, तास वचन परतीती आन जिय, होय सहज सुलझेरा ॥ ३ ॥

बरवा ९०

वादिन को कछु सोचले मन में खबर पडेगी बूढे पन में ॥ टेक ॥

वणज किया क्या भारी तूने टांढालादा भारी, औछी पूंजी जूवा खेली, आखिर बाजी हारी करले चलने की तैयारी एक दिन डेरा होयगा वन में । १ । झूटे नैना उलफत बांधी, किस का सोना किस की चांदी, इक दिन पवन चलेगी आंधी, किस की बीबी किस की बांदी, नाहक चित लगावे धन में । २ । मिट्टी सेती मिट्टी मिल गई पानी सेती पानी, मूरख सेती मूरख मिलिया, ज्ञानी सेती ज्ञानी, यह मिट्टी है तेरे तन में । ३ । कहत बनारसी सुन भवि प्राणी यह पद है निर्वाणारे, जीवन मरण किया सो नाही शिर पर काल निशानीरे सूझ पड़ेगी ताहे बूढा पणमें।४।

भैरवी ९१

काहे पैं करत गुमानरे तन का तनक भरोसा नाहीं ॥ टेक ॥
पेंड़ २ पर तक २ मारे, काल की चोट निसानारे ॥ १ ॥
देखत देखत विनस जात है, पानीं बीच बुदा सारे ॥ २ ॥ कहत
बनारसी सब जीवन से यह जिवड़ा योंहि जानारे ॥ ३ ॥

काफी हौरो ९२

रंग मच्यो जिन द्वार चलो सखी खेलन होरी ॥ टेक ॥
सुमत सखी सब मिलकर आवो कुमति ने देवो निकार, केशर
चन्दन और अर्गजा समता भाव घुलाव ॥ १ ॥ दया मिठाई तप
बहु मेवा सित ताम्बूल चबाय, आठ कर्म की डोरी रची है ध्यान
अग्नि सूं जलाय ॥ २ ॥ गुरु के बचन मृदंग बजत है ज्ञान
जमाडफ ताल, कहत 'बनारसी' या होरी खेलो मुकति पुरी को
राव ॥ ३ ॥

केदारा ९३

अब सुरभन का दाव है अवसर पाय कहत हों मनवा॥टेक॥
तन धन जोवन है विजली वत इन में कहा लुभायरे ॥१॥

मात तात सब सुख के सीरी, भीड पड्यां भग जायरे ॥ २ ॥ यातैं सीख 'सुगुरु' की सुनले प्रभु चरण न चित ल्यावरे ॥ ३ ॥

राग अडाणो ९४

वन्यां म्हारे याही घड़ी में रंग ॥ टेक ॥

तत्वारथ की चरचा पाई साधर्मी को संग । १ । श्री जिनराज दयानिधि भेटे हर्ष भयो उर अंग, ऐसी विधि मोहि भव भव दीजो धर्म प्रसाद अभंग ॥ २ ॥

काफी होरी ९५

जिया परलोक सुधारो जिनजी सूं हेत लगाय ॥ टेक ॥

मही कहों सो मान जिया तूं मतकर म्हारो म्हारो, या काया का गर्व करत है, सोहित नांहि तिहारो । १ । ऊंच नीच अन्तर नहिं प्रभु के भजन करे सोही प्यारो, झूंट कपट करि करत बड़ाई सो सोमल सोही खारो ॥ २ ॥ । २ । झूंट कपट और छोड़ि जगत कों, हिरदे ज्ञान विचारो, अन्त काल में जे सुख चाहो रसना नाम उचारो । ३ । सतगुरु यों उपदेश देत है, नित प्रति उठि सवांरो, सासो स्वास सुमर साहिब नैं जो होवे निसतारो ॥ ४ ॥

दोहा की ढालमें ९६

जिया तूं सीख सुगुरु की मानरे मत कर गर्वगुमान ॥ टेक ॥

पूत अशुचि पड़त पेटमैं मल मुत्तर लपटान नैंन कोण खिलावै कोण पिलावै तूं रोय भयो हैरान ॥ १ ॥ योवन हुवो वनिता संग राच्यो विषय भोग लपटान. मोहजाल की निद्रा सेती कीया बहुत तोफान ॥ २ ॥ वृद्ध भयो जब कांपण लाग्यो धूजण लाग्या प्राण परवस पच्यो झूरवा लाग्यो अब घबराई ज्ञान ॥ ३ ॥ श्रावक की करनी नहिं कीनी सुन्यौ नहीं गुरु ज्ञान. कूट कपट की वातां मांही नांमें दीना कान ॥ ४ ॥ सात व्यसन और पांचों इन्द्री, अष्ट कर्म बलवान 'प्रेम' कहै जंजाल जगत तज, धर मत गुरु का ध्यान ॥ ५ ॥

लावणी ९७

तूं जिन मारग की वात हिया बिच धर रे मत कर झूठा पाखंड पापसूं डररे ॥ टेक ॥

तूं जूण चोरासी के मांहि भटक नर भव पायो. कोई पुन्य योगतैं उत्तम कुल में आयो, तूं कर अलीनी लीन कुमति में छायो. नहिं चले धर्म की राह करै मन चायो तूं धन जोबन मैं अंध हुयो मत फिर रे ॥ १ ॥ तूं करै अकेलो पाप खाय सब सारा, म

जाणे संघाती कोई नहि थारा, तूं अपणा शिर पर बांध पाप का भार, ये स्वार्थ के सब लोग रहैगा न्यारा, तूं इनके मारग लाग नर्क मत पड़ेरे ॥ २ ॥ तूं बाल पणों हंस खोयो ख्याल के माही तेरी भई जवानी मगर पचीसी भाई, जब लही जरा फिर गेर सुफेदी छाई, तेरी पांचों इन्द्री थकी हुई दुख दाई, तूं समझे नहीं गंवार अज्ञानी नर रे ॥ ४ ॥ तूं श्री जिनेन्द्र को नाम पलक नहि लीना फिर शिव मारग की राह छोड़ तै दीना, तूं कुगुरु कुदेव की सेव करों बहु हीना, तेरो धर्म तणां को काम और ठिग लीना, तूं भव सागर में डूब मती अब पर रे ॥३॥ अब कह 'खुशालिचन्द अध्यातम गाई, यो श्री जिनेश को नाम सदा सुख दाई, यो कर्म काट लेजाय मुक्ति के माही, तेरो जामन मारण मिट जाय समझ मन भाई, इन मुकति समान और नहि थिर रे ॥ ५ ॥

लावणी ९८

तजो नर सातों दुख दाई कुवच न कष्ट जहां बहु देखे दुर्गति लेजाई ॥ टेक ॥

जूवा खेल मांस का खाणा, और मदिरा का पीणा, कुल का नास किया उस नर ने वेश्या संगम कीना । १ । जीवन की हिंसा में लाग्या और चौरी रंग राच्या पर नारी गोरी सी

लखि कैं मूर्ख उठ कर नाच्या । २ । इन सातूं की निंदा जिनके सब संतन ने कीनी, ध्यान धार धिक्कार सबै मिल सातू कूंही दीनी । ३ । 'चम्पालाल' दिवाण लावणी मजलिस में गाई चारुं वेद छहों दर्शन में सब जन मन भाई । ४ ।

लावणी ९९

कुमति कूं छांडि देवो भाई भव सागर मे रुलता रुलतां
मानुषगति पाई ॥ टेक ॥

दुष्ट कर्म की संगत सेती बहुत फिर्यो भाई, नाना भांति नचायो तोकूं बहुत दुक्ख दाई ॥१॥ पर निन्दा अरु चावत चुगली तूं मत कर भाई, नर्क निगोद में पड़ोगे प्राणी बहुत जो दुख दाई ॥ २ ॥ दया धर्म जिनवर की वाणी या चित में ल्याई जाप जपो नवकार मंत्र को पाप उतर जाई ॥ ३ ॥ मोहजाल में कांई फिरे तूं जिन भजलै भाई, सामायक पड़ कूणां करिये सुभ गति की साई ॥ ४ ॥ मन चंचल नैं बस कर लीजै स्वर्ग मुक्ति जाई, 'पंडित हरसुख' जिन पद पूजो गुरु शरणै आई ॥ ५ ॥

दोहा की ढाल १००

सात व्यसन छोडो जीव सें संसारी लोगों ॥ टेक ॥

जुवा खेलन मांसरु मादज़ी वेश्या विसन सिकार, चोरी पर रमणी रमै सजी सातुं विसन निवार ॥ १ ॥ जूवा खेली पांडवा सनै मास भक्यो वकराय, मदरा पीयी जादवा सनै जडा मूल से जाय । २ । चारु दत्त वेश्या ने सेई ब्रह्मदत्त आखेट सत्य घोष पर धन कू हर के पहुंच्यों नरका टेट । ३ । रावण राय वडा अभिमानीं तीन खंड का नाथ शीलवती सीता कू हरके जग में भया निपात । ४ । भोजन जीमण वैठता सनै मत कर दूजी वात मोह जाल थाली में दीखे फेरन लीजो ग्रास । ५ । जो जो एक व्यसनन से यो दुख पायो अधिकार सत गुरु तो इम सीख देत हैं सातों व्यसन नीवार ॥ ६ ॥

लावणी १०१

सार वस्तु जिन धर्म, भविक जन ताकूं उर धरना और सकल पाखँड जगत में उसे दूर करना ॥ टेक ॥

प्रथम२ या सार वस्तुहैं वाणी जिनेश्वर की, नहीं राग नहीं दोप, भला यह छाया करमन की, जिन वानी से गती सुधर गई नाग नागनी की, केवल वानी है जिन वानी मोक्ष जडी शिव की, भजो भजो भगवंत जाप दरसन में चित्त धरना, कर पूजा जिनवर की अष्ट करमो का नास करना ॥ १ ॥ दूजी सार है, नमोकार मंतर

की बात पक्की, टक्या चोर सूली पै नीर में दम उसकी अटकी. हाथ जोड कर कहूँ सेठ जी, महर करो उसकी, दयांग गुरु ने मन्त्र सिखाया, याद रखी उनकी, सेठ गया जल भरने, चोर का उधर हुआ मरना, सुनो मन्त्र की साम्य देवता हुआ मो दया करना ॥ २ ॥ तीजी सार है वरत आखडी सुनो जैन मन की. चांडाल ने लई प्रतिज्ञा चवदश के दिनकी, हुक्म दिया राजा ने आपके पुत्र मारने का, चांडाल ने कही आज नहीं ऐसा होने का. गुस्सा चढा राजा को पीट दोनों की बंधवाई. उन दोनों की पोट बांध कर सागर में पटकी पटकत ही परताप इंद्र सिंहासन रच दीना, चांडाल के सिर पै राजका पुत्र छत्र करना ॥ ३ ॥ चोथीसार है सुनो जी महिमा है गंधोदक की कोढी भट श्रीपाल कुष्ट में देह गली उनकी, गंधोदक ने लगाय काया होगई कंचन की संग सात से कोढी वेदना दूर हुई उनकी, अर्ज करत 'धनलाल' अजी महाराज दरश देना, तुम बिन मेरा और नहीं कोई आन लिया सरना ॥४॥

चाल छोटी मोटी सुइयां १०२

चेतो चेतन प्यारे जी भूले हो आपा आपना ॥ टेक ॥

पुद्गल जड़ तुम चेतन ज्ञानी हो चेतन२, क्षीर नीर वत पहचान, होवे क्यों मिथ्या तापना ॥१॥ ज्ञान दृष्टि उर अंतरजोयले

तूं इसका नहीं इसको न अपना मान; लख स्वपर भेद कर स्थापना ।-२ । जड़ चेतन दोऊ एक न होवे हा २ पूर्व कृत से भ्रम आन, चहुँगत के दुख में व्यापना । ३ । करम अनादि तेरे संग लगे हैं २ कारण अज्ञान भाव, अपना ही जान गहो सम्यक दर्शन आपना ।४।धर संजम, काटो कर्म की बेडियां, २ कर अपने में आप ही अपना ध्यान मिटजाये 'जवार' संतापना । ५ ।

राग मोला १०३

चेतन अपने को जिसने जान लिया प्यारे सब जग उसने पहचान लिया ॥ टेक ॥

सर्वज्ञ हित उपदेश दाता बीतरागी है वही, अनंत दर्शन ज्ञान वीरज सुक्ख समता रूप ही, ऐसे सुगुरु वचन का श्रद्धान कियारे । १ । जीवपुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल ही सार है छहुं द्रव्य गुण पर्याय सोही संसार और व्यवहार है नहीं है इसके सिवा जग ठान लियारे ॥ २ ॥ आकाश तो अवकाश देवे कालकी परिवर्तना, धर्म चलने ठहरने में अधर्म भी सहायक वना चहुं द्रव्यों की परणति पें जब ध्यान दियारे ॥३ ॥ जानै सो सत्ता जीव बाकी पांच सब निर्जीव है, सकल ज्ञायक ईश्वर अल्पज्ञ संसारी जीव है ऐसे ईश्वर और अपने परका ज्ञान कियारे ॥ ४ ॥ पुद्गल का गुण

स्पर्श रस और गंध वर्ण ही जानिये वैभाव भाव जीव पुद्गल की क्रिया पहचानिये भूला चेतन पुद्गल को आप मान लियारे ॥५॥ वैभाव भाव अनादि से यह जीव जग में भ्रम रहा, वैभाव त्याग सुभाव सम्यक दर्श ज्ञान में रमगया, जयाम्मल संजम धर निज आतम कल्याण कियारे ॥ ६ ॥

१०४

चेती रे जी सब हाथ अथिरमय जीव चिन्यासा चेतो ॥टेक॥

देही ये नीरोगी दीपती रे प्राणी, उत्तम कुल अवतार, भूल रखो मद को क्यों रे, प्राणी हीरा सा नर भव हार । १ । काया तो माया काल वीरे प्राणी अथिर कही जिनराज, जा जिन कथा जानता रे प्राणी बादल जूं विलाया । २ । कुटंब काजके कारणे रे प्राणी पाप करया भरपूर, ऐ सब स्वारथ का सगारे प्राणी दुख में रे वेला सब दूर । ३ । क्रोध घणों जीवो नहीं रे प्राणी तातैं धर्म सम्भाल, वेर २ उपदेश दे रे प्राणी 'लालचन्द' समझाय । ४ ।

१०५

देखो भाई मतलब बात बिगारी ॥ टेक ॥

लिखे पढ़े अरु बचन कथन सब फिरे चक्र ज्यूं गाड़ी । १ ।

बिन मतलब मीठे अति बोले, निंदित चुगली चारी, जब कुछ आन पड़ रहे मतलब, तूं हो जात अनारी । २ । भोजन भाजन काम पड़े जब, सब सूं रहत अगारी, युद्ध करन अरु दान देने की नजर आवे पछारी । ३ । लडत पिता सुत और खसम त्रिया, चाहत वचन कुल्हारी, लोढ बडाई खोय बकत है छानी बात उघारी । ४ । 'जगतराम' जग जन बहु देखे कपटी कुटिल कचारी बिरले धन पर काज करत है तिन जग फांस उखारी । ५ ।

राग चरचरी भरु १०६

चेतन निज भाव रंग राचत क्यूं नाहीं ॥ टेक ॥

जबलों वसु दुष्ट कर्म तबलों होय नाही सर्म, सततैं जिन पर्म धर्म धारता भलाई ॥ १ ॥ क्रोधादि कषाय तोर मिथ्या मद मोह और द्यूतादिक सात चोर नासता चढाई ॥ २ ॥ पूजादिक सुक्रत सुक्रत वह सुपद देत संयम तसु वृद्ध हेत भावसा भलाई ॥३॥ द्वादश है व्रत प्रकार भावत अनुप्रेक्षा सार तातैं ये कर्म छार शुद्धता लहाई ॥ ४ ॥ निजमैं तूं होय लीन मगण गुण ठाण चीन सम दृष्टी भाव किना सुगुरु शिक्ष थाई ॥ ५ ॥

विहाग १०७

चेतन छाडि इन विषयन को संग ॥ टेक ॥

मृग पतंग अलि सफरी मतंग इकर इन्द्री संग, विषय लालसा वान होय के करत प्राण को भंग ॥ १ ॥ विषय कराई महा दुख दाई आठ कर्म पुन चंग. तीन लोक प्रभुता पद तेरो ताहू करत विलम्ब ॥ २ ॥ भेद विज्ञान खडग गह चेतन कर विषयन कू तंग 'सुगुरु' सहाई निकट लेयकर कर विभाव पर जंग ॥ ३ ॥

राग मल्हार १०८

सुमति कहेछे हो जिवराजी म्हारे मंदिर होता जाजो राज ॥ टेक ॥

म्हारे डेरे सात विषय रा त्यागी, वेभी बडभागी ॥ १ ॥ म्हारे मन्दिर दशलक्षण विधी खेती, सोला कारण सेती ॥२॥ म्हारे मन्दिर दया धर्म को चालो, हिंसा को मुह कालो ॥ ३ ॥ म्हारे मन्दिर तीन रत्न का धारी, वेभी समता धारी ॥४ ॥ म्हारे मन्दिर जो जो हो जिव आवे 'किश्ना' शिवपुर पावे ॥ ५ ॥

राग जंगला १०९

मुसाफिर चोकस रहियोरे, ठगलाग्या थारी लार ॥ टेक ॥

भाई बन्धु और कुटम्ब कबीला सब मतलब के यार ॥ १ ॥
घर की नारी सब से प्यारी, सोहून चाले थारी लार ॥ २ ॥
बार २ 'सतगुरु' समझावे प्रभु भजउतरो पार ॥ ३ ॥

सोरठ ११०

राज गुणारा भीना, गुरु वे हमारे कब अवलोकूं ॥ टेक ॥

सर्व त्याग वन थान विराजे राग दोष मद हीना ॥ १ ॥
तुम गुण महिमा अगम कहत हूँ, त्यारन तरन प्रवीना, सोई मम दिल बसोजी निरंतर, जगसे पार करोना ॥ २ ॥

आसावरी १११

ऐसे मुनिवर देखे वन में जाके राग दोष नहि तनमें ॥टेक॥

ग्रीषम धूप शिखर के ऊपर मगन रहे ध्यानन मैं ॥ १ ॥
चातुर्मास तरु तल ठाड़े, बून्द सहे छिन २ मैं ॥ २ ॥ सीत मास दरिया के किनारे, धीरज धारे तन मैं ॥ ३ ॥ ऐसे गुरु को नित प्रति सेऊं देत ढोक चरणन मैं ॥ ४ ॥

राग हुजाज ११२

कृपा किंकर पर जावो जी जिन अपनो विरद संभारो ॥टेक॥

मैं दुखि हूं जी अनादि काल को मेरी ओर निहारोजी ॥१॥ दुष्ट कर्म तैं वहुत दुखी हूं इन तै वेग छूडावो जी ॥ २ ॥ अब सेवग हितकार गुन गावै आवागमन निवारोजी ॥ ३ ॥

११३ धनाश्री

विन देख्यां रह्यो नहीं जाय जिनजी की लाग छवि प्यारी ॥टेर॥

सहश्र नेत्र कर मघवा निरखत, तोहु त्रपत नहि था य ॥१॥ कोडि दिवाकर कोडि निशाचर. तिन दुति तै अधि काय ॥ २ ॥ नेम दरशवा जो उर धारे, भव समुद्र तर जाय ॥ ३ ॥

११४ भैरवी

मैं तो गिरनर जाऊंगी न मानूंगी न मानूंगी ॥ टेक ॥

अहो पिता तुम हो अविचारी, ये विपरीत कहा उरधारी मेरे व्याह करन की वतियां, कहो तो मैंना करूंगी ॥ १ ॥ मेरे पिया ने दिक्षा लीनी सोही सिक्षा हमकूं दीनी, गिरनारी पे जाय सखी री संईयां संग जोग धरूंगी ॥ २ ॥ 'राजुल' कहै सुनोरी सखियां, नेम पिया की ऐसी वतियां, परमानन्द होयगो तवही कर्म शत्रु को नास करूंगी ॥ ३ ॥

११५ ठूमरी

सुनिये जिन वानी, भव आताप मिटानी ॥ टेक ॥

सुन सरधान लियो है जाने सोभा कू वरणानी ॥ १ ॥ वोध मती श्रेणिक भूपति कैं संग चेलना राणी, तिन प्रति बोध सुनी ध्वनि उनकी, गोत्र तीर्थं कर ठानी ॥ २ ॥ शिव कोटी राजा मिथ्या मत मिंदर कोड करानी । संमत भद्र मुनि नाम सुनायो राज त्याग भये ध्यानी ॥ ३ ॥ वीर हिमाचल तै निकसी गुरु गोतम कुंड ढरानी, जग जीवन कूं पार उतारो तारन तिरन वखानी ॥४॥

११६ आसावरी

कहा चढ रह्यो मान सिखापै, जांख सुर चक्री नहि धापे टेक।

पुन्य उदय दोय दाम पाय के कर रह्यो लोपा लोपे, दोय आंगल की लाकडी लेकैं जंबू द्वीप कूं नापै ॥ १ ॥ रावण सरिसा मान भंग होय नव निधि घर है जाकै ॥ २ ॥ इस जगका अब देख तमाशा, अब क्यू नैणा ढांकै । वेणी मान पहाड से उतरे सो शिव पुर कू जाचैं ॥ ३ ॥

११७

जनम सारो बातन बीत गयो रे तू तो कबहून नाम लियोरे

॥ टेक ॥

बारा वरष खेल लडकन में फिर कामण संग भयो रे । बीस वरस माया के काजे देश विदेश फिरयोरे ॥ १ ॥ तीस बरस राज ज्यों पायो बद तो लोभ नित नयो रे । सुख संपति पावा के कारण दिन दस सोच भयोरे ॥ २ ॥ सूकी चाम कमर भई टेडी अब कछु ठाट रह्योरे । बेटा वहू कह्यो नहिं माने ढोकर साठ भयो रे ॥ ३ ॥ प्रभु की भक्ति ना गुरु की सेवा ना कछु दान दियो रे । 'जगतराम' मिथ्या तन पोल्यो यमने खेंच लियो रे ॥ ४ ॥

११८ पणिहारी

भजन सम नहि काज दूजो भजन सम नहिं काजजी ॥टेक॥

धर्म अंग अनेक यामें, एक ही, सर ताजजी ॥ १ ॥ धरत जाके ढुरत पातिक, जुडत संत समाज जी । भरत पुन्य भंडार यातें मिलत सब सुख साज जी ॥ २ ॥ भव्य कूं है इष्ट ऐसो ज्यों शुध्य कूं नाज जी । कर्म ईंधन कूं अग्न सब भज जलध कूं पाजजी

॥ ३ ॥ इन्द्र जाकी करत महिमां कहो कैसी लाजजी । 'जगतराम' प्रसाद यातैं होत अविचल रामजी ॥ ४ ॥

११९ भैरवी

कारण को न स्वामी मोय समझावो ॥ टेक ॥

एक मात के, दोऊ सुत जाये, रंग रूप मैं भेद न पाये, इक चट साल पढे दोऊ मिल, एक भयो योगी एक व्यसन लुभायो ॥ १ ॥ श्रीगुरु कहत वचन सुन लीजे, दोय दशा को भेद कहीजे, आतम ध्येय एक ने कीनो, दूजो तन धन ध्येय बनायो ॥ २ ॥ इक चित चीन्ह वस्यो निज मांही, बाहर तन की कछु सुध नांही, ध्येय सिद्ध भये निरंजन, जन्म मरण दुख दूर करायो ॥ ३ ॥ दूजो तनम मैं आपा जान्यों, निशदिनतामैं भया दिवानो, 'चम्पा' राग द्वेष वश मूरख, पडनिगोद जहां बहु दुख पाया ॥ ४ ॥

१२० गजल

तिहारे ध्यान की मूरत अजब छवि को दिखाती है, विषय की वासना तजकर निजातम लौ लगाती है ॥ टेक ॥

तेरे दर्शन से हे स्वामी, लखा है रूप मैं मेरा, तजूं कब राग तन धन का ये सब मेरे विजाती है ॥ १ ॥ जगत के देव सब

देखे कोई रागी कोई द्वषी, किसी के हाथ आयुध है, किसी को नार भाती है ॥ २ ॥ जगत के देव हट ग्राही कुनय के पक्ष पाती है, तुंही है सुनय का वेत्ता, वचन तुमरे अघाती है ॥ ३ ॥ मुझे कुछ चाह नहीं जग की, यही है चाह स्वामीजी, जपूं तुम नामकी माला, जु मेरे काम आती है ॥ ४ ॥ तुम्हारी छवि निरख स्वामी निजा तम लो लगी मेरे. यही लो पार कर देगी। जो 'चम्पा' को सुहाती है ॥ ५ ॥

१२१ गजल

करो कल्याण आतम का भरोसा है नहीं दमका ॥ टेक ॥

यह काया कांचकी शीशी फूल मत देख कर इसको। छिनक में फूट जावेगी बबूंला जैसे सब नमका ॥ १ ॥ यह धन दोलत मकां मंदिर जो तूं अपने बताता है, नहीं हर्गिज कभी तेरे, छोड जंजाल इस दमका ॥ २ ॥ सुजन सुतनार पितु मादर सबहि परवार अरु आदर, खड़े सब देखते रहंगे कुंच होगा जभी दमका ॥ ३ ॥ वडी अटवी यह जग रूपी फंसे मत जान कर इस मैं, कहै 'चुन्नी' समज दिल में सितारा ज्ञान का चमका ॥ ४ ॥

जो दुष्ट लोग अपने धर्म का कुछ ख्याल न कर विधवा विवाह करना चाहते हैं उनके ज्ञान करने वास्ते एक विधवा की पुकार ।

१२२

इक बाल्य अवस्था की है विधवा कि कहानी, मा बाप ने जब उसके पुनर्व्याह की ठानी ॥ टेक ॥

पति धर्म से करने लगे जब धर्म की हानी, मुंह खोल के कहने लगी वो धर्म निशानी ॥ १ ॥ मैं रांड हूं और बाप कूं उत्साह है कैसा, स्वामी तो गये स्वर्ग मैं अब व्याह है कैसा ॥२॥ विधवा को कभी पुत्र तो जनते नहिं देखा, दुलहिन तो किसी रांड को बनते नहिं देखा, सर जायगा, पति धर्म से तब भी न मुडैंगी, जो टूट चुकी चुडीयां वो फिर ना जुडैंगी ॥ ३ ॥ जिस सर को पति धर्म के चरणों मैं था डाला, अब कौन है इस शीस का रक्षि

गूंथने वाला, ॥ ४ ॥ है कोन जिसने खूब नया वेद निकाला, जो धर्म पतिव्रत का कभी देखा न भाला ॥ ५ ॥ किस मूंह से कहूंगी नये पति मे मैं पति व्रता. जब मुझ से निभा धर्म ना पहले ही पति का ॥ ६ ॥ किस सरसे नई सास के मैं पांव पडूंगी. दिशा के समय अब क्या नये गहने पहरूंगी ॥ ७ ॥ पति धर्म हमारा है अगर हम पै सहाई, यह इन्द्र का आसन है रंडवों की चढाई ॥ ८ ॥ एक वेटी को ग्यारह जगह देते नहिं देखा, किसी दान को देकर के कहीं लेते नहिं देखा ॥ ९ ॥ संसार का सब पाप कटै नांव ही खोदो, भरवा के जहाजों में दरिया में डबोदो। १

१६३ गजल

जिन्हो का लक्ष है आतम वही पर मात्मा होंगे, निरंतर लौ लगी निज मे वही धर्मात्मा होंगे ॥ टेक ॥

जिन्हो का लक्ष है पर धन, वही तस्कर कहाते हैं ; बसे चितमांहि पर नारी, वही अधमात्मा होंगे ॥ १ ॥ खेलते गंज फा सतरंज, वही ज्वारी कहाते हैं । पराये प्राण हरते हैं, वही पापात्मा होंगे ॥ २ ॥ नगर की नारि मैं चित धर भखैं मद मांस मूरख जे । लगया लक्ष इन मैं जो वही नर खातमा होंगे ॥ ३ ॥ निशाना जिनका जैसा है व्यसन वैसा ही होता है । जिन्हो का लक्ष जिन-

वर है वही परमात्मा होंगे ॥ ४ ॥ भविक जन लक्ष आतम का जो तुम क्यों नहिं लगाते हो। लगाते जो नहीं 'चम्पा' वही वहि रात्मा होंगे ॥ ५ ॥

१२४ मंगला चरण

प्रभु प्राणाधार सुखदातार, दुख निवार आ संसार थी जरा ॥ टेक ॥

मुक्ति तैं सुख दूरथा तैं हर लिया तैं वर लिया नजर मुज पर करीन शिव आपो जरा ॥ १ ॥ आ तुम गुन महिमा सब मुख वरता, सुरनर मिलकर जय २ करता, सिवकर दुख हर, सुख करता करता, हरंता, भवपार, जिनवर, दिलधर, सब मिल भजकर भव तिरता ॥ २ ॥

१२५ बधाई

गोवारी बधाईयां हो, समद विजयजी के द्वार ॥ टेक ॥

जाया सुत सोहना हो मनडा मोहना सुखकार, आई सब नारियां हो, सज २ अंग भूषण सार, हिल मिल गाईयां हो, सब घर आज मंगलाचार, गुणी जन सब ही आये, वाह वाह, बधाई गावत धाये, वाह वाह सबै मिलि, आनंद भारी, वाह वाह, नचे सब

दे दे तारी, वाह वाह, वजै वहु भांतिन वाजा, वाह वाह, सुनत कानन सुख साजा, वाह वाह, समय यो देख्यो भारी, वाह वाह, हर्ष सब पुर में भारी, वाह वाह, लख लख रुप जिनका हो, हरखे सकलपुर नर नार ॥ १ ॥ नृपने दान देके हो जाचक किये शकल निहाल, अपनी माल पहनाई, दीने वस्त्र वहुधन सार, सबै जादव मिलि आये वाह वाह, देखता मन हर्षा ये वाह वाह, आजका दिन सुख कारी वाह वाह, धन्य सेव्यादे नारी वाह वाह, नेम जिन जीवो तेरा, वाह वाह, जगत में सुख कर डेरा वाह वाह, दर्शनित्त उनका कीजे, वाह वाह, निरख नैन न सुख लीजे, वाह वाह, हितकर गाईयां हो, प्रगटे मोक्ष के दातार ॥ २ ॥

१२६ बधाई

मोरी हाली आज बधाई गाईयां ॥ टेक ॥

विमला देवी बेटो जायो श्री श्रेयांस मन नांव धरायो, सब ही के मन भाइयां सो मेरी आली ॥ १ ॥ इन्द्र सखी मिल नाचत गावत, तबलग २ मृदंग बजावत, गुगरू ताल मजीरा बाजे, ताल देत हैं विविध भांति की, सब ही के मन भाईयां सो मेरी हाली ॥ २ ॥ विमल राय राजा घर बाजत बधाइयां, वाह वा जी वाह वा, आये हैं गुनी सब गावन बधाईयां, वाह वा जी वाह

वा, बाजत ताल मृदंग नौपत सनाईयां, वाह वा जी वाह वा, दान दियो राजा श्रेयांस मन भइयां, वाह वा जी वाह वा, सो मोरी हाली ॥ ३ ॥

१२९ राग जंगला

रंग बधाईयां सुन सखि ये सेवा सुत जाईयां भला वे आज
बाजै छ बधाईयां ॥ टेक ॥

सब सखियन मिल मंगल गावेजी, दे दे ताल सवाईयां ॥१॥ नर नारी मिल चौक पुरावे, मन में हरप सवाईयां ॥ २ ॥ ऐरावत हस्ती सजि कर कैं, तापर प्रभू को पधराईयां ॥ ३ ॥ मेरू शिखर ले जाय प्रभू कूं, मघवा कलश ढुराईयां ॥ ४ ॥ पूंछ श्रंगार कियो सचियन ने, निरखत अंगनवाईयां ॥ ५ ॥ नेम नाम धरि सौंप नृपति को, तांडव नृत्य कराईयां ॥ ६ ॥ जन्म कल्याणक उत्सव करि कैं, इन्द्र स्वर्ग कूं जाईयां ॥ ७ ॥ अब 'सेवग' हितकर गुन गावे, जामन मरन मिटाईयां ॥ ८ ॥

१२९ बधाई

अजि वे भयोरी मेरे आज सफल दिन वामा देवी नैं पुत्र
जायो री ॥ टेक ॥

घर २ मंगलाचार हुयो है, तीन लोक सुख पायो री ॥ १ ॥ नगर बनारस थाने नूरा, पारस नाम धरायो री ॥२॥ अश्वसेन राजा के नन्दन, 'लालचन्द' जस गायोरी ॥ ३ ॥

१२९ लावणी

मेरे सनम से यूंजा कहियो क्या हमने तकसीर करी ॥ टेक ॥

तुमको है गी खसम हमारी, किस तुम पैं यह बोली मारी, किस कारण तुम दीक्षा धारी । मुझे उतारो पार मेरे भरतार क मझधारा में परी ॥ १ ॥ चारित्र देख रंग में भीनों, पशु छुडावन को मिस लीनो, सो किन मुक्ति नें वस कीनों । लोग वतावे जोग मुक्ति का भोग, क तृष्णा क्यों ना मरी ॥ २ । पूरी भई तुम्हारी शिक्षा, तुम कीनी पशुवन की रक्षा, हमको भी प्रभू दीजो दीक्षा । तुम हो दीन दयाल, करो प्रति पाल, क मुझपर विपत परी । ३ ॥ 'नैनसुख' प्रभू दास तिहारा, करो प्रभू मेरा निस्तारा, यह दुनियां है ढुंध पसारा। दिया जग्त कूं छोडि, गये मुख मोडि, विधाता कैसी करी ॥ ४ ।

१३० राग मांड

सुज्ञानी डाजी हालो मंदिर चालो म्हाका राज ॥ टेक ॥

मंदिर चालो दरसन करिज्यो, छवियां निरखो जी राज । दरसन कर के पूजा करिज्यो, द्रव्य चढावो जी राज ॥ १ ॥ अर्घ उतारो पाठ पढो थे, सांति करो जी राज, सुमति कहे छै 'संपत' आवो. सब सुख पावो राज ॥ २ ॥

१३१ मांड

म्हारा चेतन ज्ञानी घणों ही भरमायो अबघर आय ॥टेक ॥

निगोद वासतैं वसकैं आयारे, जांका रे दुख को न पार ॥ १ ॥ कोई एक पुन्य संजोग तेरे नर भव पायो छै आय, अब के भी चेतै नहीं रे गहरो गोत्या खाय ॥ २ ॥ दान शील तप भावना रे, यह धारो उर माहि, शिवपुर मारग च्यार है रे श्री गुरू दिया रे बताय ॥ ३ ॥ घर तो भूल्यो आपणो रे तू ढूंडै पर रूप, कोलू केला बैल जूं रे, दुख पावे बहु कूप ॥ ४ ॥ जिन वाणी रुचि से सुणोरे 'संपत' समझो भाव, वाणी के परसाद सै रे, सीधो शिवपुर जाय ॥ ५ ॥

१३२ झंझोटी

जिनराज शरण म्हानें लीज्यो म्हारा सब दुख दूर करीजो
जी ॥ टेक ॥

मैं दुख पायो बहु भारी, तुम सूं कहुं अब मैं सारीजी ॥ १ ॥
चारूं गति मैं अति लटक्यो, करमन के संग बहु भटक्योजी ॥ २ ॥
म्हारा दुख की सब तुम जानों, तुम सों कछू नहीं छानों जी
॥ ३ ॥ 'संपत' की अर्ज सुनीज्यो, मनैं चरणा संग रखिज्यो
जी ॥ ४ ॥

१३३ मांड

प्यारो म्हानें लागें हे मां मुनीवर भेप ॥ टेक ॥

छहूं काय जीवन के रक्षक, देत धर्म उपदेश ॥ १ ॥ ध्याना
रूढ विराजत वन में, ध्यावत सुर नर सेस ॥ २ ॥ ऐसे गुरू तो
मन बच तन कर, काटत करम कलेश ॥ ३ ॥

१३४ लावणी सूमलक्ष्मी की

सूम लक्ष्मी दोनों का झगडा सुन जो पंचोंचित्त लगाय,
कहती लक्ष्मी सूम से ना खाई ना खरची जाय ॥ टेक ॥

कहता सूम तूं सुन वे लक्ष्मी तुझे कभी नहिं जाणे दूं, खाड़ा खोदकर रखूं तेरे कूं नहिं खरचूं नहिं खाणेदूं, जोगी जंगम आवे मांगणे नहीं मूठी भर दाणें दूं, बाजार में से कभी पैसे की चीज नहीं लाणे दूं, ऐसी जुगत सौं रखू तेरे कूं तू भी जाणे रखी छिपाय, सुनो सामले सूम से ना खाहि न खरची जाय ॥ १ ॥ कहती लक्ष्मी सुनो सूमजी तुम पापी मूरख नादान, नागन बन के जाय गिरुं फिरती नाले २ के मान, जो कोई प्रभु की भक्ति करैं साधुवों को देय जो पुन्य और दान, वहां जाऊंगी जहां पर बचते हैंगे शास्त्र पुरान, तूं पापी चांडाल सूम तेरे से कछुनहिं धरम दिवाय, सुनो सामले सूम सेना खाई ना खरची जाय ॥२॥ कहता सूम तूं सुनवे लक्ष्मी तूं पापनि है हत्यारी, दोलत खातर बहन पर मारी भाई २ में कटियारी, भाई २ में शीश कटावे वेटा वाप से लडतारी, तेरे वासतैं विचारे केई करें चरखा दारी, किसे हंसावे किसे रुलावे, किस के शीश दिये कटवाय, सुनो सामले सूम से ना खाई ना खरची जाय ॥ ३ ॥ कहती लक्ष्मी सुनो सूम तुझे ऊंधे मुख से लटकावे, वन आवे जो करो पुन्य फिर क्यों नाहक गोता खावे, कोरडा खैंच कर जम फट कारे वहां जो तुम को ले जावे, भाई बंधु और कुटम्ब कबीला कोई नहीं आडा आवे, धर्म मोक्ष का पंथ धर्म से तिरगये साधु ओर मुनिराज, सुनो सामले सुम से ना खाई ना खरजी जाय ॥ ४ ॥

१३५ लावणी सात व्यसन की

सुन सात व्यसन का सरूप न्यारा २। इनके त्यागे विन नहिं
होगा निसतारा ॥ टेक ॥

यह जुवा सब विसनों मैं महा अन्याई, इसका जु खेल इस-
पर भव मैं दुखदाई। राजा दे दण्ड अरु काढ़े मात पितु भाई,
ज्वारी की कोई नहीं कर सकता है सहाई, यह व्यसन नर्क पांडव
ने लिया दुख भारा ॥ १ ॥ यह मांस मद्द अति निन्द भव्य जिव
जानां, इक कन मैं अनंता जीव बहुत बखाना, निर्दई है जिसके
हाथ जीव हत्याना, कूकर वायस ग्रध चील दुष्ट का खाना। धृक
है जिसके मत में यह लीन उचारा ॥ २ ॥ मद्द पानी के पिये
आतमा का ज्ञान हरता है, दरशन ज्ञानादिक गुन का मूल झडता
है। मिष्टादिक भोजन कूं लर लर मरता है, माता भग्नि पे कुदृष्टि
क्यों धरता है। मद्द पी के आप अपने को ठिगे गंवारा ॥ ३ ॥
वेश्या ने धन के कारण प्रीति बखानी, नीचन के संग रमति है नाहि
ग्लानी। मद्द मांस खाय नीचन की राल पिलानी, जिन धर्म विना
कहो कैसी है जिन्दगानी। नर्कों में पुतली के स्पर्शा वे प्यारा
॥ ४ ॥ यह पहले ही भय भीत है मृग बन चारी, नहीं कहै
पराये दोष त्रिणा अहारी, नहिं पास नहीं एक देह मात्र के धारी,
सब वनचर जीवन माहि दोष पर हारी। आहारे दुष्ट ते क्यों

परिहार विचारा ॥ ५ ॥ चोरी के करने वाले दुख पाते हैं, राजा के सामने पांव कटा आते हैं। प्राणों से प्यारे धन को हर लाते हैं, खोटे मारग से नर्कादिक जाते हैं। नहिं मात तात सुत भाई का पतिआरा ॥ ६ ॥ पर नारि पे जिसने कुदृष्टि दीनी है, उसने कलंक की पोट बांध लीनी है। जिसके बस रावण ने दुर्गति लीनी है, धिक है जिनको तिननीच दृष्टि कीनी है। कह 'मोहन' इनको तजो जैन ज्ञाता रे ॥ ७ ॥

१३६ डिगरी चेतन को राग ख्याल मे

मुकती जाने की डिगरी दीजिये जिन शासन नायक मेरी
अदालत प्रभुजी कीजिये ॥ टेक ॥

खुद चेतन मुद्दै बना है, आठो कर्म मुद्दाय ले, दावा रस्ता मोक्ष मार्ग का, धोका देकर टालाजी ॥ १ ॥ तप कागज इष्टाम लिया तलवाने क्षमा विचारी, सुगन ध्यान मजमून बनाकर अरजी आन गुजारीजी ॥ २ ॥ मैं जाता था मोक्ष मार्ग कू कर्मों ने आ घेरा, धोका देकर राह भुलाई लूट लिया सब डेरा जी ॥ ३ ॥ बहुत खराब किया कर्मों ने चोरासी के माहीं, दुख अनंता पाया मैंने ताको पार कछु नाहीं जी ॥ ४ ॥ सच्चे मिले वकील कानूनी पंच महाव्रत धारी, व्रत धर सूत्र मसोदा कीनां जब मैं अरजी डारीजी ॥ ५ ॥ पांचू सुमति तीनों गुपति आठों गवा बुलावो, शील अरे

सर बढ़ा चोधरी उन कूं पूंछ मंगाओजी ॥ ६ ॥ अरजी गुजरी चेतन तेरी हुवा सपीना जारी. हाजिर आवो जबाब लिखावो ल्यावो सबूती सारीजी ॥ ७ ॥ अष्ट मुदायले हाजिर आये मोह मुक्त्यार बुलाये, चार कषाय और आठों मद को साथ गवाई ल्यायेजी ॥ ८ ॥

टेर फिरी

झूंटा दावा है चेतन जीव का जिन शासन नायक ॥ टेक ॥ हमने नहीं बहकाया इनकूं यह मेरे घर आया, करजा लेकर हम से खाया अब ये फरेब मचायाजी ॥ ६ ॥ विषय भोग में रमरह्या चेतन घाटा नफा न जाना, करजदार लारै जब लाग्या तब लाग्या पछतानाजी १० ॥ हाजर खडे जो गवा हमारे पूंछिये हाल जु सारा विना लिया करजा चेतन का कैसे करूं किनारा जी ॥ ११ ॥ मैं चेतन अनाथ प्रभूजी करम फरेबी भारी, जीव अनंता राह चलन कूं लूट चोरासी में डारीजी ॥ १२ ॥ जिन शासन नायक मेरी अदालत प्रभु जी कीजिये। चेतन कहो सितावी मांही सुन शासन सिरदार, इमानदार है गवा हमारे जाने सब संसार जी ॥ १३ ॥ जिनशासन नायक झूँटा दावा है चेतन जीवका बडे२ इन पंडित लूटे ऐसा भ्रम बतलाया, धर्म कह कर पाप कराया ऐसा करज बढाया जी ॥ १४ ॥ हिंसा मांही धरम बताया तपस्या सेतो डिगिया ।

इन्द्री सुख मैं मगन कराया ऐसा जाल फँसाया, ॥ १५ ॥ ऐसा इन्साफ करो तुम प्रभुजी अपील करण नहीं पावे, हकरेसी चेतन की होवै जनम मरण मिट जावेजी ॥ १६ ॥ ज्ञान दर्शन नैं करी मुन्सफी दोन्यूं कूं समझाया, चेतन की डिगरी कर दीनी करमों का करज मिटाया जी ॥१७॥ असल करज था जो करमों का चेतन सेती दिलाया, शुद्ध संजम नैं करी जमानत आगै का फंद मिटाया जी ॥ १८ ॥ आश्रव छोड संजम कू धारो तपस्या से चित ल्यावो, जलदी करज अदा कर चेतन सीधा मोक्ष मैं जावोजी ॥ १९ ॥ शुद्ध संजम नैं करी जमानत चेतन डिगरी पाई, फागुण सुदी दशमी दिन मंगल सम्वत उनीस अठाई जी ॥ २० ॥

१३७

नगन दिगम्बर मुन्नो हितकारी लो, मुनी हितकारी जी या साधु उपकारी लो ॥ टेक ॥

दसहुं दिशा वस्त्र धारी, काया की कीन्ही कोटारी, पंच महा व्रत धारी, तो रिषी जैन लो, ॥ १ ॥ पंच सुमती कों साधे, तीनों गुप्ती आराधे, उडंड अहार लेत क्रिया रीति सारी लो, ॥ २ ॥ बाईस परीषह सहै, अष्ट कर्मों को दहैं, अटाईस मुल गुरग, धारी रिषि राज लो, ॥ ३ ॥ शत्रु मित्र समजाने, नहीं राग द्वेष जाने, 'प्यारेचंद्र' असे मुनी वरी शिव नारी लो ॥ ४ ॥

१४० राग बधाई

होवै राजतिलक रघुवर को केकई यूं उठ ललकारी यूं उठ ललकारी मति मारी राजा दशरथ की दुहाई दे पुकारी वचन हमारा अब पूरा कीजो स्वामी मत बनो धर्म हारी ॥ टेक ॥

तुम स्वामी रावन से छिपके जनक संग, फिरते विदेश में बनाय भेष बुरे ढंग, मेरा था स्वयंवर जहां आये थे हजारों राजा, बड़े २ वंशन के आये राजा महाराजा, आप भी पधारे थे अखाड़े से खड़े थे बाहर, सब को बिसार मैं बनाये तुमको भरतार, जल गये नृप धर धीर खडे सब वीर जहां पर मचा जंग भारी ॥ १ ॥ मारा गया सारथी तुमारा तुम जानो सारी, घेर लिया जोद्धों ने आके तुमको एक वारी मैंने रथ हांका था वहां आपका हुकम पाय, चुग २ के जोधों के छाती पैं चढी थी जाय, रण को फते तुम किया, मुझे वर दिया, मांगले मन वांछित प्यारी ॥ २ ॥ मांगैगी सो दूंगा दान, राखूंगा मैं तेरा मान, भाखी तुम मोसूं भगवान चित्त धार के, वचन न विसरो स्वामी चंदन को डारो कारो काजर उपार के, कहो कलंक को तिलक रघुवीरजी के कहो हम चलैं धरम निज हारके । सुन समस्या करी महल पर चढी राजा दशरथ नैं सुनी सारी ॥ ३ ॥ राजा नैं हुकम दिया खूब तैं दिलाई याद मांगले

जो इच्छा होय शंका नहिं करणी, टर जावो पांचों मेरु टर जावो चंद सूर्य वचन टरना चाहे टर जावो धरनी, बोली राम को देवो काड भरत को देवो राज राजा का कतर लिया हिया जूं कतरणी, 'दग'सुख नृप कर हाय पड़े चकराय करमगत टरे न भाई टारी ॥४॥

१४१ विहाग

जोगी कैसा ध्यान धरा है ॥ टेक ॥

नग्न रूप दोउ भुजा झुलाये नासा दृष्टि धरी है ॥१॥ बाहर तन मलीन सा दीसत अंतरंग उजला है। विषय कषाय त्याग धर धीरज करमन रंग भरा है ॥ २ ॥ क्षुधात्रसा परीषह सबजे आतम रंग भरा है। 'जगतराम' लख धन्य साधु को नमो नमो उचरा है ॥ ३ ॥

१४२

जिनवर गिरपर चढकर तपकर ध्यान लगाये कर्म जलाये ॥ टेक ॥

गिरवर पैं जाचढे करमों से यूं लड़े, जब ज्ञान उपाये जनम मरण मिटाये। १। दुनियां के देव सब देखैं बगोर तब, जब निश्चय मैं लाये, निर्दोष ये पाये। २। मद क्रोध लोभ मान, जग

झूटा सारा जान, वे वोध बताये, निशान निटाये । ३ । जो चाहे भव तरन तो लेवो प्रभु शरन आठों करम जलाये, सीधा मोक्ष मैं जाये ॥ ४ ॥

१९३ राग बधाई

गई मात केकई राम चंद्र पैं भरत को ले वनमें, भरत को लेगई केकई वन में, अति लज्जित भई सब ही जन में चलो पुत्र तुमकरो राज मत जावोजी अटावनमें ॥टेक॥

एक तो मैं नारी भई दुजे मति मारी गई, तीजे गद्दी थारी गई छाती मेरी धड़की जगतमें ख्वारी भई रही सही सारी गई तुम चले राजा गये रहीना किधरकी, भरत तो वैरागी वो धरम अनुरागी रहै, राज सेन काज करै कोन रक्षा घरकी । तुमेरा निकास भयो मेरा मुहं कारा भयो, चलकैं उजारा करोमाफ करो बरकी, दिल मैं धरो मत खोट, चलो सुत लोट, भरत तेरी कर आस मनमैं ॥१॥ सुन श्री राम उठ माता से प्रणाम कियो, भरत पुचकार उठ छाती से लगायो है, मेरे नहिं वैरभाव, तोहि मैंने कियो राव, पिताको वचन पाल्यो धरम मैं गायो है । आऊंगा मैं तेरे पास, राखो मन विश्वास, सरस से भरत को बनमैं विठायो है, सिर पे मुकट धर माथे पर तिलक कर चँवरछत्र धर धोसा दिलवायो है, सुनलो

सब उमराव गरीब अमीर हो सब राम के चरनन में ॥ २ ॥ विदा किये नरनाथ चलदिये रघुनाथ नाथ पाछें आप बिच जानकी को लई है जैजै कार धुन भई, सब ने आसीस दई उठ २ देखें प्रजा वावरी सी भई है, नगरी में आया राजा प्रवेश कियो रामचंद्र वनमें, प्रजा पछताय रही है, हा हारे करमंतरी महिमा अगमपार अतिही विचित्र गत जायना कही है, छिन में छत्र धरे छिनक में फेंके डार विजन वनमें ॥ ३ ॥ कांधले नगर का निवासी हूं शहरका में 'नैनसुख' दास नाम कविता के कथन का, भजन विलास ऐक किया परकास हम गावत खलक सब हमरे भजनको जैसो जाके भाव अरु जैसो मन चाव जाके तैसो ही बनाय लियो अपने कथन को, त्योंही दमदाया छंद देख के प्रबंध कियो जैसे गये रामचंद्र लछमन बनको। सुनो भव्य धरमाव करो उच्छाव सुनै यह जहां तहां संतन में ॥४॥

१२४ राग बरवा

अपना कोई नहीं छैजी जगत का झूठा है व्यवहार ॥ टेक ॥

माता कहै यह पुत्र हमारा, पिता कहै सुत मेरा । भाई कहै यह भुजा हमारी, त्रिया कहै पति मेरा । १ । माता न्हाती घरके द्वारे, त्रिया न्हाती खूंणे । भाई भतीजा सुख का सीरी हंस अकेला धूंणे । २ । ऊंचे महल सुभट दरवाजे, भांत २ की टाटी, आतम

राम अकेलो जासी पड़ी रहैगी माटी । ३ । घर में तिरिया रोवण लागी, जोड़ी बिछड़न लागी । 'चन्द्रकृष्ण' कहै परभव जाता संग चलै नहिं लागी । ४ ।

१४५ राग बरवा

ऐसी चोसर जोनर खेले मोही चतुर खिलारिरे ॥ टेक ॥

तीनरत्न हिरदा में धारो, चार तजो दुख दाईरे । पंजड़ी पड़ी तजो विषयन को छकडी दया विचारोरे । १ । पांच दोय संजम ही विचारो, पांच तीन मद टारो रे । नवधा भक्ति छह तीन संभालो धरम छै चार विचारोरे । २ । ग्यारह प्रतिमा इनको धारो, द्वादश वृत्त सिण गारोरे, पो बारा चारित्र संभालो, चवदहगुण थान धारोरे । ३ । पंद्रा तो परमद विडारो सोला कारण धारोरे । सतरा नेम धरम वृत पालो अठारह दोष निवारोरे ॥ ४ ॥ या बाजी आनंद हित कारी आवागमन निवारोरे । जामन मरण मेटो जग नायक मैं छूं शरण तिहारीरे ॥ ५ ॥

१४६ सोरठ

अरे इस दम का क्या है भरोसा आया आया आया न आया ॥ टेक ॥

जैसे रत्न उदधिके मांहि पाया पाया पाया न पाया ॥ १ ॥

जैसे बाल उदरके मांही जाया जाया जाया न जाया ॥ २ ॥ जैसे ग्रास हात के मांही खाया खाया खाया न खाया ॥ ३ ॥ 'रुपचन्द' अब नाम प्रभू का बिना भक्ति मन भाया न भाया ॥ ४ ॥

१४७ धनाश्री

करम गति श्री मुनिराज हरै ॥ टेक ॥

ऐकाकी निरजन वन वासी, समता चित्त धरै । छोड सु अंबर होय दिम्बर अदया देखडरै ॥ १ ॥ निर्मल अंग अचल एकासन नित प्रति नेम धरै तन थिर कायें असन थिर वंर्जित ठाड़े उदर भरै ॥ २ ॥ अनसन तप बारह विध ठानै, निज तन मत्त हरै बाईस भांत परीषह जीती तौर आप तिरै ॥ ३ ॥ इह विधि वसु छत्र चन्द्र प्रकृति हरि जो मुनि मुक्ति वरै, दोने 'मित्र' तिन के पद वंदत श्री जिन दुख हरै ॥ ४ ॥

१४८ राग झंझोटी

श्री मुनिवरजी जोग लियोजी वन में ॥ टेक ॥

ध्याना रुढ विराजत वनमेंजी, मोन धार मनमें । १ । द्वाविंपत तन सहत परिषा, मोह न राख्यो तनमें । २ । दास 'विहारी' वन साधूजी, जाय विराजे वनमें । ३ ।

१४९ ख्याल बरवा

सुनो प्रभु नेम नाथ म्हारि बात मै तो भवदधि में थांकी साथ ॥ टेक ॥

जादू कुल का मंडन प्रभुजी, सब जीवन श्रीमूल, मेरे कानी दृष्ठि जोड के कैसे गये मुझ मूल ॥ १ ॥ पशुवन कारण जोग धर्यो तुम करुणा भाव समाल, हिरदा में किल्यां कर सुण कर दया भाव चित धार ॥ २ तोड्या कांकण डोरडा तोड्या नवसर हार, यो संसार असार जान कर जाय चढे गिर नार ॥ ३ ॥ 'राजुल' अर्ज करै कर जोडै नव भव की मैं लार । संपत बारंबार बीनवै दश भव राखो लार ॥ ४ ॥

१५० सोरठ

मानुष गति निव्वां मिली छै आय ॥ टेक ॥

काकताल किधों अंध बटेरी, उपमा कोन बनाय ॥ १ ॥ पूरण त्रिपत सही नरक गति मांही, ज्ञान पशु नाहि पाय, देव ऊंच पद हूं में जावे कँहि उपजूं नर आय ॥ २ ॥ यह गति दान महा तप कारण अजर अमर पद दाय, सोही भोग विषय में खोवै अमृत तज विष खाय ॥ ३ ॥ जल अंजुलि ज्यों आयु घटत है करले वेग

जैसे बाल उदरके मांही जाया जाया जाया न जाया ॥ २ ॥ जैसे ग्रास हात के मांही खाया खाया खाया न खाया ॥ ३ ॥ 'रूपचन्द' अब नाम प्रभू का विना भक्ति मन भाया न भाया ॥ ४ ॥

१४७ धनाश्री

करम गति श्री मुनिराज हरैं ॥ टेक ॥

ऐकाकी निरजन वन वासी, समता चित्त धरै । छांड सु अंबर होय दिम्बर अदया देखडरै ॥ १ ॥ निर्मल अंग अचल एकासन नित प्रति नेम धरै तन थिर कार्य असन थिर वर्जित ठाड़े उदर भरै ॥ २ ॥ अनसंन तप बारह विध ठानै, निज तन मत्त हरै बाईस भांत परीषह जीती तौर आप तिरै ॥ ३ ॥ इह विधि वसु छव चन्द्र प्रकृति हरि जो मुनि मुक्ति वरै, दोने 'मित्र' तिन के पद वंदत श्री जिन दुख हरै ॥ ४ ॥

१४८ राग झंझोटी

श्री मुनिवरजी जोग लियोजी वन मैं ॥ टेक ॥

ध्याना रुढ विराजत वनमैंजी, मोन धार मनमैं । १ । छाविपत तन सहत परिषा, मोह न राख्यो तनमैं । २ । दास 'विहारी' धन धैं साधूजी, जाय विराजे वनमैं । ३ ।

१४९ ख्याल बरवा

सुनो प्रभु नेम नाथ म्हारि बात मैं तो भवदधि में थांकी
साथ ॥ टेक ॥

जादू कुल का मंडन प्रभुजी, सब जीवन श्रीमूल, मेरे कानी दृष्टि जोड के कैसे गये मुक्त मूल ॥ १ ॥ पशुवन कारण जोग धर्यो तुम करुणा भाव समाल, हिरदा में किल्यां कर सुण कर दया भाव चित धार ॥ २ तोड्या कांकण डोरडा तोड्या नवसर हार, यो संसार असार जान कर जाय चढे गिर नार ॥ ३ ॥ 'राजुल' अर्ज करै कर जोडै नव भव की मैं लार । संपत वारंवार बीनवै दश भव राखो लार ॥ ४ ॥

१५० सोरठ

मानुष गति निठ्यां मिली छै आय ॥ टेक ॥

काकताल किधों अंध वटेरी, उपमा कोन बनाय ॥ १ ॥ पूरण विपत सही नरक गति मांही, ज्ञान पशु नहि पाय, देव ऊंच पद हू में जाचे कँहि उपजूं नर आय ॥ २ ॥ यह गति दान महा तप कारण अजर अमर पद दाय, सोही भोग विषय में खोवै अमृत तज विष खाय ॥ ३ ॥ जल अंजुलि ज्यों आयु घटत है करले वेग

उपाय, 'बुधजन' वार वार कहत है शठ सुनांहि वनाय ॥ ४ ॥

१५१

इक दिल की चस्म खोल जिनागम से मन लगा आगाध निजानंद जग मैं होतना सगा ॥ टेक ॥

परमाद को विगाड स्याद्वाद मैं पगा, मतलब उसीका होयगा विभाव जिन तगा ॥ १ ॥ सूता अनादि कालका मिथ्यात से जगा सम्यक्त शुद्ध जन्म है सो मुक्ति का जगा ॥ २ ॥ सत गुरु जोगी पाय परख तीन सुध नगा। निज दृष्टि से विचार मुग्म रस चखा ॥ ३ ॥ इन्द्र चन्द्र और फणिन्द्र नरपती खगा। जिन वचन है सो मित्र है और सर्व है दगा ॥ ४ ॥ कुटम्ब का सब खेल इन्द्र जाल का वगा, जिन वसजो करें तो पावें सिधु भव तगा ॥ ५ ॥

१५२ राग रसिया

अब मोहे जानपरी दुनियां मतलबकी गरजी ॥ टेक ॥

हरया वृक्ष पर पक्षी बैठा रटता नाम हरी। प्रात भये पक्षी उड जावे, जग की रीत खरी ॥ १ ॥ जब लग बैल वहै बनियां को, तब लग चाह घनी। थक्यां बैल को कोइ न पूछे फिरतो गली गली ॥ २ ॥ सब बांध सती संगवाली मोह के फंद परी। 'शान्त'

कहत प्रभुना सुमरी मुरदा संग जली ॥ ३ ॥

१५३ बरवा

गाफिल हुवा कहां तूं डोलै दिन जाते हैं भरती मैं रे ॥टेक॥

चोकस करा रहत है नांही, ज्यूं अंजुलि जल झरती मैं रे तैसे तेरी आयु घटत है । बचैन बिरिया मरती मैं रे ॥ १ ॥ कंठ दबै जब नांहि बनेगी करले कारज सरती मैं रे, फिर पछतांयां होत क्या है कूप खुदे नहि जलती मै रे ॥ २ ॥ मानुष भव श्रावक कुल उत्तम कठिन मिल्या है धरती मैं रे । 'बुधजन' भव दधि चढ कै उतरो सम्यक नोका तरती मै रे ॥ ३ ॥

१५४ राग जंगला

काल अचानक लेहि जायगा गाफिल होकर रहना क्या रे ॥ टेक ॥

छिन हू तोकूं नांहि बचावै तो सुभटन का रखना क्यारे ॥ १ ॥ रंच सवाद करन के काजै, नरकन में दुख भरना क्यारे । कुल जन पथिकन के हित काजै जगत जाल मै परना क्यारे ॥२॥ इन्द्रादिक कोऊन बचैया और लोक का शरणा क्या रे । निश्चय हुआ जगत में मरना कष्ट पडे जब डरना क्या रे ॥ ३ ॥ अपना

ध्यान करत स्थिरता है तो करगन का हरना क्यारे । अब हित कर आलस तज 'बुधजन' जन्म २ में मग्ना क्यारे । ४ ॥

१५५ राग गण गोर

मन थानै नहिं जावाद्यांजी कुसंग, थानैं राखां सहेल्यां के मांहि ॥ टेक ॥

कुमति संग लागतां मनावीत्यो छै काल अनादि । उत्तम नर भव पाय अब क्यों खोवो छो वाद ॥ १ । या सहेली में पठन श्रवण हैं श्रुतस्कंध उरधार, याही रुचि से पार पडोगे भवदधि उतरो पार ॥ २ ॥ जो मानो तो सीख भली हैं 'संपत' छोडो वान, सुमति की संग गच्यो माचो जो चाहो कल्यान ॥ ३ ॥

१५६ विहाग

जिया तैं दुख से काय डरैं रे ॥ टेक ॥

पहली पाप करत नहिं संक्यो, अब क्यौ सांस भरे ॥ १ ॥ करम भोग भुगत्यां छूटैगा, सिथिल भयां न सरे । धीरज धार मार मन ममता ज्यों सब काज सरे ॥ २ ॥ करत दीनता जन जन आगै कोई यन सहाय करे । 'धरम पाल' कहै सुमरो जगत पति वे सब विपत हरे ॥ ३ ॥

१५७ ठूमरी

किया तैं क्या नर भव पाके समझ २ नादान ॥ टेक ॥

महा अशुचि मल मुत्र लपेट्यारहा गर्भ मांके । बीत गये नव मास पडा जब धरती पै आके ॥ १ ॥ बालापन लडकन मैं खोयो चित हित हुलसा के । रतन अमोलक खोय दिया धोके मैं लुढ का के ॥ २ ॥ तरुण भयो उन्मत्त नशे मैं माया काया के । वृद्ध समय गुन ज्ञान हरा तृष्णाने भरमा के ॥ ३ ॥ तीनों पन तैं खोय दिये विषयों मैं चित लाके । नफा हुआ नहि रंच गांठ सेचला दाम खाके ॥ ४ ॥ अब चेते क्या होयं काल जब आया मुह बाके। 'नंदलाल' यूं कहै सबों से आपा समझा के ॥ ५ ॥

१५८

नहीं किसी की चली जवानी हो प्राणी यह कालबली टेक।

जिन की तिरछी तनक निजर तैं, कोटिक सूर दीनता धरते सूर जिनो से डरे वे भी तो मरे खाक मै खाक रली ॥ १ ॥ कहां भीम अर्जुन हगधारी, कहां कीचक से योद्धा भारी, कहां नील हनु-मन्त बडे बल वन्त कहां दश कंध अली । २ । क्या निर्धन धन वन्त विख्याता, क्या मूरख क्या पंडित ज्ञाता, क्या जोगी क्या

जती, सती सुभ मती सा धुक्या संत अली ॥ ३ ॥ राग द्वेष परणति तजदीजे, मानुष भव का लाहा लीजे. चल वसो कहै 'नंदलाल' जहां नहिकाल अमर रहै मोक्ष थली ॥ ४ ॥

१५९

मनवा जगत चल्यो जायरे ॥ टेक ॥

यो संसार ओस को पानी ज्यों वादल विच छायरे ॥ १ ॥
तन धन जोवन अथिर अनादिं को, क्यूं राख्यो अपणायरे ॥ २ ॥
सब कुटम्बी स्वारथ के सीरी, विन स्वारथ दुख दायरे ॥ ३ ॥
अैसी जान भजो नित साहव 'लाल' कहै समझायरे । ४ ॥

१६०

वैराग बेटा जाया अव धू खोज कुटम्ब सब खाया ॥ टेक ॥

जेनै तें खाई ममता माया, सुख दुख दोनों भाई, काम क्रोध दोनू मंत्री खाये, खाई त्रष्णा बाई ॥ १ ॥ दुर्मति दादी मत्सर दादा, मुख देखत ही मुवा । मंगल रुपी वधाई वाजी यह जब वेटा हुआ ॥ २ ॥ पुन्य पाप पडोसी खाई, मान काम दोऊ मामा । मोह नगर को राजा खायो पीछे ही प्रेम तैं गमाया ॥ ३ ॥ भाव नाम धरयो वेटा को महिमा वरणी न जाई । आनंद घन प्रभु भाव प्रगट

करो घट २ रहो समाय ॥ ४ ॥

१६१ मल्हार

अरे हो बीरा रामजी सूं कहियो यूं बात ॥ टेक ॥

लोक निंद तैं हमकों छांडी, धरम न छांडो गात ॥ १ ॥ पाप कमाये सो हम पाये, तुम सुखि रहो दिन रात । 'द्यानत' सीतां स्थिर मन कीनो मंत्र जपै अवधात ॥ २ ॥

१६२ हुजाज

बागों में मत जायरे चेतन घर ही में फुल वाद रे ॥ टेक ॥

ज्ञान गुलाब चरित्र चमेली, बनी वेल सुविचार हो । चरचा महक रह्यो है मरवो, माया मोह निवार हो ॥ १ ॥ राय वेल सिर सरदा सो है, शील सिरोमणि बाड हो, काई कुमत जहां तहां निकसे देखत सुमन निवार हो ॥ २ ॥ समकित माली विवेक वेल ज्यों आतम शेस निहार हो, क्यारी क्षमा जहां तहां सो है सींचत अमृत धार हो ॥ ३ ॥ बहु विधि कर यह वृक्ष फल्यो है, दश फल लागी डार हो । 'धन्य' पुरुष जिन बाग निहारो अब चल देख बहार हो ॥ ४ ॥

१६३

पुग्दल यो निकाम छै जी जावादे सुज्ञानी जिया हो ।।टेक।।

अशुचि अपावन अथिर घिना वन हो, वहु रोगन को यो धाम छै जी ॥ १ ॥ तूं अति नेह देत धन कुटिला हो, खायो लूण हराम छै जी ॥ २ ॥ तूं चेतन चिद्रूप अनूपम, आतम गुण अभि. राम छै जी ॥ ३ ॥

१६४

दिना चार का जीणां हो भाई आखिर तो फिर मर जाना प्रभू नाम तूं नाम तूं लेरे जिया यातें तेरा तिर जाना ॥ टेक ॥

नी.ठ २ मानुष गति पाई उत्तम कुल मैं तूं आया, जैन धर्म ओर कुल श्रावक का पूरव करणी तैं पाया पूरव में शुभ कीना काम, यातें पाया जैन का धाम, अब कछु कर सुकृत करणा ॥१॥ धन दोलत ओर कुटव कबीला धरया रहैगा सब यांही, जाकूं तूं अपणां कर माने सो तेरा होवे नांही, सो ही तेरा शत्रु जान, तातें अब तूं धर्म पिछाण, प्रभू नाम कू भज लेना ॥ २ ॥ शील रतन कू पालो भाई शील वडा जग के मांही, जो कोई पाले शुद्ध शील कूं जो

जावै स्वर्गां मांही, येही शील का महातम जान, जिननैं किया स्वर्ग मैं स्थान स्वर्गां का सुख वै सायां ।। ३ ।। जिन वाणी कूं ध्यावो भविजन समकित कूं मन मैं धरना, समकित का फल है सुख दाई भव सागर तैं तिर जाणां, जो समकित कूं मन मैं ध्याय सोही जीव मुक्ति मैं जाय, मिटै 'जुग' उस का फिरना ।। ४ ।।

१६५

झूठा डंड वखेडा रे जिया संसार तजो नारे ।। टेक ।।

ओ झूंटो संसार है सजी मोह जाल का फंद, क्रोध मान माया मैं लाग्यो भया जगत मैं अंध, कुटंब काज तूं पाप कमाया करे घनेरा छंद, यह तो भव २ मैं दुख दाई, छोड जगत का दंद ।।१।। माई बाप मतलब का गर्जी, पुत्रा दिक ठिग खाय, सो तुझकूं छिन एक मैं सजी दगा देय खिर जाय, तातैं भव्य धर्म कू ध्यावो यह तो कूं सुख दाय ।। २ ।। धन कूं पाय व्यसन मैं राचे नार पराई से वै, जो पति देखै नार को सजी ताकूं डंड करावे, झूंटो दीखे जगत मैं सजी फेर नर्क मैं जावे, शील पाल कर धर्म धारल्यो नहिं पाछे पछतावे ।। ३ ।। राम हनू सुग्रीव इत्यादिक जाय हुये मुनिराज, को लग साख देऊं मुनिजन की कथनी कहियन जाय, तप धारण कर कर्म खिपाये पहुंचे शिवपुर जाय, यातैं जगत जाण क्षण भंगुर

करो तपस्या जाय ॥ ४ ॥ काया और माया तजोसजी तजो जगत का रोग, क्रोध मान माया कूं तज कर और तजो सब भोग, धार२ श्रीगुरु कहे सजी तुम धरो जैन का जोग, कर्म काट 'जुग' मोक्ष सिधावे तब आवे संतोष ॥ ५ ॥

१६६ लावणी

चरण कमल नमि कहे मंदोदरी यह विनती पिया काम की है जनक सुता को पठावो कुशल इसी में धाम की है ॥ टेक ॥

हम अबला मति हीन दीन क्या समझावें ऐसा कीजे, पंडित गण के मुकुट पिया तुम को क्या सिक्षा दीजे, जो हितकारी करे होय सो कहा मान इतना लीजे, ऐसा कीजे नाथ जिस में न कहा कुलकी छीजे, ॥ शेर ॥ भानु सम तेजरु प्रकाशित वंश यह राक्षस पिया, ताहि मत मैला करो, यह आन कर अपने लिया, पर नार रत जो नर भये तिन वास दुर्गति में किया, धन धान प्राण गमाय अरु अब भार अपने सिर लिया, यातें हठ मत करो तजो पद पर त्रिया जड़ बद नाम की है ॥ १ ॥ दश मुख कहे त्रिखंड पती में भूचर नभचर मेरे दास, तीन खंडकी वस्तु पर प्रभुताई है मेरी खास, मुझे ,छोड यह सुन्दर सीतां और कोन यह करि हैं वास मान

सरोवर छोड कर लेन हंसलघु सर की आस, । शेर ।। इन्द्र से योद्धा मैंने बांधे छिनक मैं जायके, सोम वरुण कुबेर यम वैश्रवण बांधे धायके, विश्व मै जाहिर हुआ कैलास शैल उठाय के, अब कौनसा योद्धा रहा रन में लडे जो आयके । जब मंदोदरि कहैनाथ निज मुखना बढाई काम की है ।। २ ।। तुम सम को बलवान नाथ पर यहै कार्य जग में अति नीच, तुम को शोभा न दे जो परत्रिय अंग लगावो कीच, नीतिवान पंडित साधर्मी कहलाते नृप गण के बीच, अप कीर्ति से भली है सज्जन जन को जगमै मीच, ॥ शेर ॥ है वडा आश्चर्य सुरतिय से अधिक में सुन्दरी, तासे अरुचि तुमको भई हिरदेवसी भुचर नरी, कहो जैसा रुपचिया करुं याही घरी, हट त्यागिये पर नार का विनती करे मंदोदरी । सीतां भी पिया वरे ना तुमको यह पतिवृता सिया राम की है ।। ३ । सुनत वचन लंकेस कहै प्रिय तुम सम और नहीं नारी, यह तो निश्चय पर कारण एक लगा भारी, हमक्षत्री रणसूर हरीसिया यह जानत दुनियां सारी, जो सिया भेजूं रामतट तो नृपगण दे हैं तारी, । शेर ।। जानि हैं कायर मुझे नृपगण सभी अभिमान से, या से लडना जोग्य है रघु-वीर संग हनुमान से, जीतकर अर्पों सिया प्यारी जो उनके प्राण से, यश होय मेरा विश्व मैं वेशक सिया के दान से 'नाथुराम' जिन भक्त कहै त्रिय सुभ चाहे संग्राम की है ॥ ४ ॥

समाप्त

श्रीपरमात्मने नमः ।

बालबोध-जैनधर्म

चौथा भाग ।

लेखक

स्व० बाबू दयाचन्द्र जैन बी० ए०

और

धर्मरत्न पं० लालाराम शास्त्री ।

* श्रीवीतरागाय नमः । *

बालबोध-जैनधर्म

चौथा भाग ।

प्रकाशक—

मदनलाल मोहनलाल बाकलीवाल,

मालिक, जैन-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग बम्बई नं० ४.

फरवरी, सन् १९४४

बारहवीं आवृत्ति] * [मूल्य सात आने

मुद्रक—रघुनाथ दिपाजी देसाई, न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,

६, केलेवाडी, गिरगाँव, बम्बई ४.

निवेदन

(दूसरी आवृत्तिका)

बालबोध जैनधर्म नामक पुस्तकमालाका चौथा भाग पहले एक बार प्रकाशित हो चुका है। अब पुनः यह भाग संशोधित करके प्रकाशित किया जाता है। इस भागमें 'देवशास्त्रगुरुपूजा' 'पंचपरमेष्ठीके मूलगुण' आदि ११ पाठ हैं, जिनको प्रथम तीन भागोंके अनुसार पढ़ना योग्य है।

हमने इस पुस्तकमालाके चारों भागोंमें अत्यन्त सरलताके साथ थोड़े शब्दोंमें जैनधर्मकी कुछ मुख्य मुख्य बातोंका वर्णन किया है। जिनको पढ़कर जैनधर्मका साधारण ज्ञान हो सकता है और रत्नकरण्डश्रावकाचार, द्रव्यसंग्रह, तत्त्वार्थसूत्र आदि आचार्यों द्वारा प्रणीत शास्त्रोंमें बालक तथा बालिकाओंका अति सुगमतासे प्रवेश हो सकता है और उनके विषयको वे अच्छी तरह समझ सकते हैं।

हमने यथासम्भव इसके सम्पादन तथा संशोधनमें सावधानी रक्खी है, पहली आवृत्तिमें भाषा कुछ कठिन हो गई थी, उसे भी अबकी बार जहाँतक हो सका सरल करदी है और भी उचित परिवर्तन कर दिये हैं। यदि कहींपर कोई अशुद्धी रह गई हो, तो उसे अध्यापकगण कृपा करके विद्यार्थियोंकी पुस्तकोंमें ठीक करा देवें और हमें भी सूचना देवें कि जिससे अगली आवृत्तिमें अशुद्धियाँ ठीक हो जावें।

आपका सेवक

लखनऊ
ता० ५-३-१५

दयाचन्द्र गोयलीय बी० ए०

नमः सिद्धेभ्यः ।

बालबोध-जैनधर्म ।

चौथा भाग ।

पहला पाठ ।

देवशास्त्रगुरुपूजा ।

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।

गाथा ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

ॐ अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः ।

(यहाँ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए)

चत्तारि मंगलं—अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहूमंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंत-लोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॥

नोट—पूजन करनेसे पहले स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहिनकर तीसरे भागमेंसे एक अथवा दोनों मंगल पढ़ते हुए भगवानका न्हवन (अभिषेक) करना चाहिए । पूजाके लिए सामग्री शुद्ध होनी चाहिए ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा ।

(यहाँ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए)

अडिल्ल छन्द ।

प्रथमदेव अरहंत, सुश्रुतसिद्धांत जू ।
गुरुनिर्ग्रन्थ[1]महंत मुकतिपुरपंथ[2] जू ॥
तीन रतन जगमांहि, सु ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद, परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा ।

पूजों पद अरहंतके, पूजों गुरुपद सार ।
पूजों देवी सरस्वती, नित[3]प्रति अष्टप्रकार[4] ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

गीताछन्द ।

सुर[5]पति उर[6]गनरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपदप्रभा ।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल, देख छवि मोहत सभा ॥
वर[7] नीर क्षीर[8]समुद्र घट[9] भरि, अग्र[10] तसु बहुविधि नचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ॥ १ ॥

दोहा ।

मलिनवस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव-मल-छीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० स्वा० ।

---

१ परिग्रह रहित । २ मोक्षनगरीका रास्ता । ३ सदा-हररोज । ४ आठ तरह । ५ इन्द्र । ६ धरणेन्द्र । ७ उत्तम । ८ क्षीरसागरका । ९ घड़ा । १० आगे ।

जे त्रिजगउदरमझार[१] प्रानी, तपत अति दुद्धर[२] खरे।
तिन अहितहरन[३] सुवचन जिनके, परमशीतलता भरे॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण[४] पावन[५] सरस चन्दन घसि सचूं।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥ २॥

दोहा।

चन्दन शीतलता करै, तपत वस्तु परवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ २॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि० स्वा०।

यह भवसमुद्र अपार तारण-, के निमित्त सुविधि ठही।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ, भक्ति वर[६] नौका सही॥
उज्जल अखंडित सालि तंदुल[७]-पुंज धरि त्रयगुण जचूं।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥ ३॥

दोहा।

तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित बीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ ३॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० स्वाहा।

जे विनयवंत सुभव्य-उर[८]-अंबुज-प्रकाशन भान[९] हैं।
जे एक मुखचारित्र भाषत, त्रिजगमांहि प्रधान हैं॥
लहि कुंदकमलादिक पहुप[१०], भव भव कुवेदनसों[११] बचूं।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥ ४॥

---

१ तीनों लोकमें। २ कठिन। ३ दुःखको हरनेवाले, हित करनेवाले। ४ सुगन्ध। ५ प्रासुक। ६ श्रेष्ठ। ७ चावल। ८ हृदयकमल। ९ सूर्य। १० पुष्प। ११ बुरे दुःख।

दोहा।

विविध भांति परिमल[1] सुमनै[2], भ्रमर जास आधीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० स्वाहा।

अति सबल मद कंदर्प जाको, क्षुधा[3]-उरग[4] अमान[5] है।
दुस्सह भयानक तास नाशन,-को सुगरुड़ समान है॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित, नैवेद्य[6] वर घृतमें पचूँ[7]।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥ ५ ॥

दोहा।

नानाविध संयुक्तरस, व्यंजन सरस[8] नवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० स्वाहा।

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने, मोहतिमिर[9] महाबली।
तिहिं कर्मघातक ज्ञानदीप, प्रकाश जोतिप्रभावली॥
इह भांति दीप प्रजाल कंचन,-के सुभाजनमें खचूँ[10]।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥ ६ ॥

दोहा।

स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तम[11]करि हीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० स्वाहा।

जो कर्म-ईंधन दहन, अग्निसमूहसम उद्धत लसै।
वर धूप तास सुगंधि ताकरि, सकल परिमलता हँसै॥

---

१ सुगन्ध। २ पुष्प। ३ क्षुधारूपी। ४ सर्प। ५ प्रमाण रहित। ६ पकवान बनाकर। ७ घीमें पकाऊँ। ८ स्वादिष्ट। ९ मोहरूपी अन्धेरा। १० सजाकर। ११ अन्धेरा।

इह भांति धूप चढ़ाय नित, भव-ज्वलनमांहि नहीं पचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ॥७॥

दोहा ।

अग्निमाहिं परिमल दहन, चन्दनादि गुणलीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि० स्वाहा ।

लोचन[1] सुरसना घ्राण उर, उत्साहके करतार हैं ।
मोपै न उपमा जाय वरनी, सकल फल गुणसार हैं ॥
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, सकल अमृतरस सचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ॥८॥

दोहा ।

जे प्रधान फल फलविषैं, पंच[2]करणरसलीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० स्वाहा ।

जल परम उज्जल गंध अक्षत[3] पुष्प चरु[4] दीपक धरूँ ।
वर धूप निर्मल फल विविध, बहु जगमके पातक[5] हरूँ ॥
इह भांति अर्घ चढ़ाय नित, भव करत शिवपंकति मचूँ[6] ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ॥१०॥

दोहा ।

वसुविधि अर्घ संजोयकै, अति उछाह[7] मन कीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा ।

---

१ नेत्र । २ पाँचों इंद्रियाँ । ३ चावल । ४ नैवेद्य । ५ पाप । ६ रचूँ ।
७ उत्साह ।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अल्प सुगुणविस्तार ॥ १ ॥

पद्धड़ि छन्द।

चउकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश[1]-दोपराशि[2]। जे परम सुगुण हैं अनंत धीर, कहवतके छ्यालिस गुण गँभीर ॥ २ ॥ शुभ समवशरण शोभा अपार, शतइन्द्र नमत कर शीश धार। देवाधिदेव अरहंत देव, वन्दों मनवचतनकरि सुसेव ॥३॥ जिनकी धुनि है ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप। दशअष्ट महाभापा समेत, लघुभापा सातशतक[3] सुचेत ॥ ४ ॥ सो स्यादवादमय सप्तभंग, गणधर गूँथे बारह सुअङ्ग। रवि[6] शशि[7] न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ॥ ५ ॥ गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रतनत्रय[8] निधि अगाध। संसार देह वैराग्यधार, निरवांछि तपै शिवपदनिहार ॥ ६ ॥ गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस, भवतारनतरन[9] जिहाज ईस। गुरुकी महिमा वरनी न जाय, गुरुनाम जपों मन वचन काय ॥ ७ ॥

सोरठा।

कीजे शक्तिप्रमान, शक्तिविना सरधा धरै।
'द्यानत' श्रद्धावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

---

१ अठारह। २ समूह। ३ एक सौ। ४ हाथ। ५ सात सौ। ६ सूर्य। ७ चन्द्र ८ सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र। ९ संसारसे तरने और तारनेवाला।

शान्तिपाठ । *

रूप चौपाई (१६ मात्रा)

शांतिनाथमुख शशिउनहारी, सीलगुणव्रतसंजमधारी ।
लखेन एकसौआठ विराजैं, निरखत नयन कमलदल लाजैं ॥१॥
पंचमचक्रवर्तिपदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी । इन्द्रनरेन्द्रपूज्य जिननायक, नमो शांतिहित शांतिविधायक ॥ २ ॥
दिव्यविटपपहुपनकी बरसा, दुंदुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुझ प्रातिहार्य मनहारी ॥ ३ ॥
शांति जिनेस शांतिसुखदाई, जगतपूज्य पूजों सिर नाई ।
परमशांति दीजै हम सबको, पढ़ैं जिन्हें पुनि चार संघको ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका ।

पूजैं जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके,
इन्द्रादिदेव, अरु पूज्य पदाब्ज जाके ।
सो शांतिनाथ वरवंशजगत्प्रदीप,
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ॥ ५ ॥

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकोंको प्रतिपालकोंको, यतीनको औ यतिनायकोंको ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले, कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे ॥ ६ ॥

---

* शांतिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते जाना चाहिये ।

१ चन्द्रमाके समान । २ लक्षण । ३ कमलके पत्ते । ४ अशोकादि कल्पवृक्षके । ५ पुष्पोंकी । ६ दिव्यध्वनि । ७ तुम्हारे । ८ मुकुट । ९ चरणारविंद । १० जगतको प्रकाशित करनेवाले । ११ साधुओंको । १२ देश ।

मन्दाक्रान्ता।

होवै सारी प्रजाको, सुख वलयुत हो, धर्मधारी नरेशा[1]।
होवै वर्षा समैपै, तिलभर न रहै, व्याधियोंका अँदेशा॥
होवै चोरी न जारी, सुसमय वरतै, हो न दुष्काल भारी॥
सारे ही देश धारैं, जिनवरवृषको[2], जो सदा सौख्यकारी॥ ७॥

दोहा।

घातिकर्म[3] जिन नाशकर, पायो केवलराज[4]।
शांति करैं ते जगतमें, वृषभादिक जिनराज॥ ८॥

मन्दाक्रान्ता।

शास्त्रोंका हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगतीका।
सद्वृत्तोंको[5] सुजस कहके, दोष ढांकूँ सभीका॥
बोलूं प्यारे वचन हितके, आपका रूप ध्याऊं।
तौलों सेऊं चरन जिनके, मोक्ष जौलों न पाऊं॥ ९॥

आर्या।

तवपद[8] मेरे हियमें, मम[7] हिय तेरे पुनीत चरणोंमें।
तवलौं लीन रहै प्रभु, जवलौं प्राप्ती न मुक्तिपदकी हो॥१०॥
अक्षर पद मात्रासे, दूषित जो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सव, करुणाकरि पुनि[9] छुड़ाहु भवदुखसे११
जगवन्धु जिनेश्वर, पाऊं तव चरणशरण वलिहारी।
मरणसमाधि सुदुर्लभ, कर्मोंका क्षय सुवोध सुखकारी॥१२॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

---

१ राजा। २ धर्मका। ३ ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय अन्तराय। ४ केवलज्ञान। ५ समीचीन व्रतधारियोंके। ६ गुण। ८ तेरे चरण। मेरा। ९ फिर।

विसर्जनपाठ ।

दोहा ।

बिन जाने वा जानकें, रही टूट जो कोय ।
तुम प्रसादतें परमगुरु, सो सब पूरन होय ॥ १ ॥
पूजनविधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आव्हान ।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करो भगवान ॥ २ ॥
मंत्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देव चरणका सेव ॥ ३ ॥
आये जो जो देवगण, पूजे भक्तिप्रमान ।
ते अब जावहु कृपाकर, अपने अपने थान ॥ ४ ॥

प्रश्नावली ।

१—पूजनसे क्या समझते हो—और पूजनके लिए किन किन चीजोंकी जरूरत है ? पूजनके अष्टद्रव्योंके नाम बताओ ?

२—पूजनके पीछे शांतिपाठ क्यों पढ़ा जाता है और पूजनके पहले आव्हान क्यों किया जाता है ?

३—अर्घ किसे कहते हैं और अर्घ कब चढ़ाया जाता है ?

४—अष्टद्रव्य जो चढ़ाये जाते हैं, वे किसी क्रमसे चढ़ाये जाते हैं या जिसे चाहें उसे पहले चढ़ा देते हैं ?

५—पूजा खड़े होकर करना चाहिये या बैठकर ? पूजा करने वालोंको सबसे पहले और सबसे अन्तमें क्या करना चाहिए ?

६—अष्टद्रव्योंके चढ़ानेके पश्चात् जो जयमाला पढ़ी जाती है उसमें किस बातका वर्णन होता है ?

७—अक्षत और फल चढ़ानेके छंद पढ़ो और यह बताओ कि छंद पढ़नेके पश्चात् क्या कहकर द्रव्य चढ़ाना चाहिए ?

दूसरा पाठ ।

पंचपरमेष्ठीके मूलगुण ।

परमेष्ठी उसे कहते हैं, जो परमपदमें स्थित हो। ये पाँच होते हैं:—१ अरहंत, २ सिद्ध, ३ आचार्य, ४ उपाध्याय और ५ सर्वसाधु।

अरहंत उन्हें कहते हैं, जिनके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय ये चार घातियाकर्म नाश हो गए हों। और जिनमें निम्नलिखित ४६ गुण हों और १८ दोष न हों।

दोहा।

चवतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ।
अनँत चतुष्टय गुण सहित, छीयालीसों पाठ॥

अर्थात् ३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, और ४ अनंतचतुष्टय ये ४६ गुण हैं। ३४ अतिशयोंमेंसे १० अतिशय जन्मके होते हैं, ११ केवलज्ञानके हैं और १४ देवकृत होते हैं।

जन्मके दश अतिशय।

अतिशय रूप सुगंध तन, नाहिं पसेव निहार।
प्रियहितवचन अतुल्यबल, रुधिर श्वेत आकार॥
लच्छन सहसरु आठ तन, समचतुष्क संठान।
वज्रवृषभनाराचजुत, ये जनमत दश जान॥

१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, ३

---

१ अद्भुत बात, ऐसी अनोखी बात जो साधारण मनुष्योंमें न पाई जावे। २ अनंत। ३ पसीना। ४ जिसकी कोई तुलना न होवे। ५ सुडौल सुन्दर आकार।

पसेव रहित शरीर, अर्थात् ऐसा शरीर जिसमें पसीना न आवे, ४ मल मूत्र रहित शरीर, ५ हितमितप्रियवचन बोलना, ६ अतुल्यबल, ७ दूधके समान सफेद खून, ८ शरीरमें एक हजार आठ लक्षण, ९ समचतुरस्र संस्थान और १० वज्रवृषभ नाराच संहनन, ये दश अतिशय अरहंत भगवानके जन्मसे ही होते हैं। अर्थात् अरहंत भगवानका शरीर जन्मसे ही बड़ा सुन्दर सुडौल होता है। उसमेंसे बड़ी अच्छी सुगंध आती है और उसमें न पसीना आता है, न मल मूत्र होता है। उनके शरीरमें अतुल्य बल होता है और उनका रक्त सफेद दूधके समान होता है। वे सबसे मीठे वचन बोलते हैं। उनके शरीरके हाड़ वगैरह वज्रके होते हैं और उनके शरीरमें १००८ लक्षण होते हैं।

केवलज्ञानके दश अतिशय।

योजन शत इकमें सुभिख, गगन-गमन मुख चार।
नहिं अदया उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार॥
सबविद्या-ईश्वरपनो, नाहिं बढ़ें नख केश।
अनिमिष दृग छायारहित, दशकेवलके वेश॥

१ एकसौ योजनमें सुभिक्षता, अर्थात् जिस स्थानमें भगवान हों उससे चारों तरफ सौ सौ योजनमें सुकाल होना, २ आकाशमें गमन, ३ चारों ओर मुखोंका दीखना, ४ अदयाका अभाव, उपसर्गका न होना ६ कवलाहार (ग्रासवाला) आहार न लेना, ७ समस्त विद्याओंका स्वामीपना, ८ नख के-

१ हाड़ वेष्टन और कीलोंका वज्रमय होना। २ आकाश। ३ ग्रासाहार। ४ बाल।

शोंका न बढ़ना, ९ नेत्रोंकी पलकें न झपकना, १० और शरीरकी छाया न पड़ना। जब अरहंतभगवानको केवलज्ञान हो जाता है, तो उस समयसे जहाँ भगवान होते हैं, उस स्थानसे चारों तरफ सौ सौ योजन तक सुकाल रहता है। पृथिवीसे ऊपर उनका गमन होता है, देखनेवालोंको चारों तरफ उनका मुँह दिखलाई देता है। उनपर कोई उपसर्ग नहीं कर सकता और उनके शरीरसे किसी भी जीवकी हिंसाका अभाव हो जाता है। न आहार लेते हैं, न उनकी पलकें झपकती हैं, न उनके बाल और नाखून बढ़ते हैं, और न शरीरकी परछाँई पड़ती है, वे समस्त विद्या और शास्त्रोंके ज्ञाता हो जाते हैं। ये दश अतिशय केवलज्ञान होनेके समय प्रकट होते हैं।

देवकृत चौदह अतिशय।

देवरचित हैं चारदश, अर्द्धमागधी भाष।
आपसमाहीं मित्रता, निर्मलदिश आकाश ॥
होत फूल फल ऋतु सबै, पृथिवी काचसमान।
चरण कमल तल कमल है, नभतें जय जय बान ॥
मन्द सुगंध बयारि पुनि, गंधोदककी वृष्टि।
भूमिविषै कण्टक नहीं, हर्षमयी सब सृष्टि ॥
धर्मचक्र आगे रहे, पुनि वसु मंगल सार।
अतिशय श्रीअरहंतके, ये चौतीस प्रकार ॥

१ भगवानकी अर्द्धमागधी भाषाका होना, २ समस्त

१ भाषा। २ दिशा। ३ काच, दर्पण। ४ आकाशसे। ५ वाणी। ६ हवा। ७ काँटे, कङ्कर। ८ आठ मंगलद्रव्य।

जीवोंमें परस्पर मित्रताका होना, ३ दिशाओंका निर्मल होना, ४ आकाशका निर्मल होना, ५ सब ऋतुके फल फूल धान्यादिकका एक ही समय फलना, ६ एक योजन तककी पृथिवीका दर्पणकी तरह निर्मल होना, ७ चलते समय भगवानके चरणकमलोंके तले सुवर्ण—कमलोंका होना, ८ आकाशमें जय जय ध्वनिका होना, ९ मन्द सुगंधित पवनका चलना, १० सुगंधमय जलकी वृष्टि होना, ११ पवनकुमार देवोंके द्वारा भूमिका कण्टक रहित होना, १२ समस्त जीवोंका आनन्दमय होना, १३ भगवानके आगे धर्मचक्रका चलना, १४ छत्र चमर ध्वजा घंटा आदि आठ मंगल द्रव्योंका साथ रहना। इस प्रकार सब मिलकर ३४ अतिशय अरहंत भगवानके होते हैं।

आठ प्रातिहार्य।

तरु अशोकके निकटमें सिंहासन छविदार।
तीन छत्र सिरपर लसैं, भामण्डल पिछवार[1]॥
दिव्यध्वनि[2] मुखतैं, खिरै, पुष्पवृष्टि सुर[3] होय।
ढोरें चौसठि चमर जख[4], बाजैं दुन्दुभि जोय॥

अर्थात—१ अशोक वृक्षका होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भगवानके सिरपर तीन छत्रका होना, ४ भगवानके पीठके पीछे भामण्डलका होना, ५ भगवानके मुखसे निरक्षरी (विना-अक्षरकी) दिव्यध्वनिका होना, ६ देवोंके द्वारा फूलोंकी

---

१ पीछे। २ भगवानकी अक्षर रहित सबके समझमें आनेवाली सुन्दर अनुपम वाणी। ३ देवकृत। ४ यक्ष जातिके व्यंतर देव।

वर्षा होना, ७ यक्ष देवोंद्वारा चौसठ चमरोंका ढुरना और ८ दुन्दुभि बाजोंका बजना, ये आठ प्रतिहार्य हैं।

अनन्त चतुष्टय।

ज्ञान अनंत[1] अनंत सुख, दरस अनंत प्रमान।
बल अनंत अरहंत सो, इष्टदेव पहिचान॥

१ अनंतदर्शन, २ अनंतज्ञान, ३ अनंतसुख, ४ अनंत-वीर्य, ये चार अनंत चतुष्टय कहे जाते हैं। इनसे भगवानका ज्ञान, दर्शन, सुख तथा बल अनंत होता है, अर्थात् इतना होता है, कि जिसकी कोई सीमा या हद नहीं होती है। इस प्रकार ३४ अतिशय, ८ प्रतिहार्य, ४ अनंत चतुष्टय सब मिलाकर ४६ गुण अरंहत भगवानके होते हैं।

अठारह दोष।

जन्म जरा[2] तिरखा छुधा, विस्मय[3] आरत खेद[4]।
रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिन्ता स्वेद[5]॥
राग द्वेष अरु मरणजुत, ये अष्टादश[6] दोष।
नहिं होते अरहन्तके, सो छवि[7] लायक मोष॥

१ जन्म, २ जरा (बुढ़ापा), ३ तृषा (प्यास), ४ क्षुधा (भूख), ५ विस्मय (आश्चर्य), ६ अरति (पीड़ा), ७ खेद (दुःख), ८ रोग, ९ शोक, १० मद, ११ मोह (अज्ञान), १२ भय (डर), १३ निद्रा, १४ चिन्ता, १५ स्वेद (पसीना), १६ राग, १७ द्वेष और १८ मरण। ये अठारह दोष अरंहत भगवानमें नहीं होते हैं।

---

१ जिनका अन्त न हो। २ बुढ़ापा। ३ आश्चर्य। ४ क्लेश। ५ पसीना। ६ अठारह। ७ मूर्ति।

सिद्ध परमेष्ठीके मूलगुण ।

सिद्ध उन्हें कहते हैं, जो आठों कर्मोंका नाश करके संसारके बन्धनसे सदैवके लिए मुक्त हो गये हैं, अर्थात् जो फिर कभी संसारमें न आयँगे। इनमें नीचे लिखे हुए ८ मूलगुण होते हैं।

सोरठा।

समकित दरसन ज्ञान, अगुरुलघू[1] अवगाहना[2]।
सूच्छम[3] वीरजवान, निराबाध[4] गुण सिद्धके ॥

इन गुणोंकी परिभाषा (स्वरूप) समझना इस पुस्तकके पढ़नेवाले विद्यार्थियोंकी शक्तिसे बाहर है, इसलिये केवल नाम मात्र दे दिये गए हैं।

१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघु, ५ अवगाहनत्व, ६ सूक्ष्मत्व, ७ अनन्तवीर्य, ८ अव्याबाधत्व।

आचार्य परमेष्ठीके मूलगुण ।

आचार्य उन्हें कहते हैं, जिनमें नीचे लिखे हुए ३६ मूलगुण हों। ये मुनियोंके संघके अधिपति होते हैं, और उनको दीक्षा तथा प्रायश्चित्त वगैरह दंड देते हैं।

द्वादश[5] तप दश धर्मजुत, पालैं पंचाचार।
षट्[6] आवशि त्रयगुप्ति[7] गुन, आचारज[8] पद सार ॥

अर्थात्—तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुप्ति ३।

---

१ न हलका न भारी। २ एक एक आत्माके आकारमें अनेक आत्माओंके आकारोंका रहना। ३ अतीन्द्रियगोचर। ४ बाधा रहित। ५ बारह। ६ छह। ७ तीन गुप्ति। ८ आचार्य।

बारह तप।

अनशन ऊनोदर करै, व्रतसंख्या रस छोर।
विविक्तशयनासन धरै, काय कलेश सुठोर॥
प्रायश्चित्त धर विनयजुत, वैयाव्रत स्वाध्याय।
पुनि उत्सर्ग विचारकै, धरै ध्यान मन लाय॥

अर्थात्—१ अनशन (भोजनका त्याग करना), २ ऊनोदर (भूखसे कम खाना), ३ व्रतपरिसंख्यान (भोजनके लिये जाते हुए घर वगैरहका नियम करना), ४ रसपरित्याग (छहों रस या एक दो रसका छोड़ना), ५ विविक्तशय्यासन (एकांत स्थानमें सोना वैठना), ६ कायक्लेश (शरीरको कष्ट देना), ७ प्रायश्चित्त (दोषोंका दंड लेना), ८ रत्नत्रय व उसके धारकोंका विनय करना, ९ वैयाव्रत अर्थात् रोगी वृद्ध मुनिकी सेवा करना, १० स्वाध्याय करना (शास्त्र पढ़ना), ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोड़ना) और ध्यान करना।

दश धर्म।

छिमा[१] मारदव, आरजव सत्यवचन चितपागै।
संजम तप त्यागी सरव, आकिञ्चन तियत्यागै[३]॥

१ उत्तम क्षमा (क्रोध न करना), उत्तम मार्दव (मान न करना), ३ उत्तम आर्जव (कपट न करना), ४ उत्तम सत्य (सच बोलना), ५ उत्तम शौच (लोभ न करना) अन्तःकरणको शुद्ध रखना), ६ उत्तम संयम (छह कायके जीवोंकी दया पालना और पाँचों इंद्रियोंको व मनको वशमें रखना),

१ क्षमा। २ चित्तको पाक वा शुद्ध रखना शौच है। स्त्रीत्याग।

७ उत्तम तप, ८ उत्तम त्याग (दान करना), ९ उत्तम आकिञ्चन (परिग्रहका त्याग करना), १० उत्तम ब्रह्मचर्य स्त्री मात्रका त्याग करना।

छह आवश्क।

समता धर वंदन करै, नाना थुती[1] बनाय।
प्रतिक्रमण स्वाध्याय जुत, कायोत्सर्ग लगाय॥

१ समता (समस्त जीवोंसे समता भाव रखना) २ बंदना (हाथ जोड़ मस्तकसे लगाकर नमस्कार करना), ३ पंचपर, मेष्ठीकी स्तुति करना, ४ प्रतिक्रमण (लगे हुए दोषोंपर पश्चात्ताप करना), ५ स्वाध्याय (शास्त्रोंको पढ़ना), ६ कायोत्सर्ग लगाकर अर्थात् खड़े होकर ध्यान करना।

पञ्च आचार और तीन गुप्ति।

दर्शन ज्ञान चरित्र तप, वीरज पंचाचार।
गोपै[2] मन वच कायको, गिन छतीस गुन सार॥

१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार-५ वीर्याचार ये पाँच आचार हैं।

१ मनोगुप्ति (मनको वशमें करना), २ वचनगुप्ति (वचनको वशमें करना), ३ कायगुप्ति (शरीरको वशमें करना), ये तीन गुप्ति हैं।

इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं।

उपाध्याय परमेष्ठीके २५ मूलगुण।

उपाध्याय उन्हें कहते हैं, जो ११ अंग और १४ पूर्वके पाठी हों। ये स्वयं पढ़ते और अन्य पासमें रहनेवाले भव्य-

---

१ स्तुति। २ वशमें करे।

जीवोंके पढ़ाते हैं। इनके ११ अङ्ग और १४ पूर्वको पढ़ना पढ़ाना ही उपाध्यायके २५ मूलगुण होते हैं।

ग्यारह अङ्ग।

प्रथमहिं आचारांग गनि, दूजौ सूत्रकृतांग।
ठाणअंग तीजौ सुभग, चौथौ समवायांग॥
व्याख्यापण्णति पाँचमौं, ज्ञातृकथा षट् जान।
पुनि उपासकाध्ययन है, अंतःकृतदश ठान॥
अनुत्तरण उत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान।
वहुरि प्रश्नव्याकरण जुत, ग्यारह अंग प्रमान॥

१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग, ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग, ८ अन्तःकृतदशांग, ९ अनुत्तरोत्पादकदशांग, १० प्रश्नव्याकरणांग, और ११ विपाकसूत्रांग ये ग्यारह अंग हैं।

चौदह पूर्व।

उत्पादपूर्व अग्रायणी, तीजो वीरजवाद।
अस्तिनास्तिपरवाद पुनि, पंचम ज्ञानप्रवाद॥
छट्ठो कर्मप्रवाद है, सतप्रवाद पहिचान।
अष्टम आत्मप्रवाद पुनि, नवमौं प्रत्याख्यान॥
विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महन्त।
प्राणवादकिरिया वहुल, लोकविन्दु है अन्त॥

१ उत्पादपूर्व, २ अग्रायणीपूर्व, ३ वीर्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व, ५ ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्यप्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व,

१० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियाविशालपूर्व, १४ लोकबिन्दुपूर्व ये चौदह पूर्व हैं।

सर्वसाधुके २८ मूलगुण।

साधु उन्हें कहते हैं जिसमें नीचे लिखे हुए २८ मूलगुण हों, वे मुनि तपस्वी कहलाते हैं। उनके पास कुछ भी परिग्रह नहीं होता और न वे कोई आरम्भ करते हैं। वे सदा ज्ञान ध्यान में लवलीन रहते हैं।

पञ्च महाव्रत।

हिंसा अनृत तसकरी, अब्रह्म परिगह पाय।
मन वच तनतैं त्यागवो, पंच महाव्रत थाय॥

१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य महाव्रत, ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत।

पञ्च समिति।

ईर्या भाषा एषणा, पुनि क्षेपण आदान।
प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पाँचौं समिति विधान॥

१ इर्य्यासमिति (आलस्य रहित चार हाथ आगे जमीन देखकर चलना), २ भाषासमिति (हितकारी प्रामाणिक मीठे वचन बोलना), ३ एषणासमिति (दिनमें एक बार शुद्ध निर्दोष आहार लेना), आदाननिक्षेपणसमिति (अपने पासके शास्त्र, पीछी, कमंडलु आदिको भूमि देखकर

---

१ हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन और परिग्रह इन पाँच पापोंके एक देश त्यागको अणुव्रत और सर्वदेश त्यागको महाव्रत कहते हैं। २ झूठ। ३ चोरी। ४ मैथुन कुशील।

सावधानीसे धरना उठाना), ५ प्रतिष्ठापनसमिति (साफ भूमि देखकर जिसमें जीव जन्तु न हों मल मूत्र करना)।

शेष गुण।

सपरसं रसना नासिका, नयन श्रोत्रको रोध।
षटआवशि मंजन तजन, शयन भूमिका शोध॥
वस्त्रत्याग कचलुंच अरु, लघु भोजन इक वार।
दाँतन मुखमें ना करें, ठाढ़े लेहिं अहार॥

१ स्पर्श, २ रसना, ३ घ्राण, ४ चक्षु, ५ श्रोत्र, इन पाँच इंद्रियोंको वशमें करना, ६ समता, ७ वन्दना, ८ स्तुति, ९ प्रतिक्रमण, १० स्वाध्याय, ११ कायोत्सर्ग, १२ स्नानका त्याग करना, १३ स्वच्छ भूमिपर सोना, १४ वस्त्र त्याग करना, १५ वालोंका उखाड़ना, १६ एक वार थोड़ा भोजन करना, १७ दन्तधावन अर्थात् दाँतोन न करना, १८ खड़े खड़े आहार लेना, इस प्रकार सब मिलकर २८ मूलगुण सर्वसामान्य मुनियोंके होते हैं। मुनिजन इनका पालन करते हैं।

प्रश्नावली।

१ परमेष्ठी किसे कहते हैं? परमेष्ठी पाँच ही होते हैं या कुछ कमती बढ़ती भी?

२ पंचपरमेष्ठीके कुल गुण कितने हैं? मुनिके मूलगुण कितने हैं?

३ जो जीव मोक्षमें हैं, उनके कितने और कौन कौन गुण हैं?

१ स्पर्शन इंद्रिय। २ आँख। ३ कान। ४ छह आवश्यक। ५ शरीरको धोना। ६ और। ७ थोड़ा।

४ महावीरस्वामी जब पैदा हुए थे, तब उनमें अन्य मनुष्योंसे कौन कौन असाधारण बातें थीं ?

५ अतिशय, प्रातिहार्य, आचार्य, गुप्ति, ऊनोदर, आकिंचन्य, प्रतिक्रमण, वज्रवृषभनाराच संहनन, समचतुरस्रसंस्थान, व्युत्सर्ग, एषणासमिति, स्वाध्याय इससे क्या समझते हो ?

६ समिति, महाव्रत, अङ्ग, आवश्यक, और अनन्तचतुष्टयके कुछ भेद बताओ ?

७ शयन, स्नान, पान, सोने, खाने, पीने, नहाने, धोने और पहनने आदि नियमोंमें हममें और साधुओंमें क्या भेद है ?

८ आवश्यक, पंचाचार, महाव्रत, समिति, प्रातिहार्य किनके होते हैं ?

९ पाठमें आए हुए १८ दोष किसमें नहीं होते ?

१० अरहंतके देवकृत अतिशयोंके नाम बतलाओ ? ये अतिशय कब प्रगट होते हैं ? केवलज्ञानके पहले या पीछे ?

११ एक लेख लिखो जिसमें यह दिखलाओ कि अरहंत भगवानमें और साधारण मनुष्योंमें बाहरी बातोंमें क्या अन्तर है ?

१२ अरहंत मुनि हैं या नहीं ? क्या तमाम मुनियोंमें केवलज्ञानके होनेपर केवलज्ञानके अतिशय प्रकट हो जाते हैं या केवल अरहंतोंके ?

१३ यदि किसी मुनिसे कोई अपराध हो जाता है, तो वे क्या करते हैं ?

१४ उपाध्याय किनको पढ़ाते हैं और क्या पढ़ाते हैं ?

१५ भगवानकी जो वाणी खिरती है, वह किस भाषामें होती है ? उसको सब कोई समझ सकते हैं या नहीं ?

१६ पंचपरमेष्ठीमें सबसे बड़ा पद किसका है और सबसे छोटा किसका ?

१७ आचार्य और साधु इनमें पहले कौनसे पदकी प्राप्ति होती है ?

१८ सिद्ध और अरहंतमें क्या भेद है, और किसको पहले नमस्कार करना चाहिए ?

१९ एक परमेष्ठीके गुण दूसरे परमेष्ठीमें हो सकते हैं या नहीं और मोक्षमें रहनेवाले जीवोंको पंचपरमेष्ठी कह सकते हैं या नहीं ?

तीसरा पाठ ।

चौबीस तीर्थंकरोंके नाम चिन्ह सहित

नाम तीर्थंकर	चिन्ह	नाम तीर्थंकर	चिन्ह
वृषभनाथ	वृषभ (बैल)	विमलनाथ	शूकर (सुअर
अजितनाथ	हाथी	अनन्तनाथ	सेही
शंभवनाथ	घोड़ा	धर्मनाथ	वज्रदण्ड
अभिनन्दननाथ	बंदर	शांतिनाथ	हरिण
सुमतिनाथ	चकवा	कुन्थुनाथ	बकरा
पद्मप्रभ	कमल	अरःनाथ	मच्छ
सुपार्श्वनाथ	साँथिया	मल्लिनाथ	कलश
चन्द्रप्रभ	चन्द्रमा	मुनिसुव्रतनाथ	कछुआ
पुष्पदन्त	मगर	नेमिनाथ	लाल कमल
शीतलनाथ	कल्पवृक्ष	नेमिनाथ	शंख
श्रेयांशनाथ	गेंड़ा	पार्श्वनाथ	सर्प
वासुपूज्य	भैंसा	वर्द्धमान	सिंह

प्रश्नावली ।

१ दशवें, पंद्रहवें, बीसवें और चौबीसवें तीर्थंकरके नाम चिन्ह सहित बताओ ?

२ घोड़ा, मगर, भैंसा, मच्छ और कछुआ ये चिन्ह किन किन और कौन कौनसे तीर्थंकरोंके हैं ?

३ उन तीर्थंकरोंके नाम बताओ जिनके चिन्ह निर्जीव हैं ?

४ ऐसे कौन कौन तीर्थंकर हैं, जिनके चिन्ह असैनी जीवोंके नाम हैं ?

५ हथियार, बाजे, बरतन और वृक्षके चिन्ह किन किन तीर्थंकरोंके हैं अलग अलग चिन्ह सहित बताओ।

६ एक लड़केने चौबीसों तीर्थंकरोंके चिन्ह देखनेके पश्चात् कहा कि कैसी अनोखी बात है कि सबके चिन्ह जुदे जुदे हैं, किसीका भी चिन्ह किसीसे नहीं मिलता, बताओ कि उसका कहना सत्य है या नहीं ?

७ क्या सब ही प्रतिमाओंपर चिन्ह होते हैं ? जिस प्रतिमापर चिन्ह न हो उसे तुम किसकी कहोगे ?

८ यदि प्रतिमाओंपर चिन्ह नहीं हों तो क्या कठिनाई होगी ?

९ यदि अजितनाथ भगवानकी प्रतिमापरसे हाथीका चिन्ह उठाकर गेंड़ेका चिन्ह बना दिया जावे, तो बताओ उसे कौनसे भगवानकी प्रतिमा कहोंगे ?

१० साँथियाका आकार लिखकर बताओ ?

चौथा पाठ ।

सप्तव्यसन ।

व्यसन उन्हें कहते हैं जो आत्माके स्वरूपको भुला देवें, तथा आत्माका कल्याण न होने देवें । किसी भी विषयमें लवलीन होनेके व्यसन कहते हैं । यहाँ बुरे विषयमें लवलीन होना ही व्यसन है । व्यसन सेवन करनेवाले व्यसनी कहलाते हैं । और लोकमें बुरी दृष्टिसे देखे जाते हैं ।

व्यसन सात हैं—१ जूआ खेलना, २ मांस खाना, ३ मदिरापान करना, ४ शिकार खेलना, ५ वेश्यागमन करना, ६ चोरी करना, और ७ परस्त्री सेवन करना ।

१ रुपये पैसे और कोड़ियों वगैरहसे नक्की मूठ खेलना और हार जीतपर दृष्टि रखते हुए शर्त लगाकर कोई काम करना जूआ कहलाता है । जूआ खेलनेवाले जुआरी कहलाते हैं जैसे अफीम आदिके १—२—३ आदि अंकोंपर सरत लगाना । जुआरी लोगोंका हर जगह अपमान होता है । जातिके लोग उनकी निंदा करते हैं और राजा उन्हें दण्ड देता है । जूआ खेलनेवालेको अन्य समस्त व्यसनोंमें जबरन फँसना पड़ता है ।

२ जीवोंको मारकर अथवा मरे हुए जीवोंका कलेवर खाना, मांस खाना कहलाता है। मांस खानेवाले हिंसक और निर्दयी कहलाते हैं।

३ शराब, भाँग, चरस, गाँजा, वगैरह नशीली चीजोंका सेवन करना मदिरापान कहलाता है। इनके सेवन करनेवाले शराबी और नशेबाज कहलाते हैं। शराबियोंको धर्म कर्म और भले बुरेका कुछ भी विचार नहीं रहता। उनका ज्ञान विचार नष्ट हो जाता है। औरोंकी तो क्या घरके लोग भी उनपर विश्वास नहीं करते।

४ जंगलके रीछ, बाघ, सूअर हिरण वगैरह स्वछंद फिरनेवाले जानवरोंको तथा उड़ते हुए छोटे छोटे पक्षियोंके अथवा और किसी जीवको बन्दूक वगैरह हथियारोंसे मारना शिकार खेलना कहलाता है। इस बुरे कामके करनेवालोंके महान् पापका बंध होता है। इन पापियोंके हाथमें बन्दूक वगैरह देखते ही जंगलके जानवर भयभीत हो जाते हैं।

५ वेश्या (बाजारकी औरत) से रमनेकी इच्छा करना, उसके घर आना जाना, उससे अतिशय प्रीति रखना, वेश्याव्यसन कहलाता है। वेश्या व्यभिचारिनी स्त्री होती हैं। उससे सम्बन्ध रखनेसे ही मनुष्य व्यभिचारी हो जाता है। व्यभिचारसे बुरे कर्मोंका बन्ध होता है, वेश्यागमनसे अनेक प्रकारके दुःसाध्य रोग भी हो जाते हैं, इसके सिवाय वेश्यासेवन करनेसे मा [illegible] सेवन करनेका पाप भी लगता है, [illegible]

नामकी वेश्याके साथ विषय सेवन करनेसे एक ही भवमें १८ नातेकी कथा प्रसिद्ध है।

६ प्रमादसे विना दी हुई, किसीकी गिरी हुई, या पड़ी हुई, या रक्खी हुई, या भूली हुई चीजको उठा लेना अथवा उठाकर किसीको दे देना चोरी है। जिसकी चीज चोरी चली जाती है, उसके मनमें बड़ा खेद होता है और इस खेदका कारण चोर होता है। इसके सिवाय चोरी करते समय चोरके परिणाम भी बड़े मलिन होते हैं। इस कारण चोरके महान् अशुभ कर्मोंका वन्ध होता है। लोकमें भी चोर दंड पाते हैं और सब कोई उन्हें घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं।

७ अपनी स्त्री अर्थात् जिसके साथ धर्मानुकूल विवाह किया है, उसको छोड़कर और सब स्त्रियाँ मां वहिनके समान हैं। अपनेसे बड़े मां बराबर है और छोटी वहिन बेटीके बराबर है। उनके साथ विषय सेवन करना मानो अपनी मां वहिन और बेटीके साथ विषय सेवना है।

प्रश्नावली।

१ व्यसन किसे कहते हैं और ये व्यसन कितने होते हैं?

२ शतरंज, ताश, गंजफा खेलना, रुई, अफीम वगैरहके आँकोंपर सट्टा लगाना, लाटरी डालना, जिंदगीका बीमा करना, पार्टी बनाकर कबड्डी, क्रिकेट, फुटबाल खेलना जूआ है या नहीं?

३ परस्त्री और वेश्यामें क्या भेद? परस्त्रीका त्यागी वेश्याका त्यागी है या नहीं?

४ मदिरापानसे क्या समझते हो? भाँग, चरस, गाँजा मदिरामें शामिल है या नहीं?

५ एक अंगरेजने जूनागढ़के जंगलमें एक बड़ा शेर मारा, बताओ उसको पुण्य हुआ या पाप? यदि पाप हुआ तो कौनसा?

६ वसंततिलका वेश्याकी कथा सुनी हो तो एक ही भवमें १८ नाते कैसे हुए?

७ सबसे बुरा व्यसन कौनसा है और ऐसे ऐसे कौन कौन व्यसन हैं जिनमें हिंसाका पाप लगता है?

८ परस्त्रीसेवन करनेसे माता बहिन सेवन करनेका पाप क्यों लगता है?

पाँचवाँ पाठ।

आठ मूलगुण

मूलगुण मुख्य गुणोंको कहते है। कोई भी पुरुष जबतक आठ मूलगुण धारण नहीं करता; तबतक श्रावक नहीं कहला सकता है, श्रावक बननेके लिए इनको धारण करना बहुत जरूरी है। मूलनाम जड़का है, जैसे जड़के बिना पेड़ नहीं ठहर सकता, उसी प्रकार बिना मूलगुणोंके श्रावक नहीं हो सकता।

श्रावकके ये आठ मूलगुण है—तीन मकारका त्याग, अर्थात् मद्य त्याग, मांस त्याग, मधुका त्याग और पाँच उदुम्बर फलोंका त्याग।

१ शराब वगैरह मादक वस्तुओंके सेवन करनेका त्याग करना मद्यत्याग है। अनेक पदार्थोंको मिलाकर और उनको सड़ाकर शराब बनाई जाती है। इस कारण से उसमें बहुत जल्दी असंख्यात जीव पैदा हो जाते हैं और उसके सेवन करनेमें जीवोंकी महान् हिंसाका पाप लगता है। इसके सिवाय उसको पीकर आदमी पागलसा हो जाता है, और तो क्या शराबियोंके

मुँहमें कुत्ते भी मूत जाते हैं। इसलिए शराब तथा भंग चरस वगैरह मादक वस्तुओंका त्याग करना ही उचित है।

२ मांस खानेका त्याग करना मांस त्याग कहलाता है दो इंद्रिय आदि जीवोंके घात करनेसे मांस होता है। मांसमें अनेक जीव हर समय पैदा होते और मरते रहते हैं। मांसको छूनेसे ही वे जीव मर जाते हैं। इसलिये जो मांस खाता है, वह अनंत जीवोंकी हिंसा करता है। इसके सिवाय मांसभक्षणसे अनेक प्रकारके असाध्य रोग हो जाते है और स्वभाव क्रूर व कठोर हो जाता है, इस कारण मांसका त्याग करना ही उचित है।

३ शहद खानेका त्याग करना मधुत्याग है। शहद मक्खियोंका वमन (कय) है। इसमें हर समय छोटे छोटे जीव उत्पन्न होते रहते हैं। बहुतसे लोग मक्खियोंके छत्तेको निचोड़कर शहद निकालते हैं। छत्तेके निचोड़नेमें उसमेंकी मक्खियाँ और उनके छोटे छोटे बच्चे मर जाते हैं और उनका सारा रस शहदमें आजाता है जिसके देखनेसे ही घिन आती है। ऐसी अपवित्र वस्तु खाने योग्य नहीं हो सकती। उसका त्याग करना ही उचित है।

४-८ बड़, पीपर, पाकर, कठूमर, (कटहल) और गूलर इन फलोंका त्याग करना पाँच उदुम्बरोंका त्याग करना कहलाता है। इन फलोंमें छोटे छोटे अनेक त्रसजीव रहते हैं। बहुतोंमें साफ साफ दिखाई पड़ते हैं और बहुतोंमें छोटे होनेसे दिखाई नहीं पड़ते। इन फलोंके खानेसे वे सब जीव मर जाते हैं, इसलिए इनके खानेका त्याग करना ही उचित है।

प्रश्नावली ।

१ मूलगुण किसे कहते हैं और ये गुण किसके होते हैं ?

२ मूलगुण कितने होते हैं ? नाम सहित बताओ ।

३ एक जैनीने सर्वथा जीवहिंसाका त्याग कर दिया, तो बताओ वह इन अष्टमूलगुणोंका धारी है या नहीं ?

४ मद्यसेवन करनेसे क्या क्या हानियाँ होती हैं ? मांसका त्यागी मद्यसेवन करेगा या नहीं ?

५ क्या सब ही फलोंके खानेमें दोष हैं या केवल बड़ पीपर वगैरह फलोंमें ही ? और क्यों ?

छट्ठा भाग ।

अभक्ष्य

जिन पदार्थोंके खानेसे त्रसजीवोंका घात होता हो, अथवा बहुत स्थावर जीवोंका घात होता हो, जो प्रमाद बढ़ानेवाले हों, और जो शरीरको अनिष्ट करनेवाला हो तथा जो भले पुरुषोंके सेवन करने योग्य नहीं हो वे सब अभक्ष्य हैं अर्थात् भक्षण करने योग्य नहीं हैं ।

कमलकी डंडीके समान भीतरसे पोले पदार्थ जिनमें बहुतसे सूक्ष्म जीव रह सकते हैं तथा हरी मुलेठी, बेर, द्रोणपुष्प (एक प्रकारके पेड़का फूल), ऊमर, द्विदल[1] आदिके खानेमें मूली, गाजर, लहसुन, अदरक, शकरकंदी, आलू, अरवी

---

[1] कच्चे दूधमें, कच्चे दहीमें, और कच्चे दूधके जमे हुए दहीकी छाँछमें उड़द, मूँग, चना आदि द्विदल (दो दाल वाले) अन्नके मिलानेसे द्विदल बनता है ।

(गागली, घुईयाँ), सूरण, तरबूज, तुच्छ फल (जिस फलमें बीज न पड़े हों) बिलकुल अनन्तकाय वनस्पति आदि पदार्थोंके खानेमें अनंत स्थावर जीवोंका घात होता है।

शराब, अफीम, गांजा, भंग, चरस, तंबाकू वगैरह प्रमाद बढ़ानेवाली चीजें हैं। भक्ष्य होनेपर भी जो हितकर (पथ्य) न हों उन्हें अनिष्ट कहते हैं। जैसे खाँसीके रोगवालेको बरफी हितकर नहीं है। जिनको उत्तम पुरुष बुरा समझें, उन्हें अनुपसेव्य कहते हैं। जैसे लार, मूत्र आदि पदार्थोंका सेवन। इनके सिवाय नवनीत (मक्खन) सूखे उदम्बर फल, चमड़ेमें रक्खे हुए हींग, घी, आदि पदार्थ। आठ पहरसे ज्यादहका संधान (आचार) व मुरब्बा, काँजी, सब प्रकारके फूल, अजानफल, पुराने मूँग, उड़द, वगैरह द्विदलान्न, वर्षाऋतुमें पत्तेवाले शाक और विना दले हुए उड़द मूँग वगैरह द्विदल अन्न भी अभक्ष्य हैं। चलित रस, खट्टा दही, छाछ तथा विना फाड़ी विना देखी हुई सेम, राजभाष, (रोंसा) आदिकी फली आदि भी अभक्ष्य है।

प्रश्नावली।

१ अभक्ष्य किसे कहते हैं ? क्या सब ही शाक पात अभक्ष्य हैं ? यदि कोई महाशय सब्जी मात्रका त्याग कर दे; परन्तु और सब चीजें खाता रहे तो बताओ वे अभक्ष्यका त्यागी है या नहीं ?

२ अनिष्ट और अनुपसेव्यसे क्या समझते हो ? प्रत्येकके दो दो उदाहरण दो।

३ द्विदल क्या होता है ? क्या तमाम अनाज द्विदल हैं ? यदि नहीं, तो कमसे कम चार द्विदल अनाजोंके नाम बताओ।

४ इनमें कौन कौन अभक्ष्य हैं:—बैंगन, दहीवड़ा, पेड़ा, गोभीका फूल आम, मक्खन, खीरा, कमलगट्टा, आलू, कचालू, सोया, पालक, घी, गाजर, नींबूका आचार, बादाम, चिरोंजीका रायता।

५ कुछ ऐसे अभक्ष्य पदार्थोंके नाम बताओ जिनमें त्रस जीवोंकी हिंसा होती हो।

६ अभक्ष्य कितने हैं? लोकमें जो बाईस अभक्ष्य प्रसिद्ध हैं, उनके विषयमें तुम क्या जानते हो?

७ अभक्ष्यका त्यागी मूलगुणधारी है या नहीं?

सातवाँ पाठ।

व्रत।

अच्छे कामोंके करनेका नियम करना अथवा बुरे कामोंका छोड़ना यह व्रत कहलाता है।

ये व्रत १२ होते हैं:—अणुव्रत ५, गुणव्रत ३, शिक्षाव्रत ४, इनको श्रावकके उत्तरगुण भी कहते है। इनका पालनेवाला श्रावक (व्रती) कहलाता है।

अणुव्रत।

हिंसा झूठ चोरी वगैरह पाँच पापोंका स्थूल रीतिसे एक-देश त्याग करना अणुव्रत कहलाता है।

---

[१] श्रावक स्थूल रीतिसे पापोंका त्याग करते हैं, इस कारण उनके व्रत अणुव्रत कहलाते हैं, मुनि पूर्ण रीतिसे त्याग करते हैं, इसलिए उनके व्रत महाव्रत कहलाते हैं।

अणुव्रत ५ होते हैं:—१ अहिंसाव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ अचौर्याणुव्रत, ४ ब्रह्मचर्याणुव्रत, और ५ परिग्रह-परिमाणुव्रत ।

१ प्रमादसे संकल्पपूर्वक (इरादा करके) त्रस जीवोंका घात नहीं करना, अहिंसा अणुव्रत है । अहिंसाणुव्रती 'मैं इस जीवको मारूँ' ऐसे संकल्पसे कभी किसी जीवका घात नहीं करता, न कभी किसी जीवके मारनेका विचार करता है और न वचनसे किसीसे कहता है कि तुम इसे मारो । घरवार वनाने, खेती व्यापार करने तथा शत्रुसे अपनेको बचानेमें जो हिंसा होती है उसका गृहस्थ त्यागी नहीं होता ।

२ स्थूल (मोटा) झूठ न तो आप बोलना, न दूसरेसे बुलवाना और ऐसा सच भी नहीं बोलना जिसके बोलनेसे किसी जीवका अथवा धर्मका घात होता हो । भावार्थ-प्रमादसे जीवोंको पीड़ाकारक वचन नहीं बोलना सो सत्य अणुव्रत है ।

३ लोभ वगैरह प्रमादके वशमें आकर बिना दिये हुए किसीकी वस्तुको ग्रहण नहीं करना अचौर्य अणुव्रत है । अचौर्य अणुव्रतका धारी दूसरेकी चीजको न तो आप लेता है और न उठाकर दूसरेको देता है ।

४ परस्त्रीसेवनका त्याग करना ब्रह्मचर्य अणुव्रत है । ब्रह्मचर्य अणुव्रतका धारी अपनी स्त्रीको छोड़कर अन्य सब स्त्रियोंको पुत्री और बहिनके समान समझता है । कभी किसीको बुरी निगाहसे नहीं देखता है ।

५ अपनी इच्छानुसार धन, धान्य, हाथी, घोड़े, नौकर,

चाकर, वर्तन, कपड़ा वगैरह परिग्रहका परिमाण कर लेना कि मैं इतना रक्खूँगा, वाकी सबका त्याग कर देना, परिग्रह-परिमाण अणुव्रत है।

गुणव्रत।

गुणव्रत उन्हें कहते हैं, जो अणुव्रतोंका उपकार करें। गुणव्रत ३ हैं—१ दिग्व्रत, २ देशव्रत, ३ अनर्थदण्डव्रत।

१ लोभ आरंभ वगैरहके त्यागके अभिप्रायसे पूरव पश्चिम वगैरह चारों दिशाओंमें प्रसिद्ध नदी, गाँव, नगर, पहाड़, वगैरहकी हद बाँध करके जन्मपर्यंत उस हदके वाहर न जानेका नियम करना दिग्व्रत कहलाता है। जैसे किसी आदमीने जन्मभरके लिए अपने आने जानेकी मर्यादा उत्तरमें हिमालय, दक्षिणमें कन्याकुमारी, पूर्वमें ब्रह्मदेश और पश्चिममें सिन्धु नदी तक कर ली, अब वह जन्मभर इस सीमाके वाहर नहीं जायगा। वह दिग्व्रती है।

२ घड़ी, घंटा, दिन, महीना वगैरह नियत समय तक और जन्म पर्यंतके किए हुए दिग्व्रतमें और भी संकोच करके किसी ग्राम, नगर, घर, मोहल्ला वगैरह तक आना जाना रख लेना और उससे वाहर न जाना देशव्रत[१] है। जैसे जिस पुरुषने ऊपर लिखी सीमा नियत करके दिग्व्रत धारण किया है, वह यदि ऐसा नियम कर लेवे कि मैं भादोंके महीनेमें इस शहरके वाहर नहीं जाऊँगा अथवा आज इस

१ कहीं कहींपर देशव्रतको शिक्षाव्रतोंमें लिया है और भोगोपभोग परिमाण-व्रतको दिग्व्रतमें।

मकानके बाहर नहीं जाऊँगा तो उसके देशव्रत * समझना चाहिये ।

३ विना प्रयोजन ही जिन कामोंमें पापका आरंभ हो उन कामोंका त्याग करना, अनर्थदण्डव्रत है । इस व्रतका धारी न कभी किसीको वनस्पति छेदने, जमीन खोदने वगैरह पापके कामोंका उपदेश देता है, न किसीको विष (जहर) शस्त्र (हथियार) वगैरह हिंसाके उपकरणोंको माँगे देता है, न कषाय उत्पन्न करनेवाली कथाएँ सुनता है, न किसीका बुरा विचारत है, और न बेमतलब व्यर्थ जल बखेरता है । और न आग जलाता है । कुत्ता बिल्ली वगैरह जीवोंको भी जो मांस खाते हैं, नहीं पालता ।

शिक्षाव्रत ।

शिक्षाव्रत उन्हें कहते हैं जिनसे मुनिव्रत पालन करनेकी शिक्षा मिले ।

शिक्षाव्रत ४ हैं:—१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ भोगोपभोगपरिमाण, ४ अतिथिसंविभाग ।

१ मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना करके नियत समय तक पाँचों पापोंका त्याग करना और सबसे

*दिग्व्रत और देशव्रतसे यह न समझना चाहिए कि जैनियोंमें बाहर आना जाना अथवा संसारका ज्ञान प्राप्त करना बुरा है । इनका मतलब यह है कि हम अपने लोभ और आरम्भको जिसमें हम फँसे हुए कुछ भी आत्मकल्याण नहीं कर सकते हैं, कम करें । केवल अपनी इच्छाओंको कम करना इनका अभिप्राय है । आप चाहे अपने आने जानेका क्षेत्र कितना ही रख लें परन्तु हद उसकी जरूर कर लें ।

राग-द्वेष छोड़कर, अपने शुद्ध आत्मस्वरूपमें लीन होना, सामायिक कहलाता है। सामायिक करनेवालेको प्रातःकाल और सायंकाल किसी उपद्रव रहित एकांत स्थानमें तथा घर, धर्मशाला अथवा मंदिरमें आसन वगैरह ठीक करके सामायिक करना चाहिये और विचारना चाहिये कि जिस संसारमें मैं रहता हूँ, अशरणरूप, अशुभरूप, अनित्य, दुःखमयी और पररूप है और मोक्ष उससे विपरीत है इत्यादि।

प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशीको समस्त आरम्भ छोड़ना और विषय कषाय तथा आहार पानीका १६ पहरतक त्याग करना, प्रोषधोपवास कहलाता है। प्रोषध एक वार भोजन करने अर्थात् एकाशनका नाम है। एकाशनके साथ उपवास करना प्रोषधोपवास कहलाता है। जैसे किसी पुरुषको अष्टमीका प्रोषधोपवास करना है, तो उसे सप्तमी और नवमीको एकाशन और अष्टमीको उपवास करना चाहिये और शृंगार आरंभ, गंध, पुष्प (तेल, इतर फुलेल), स्नान, अंजन सूँघनी वगैरह चीजोंका त्याग करना चाहिये। यह उत्कृष्ट प्रोषधोपवासकी रीति है। व्रती प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशीको कमसे कम एकभुक्त करके भी धर्मध्यान कर सकता है।

३ भोजन, वस्त्र, आभूषण आदि भोगोपभोग[१] वस्तुओंको जन्मपर्यन्त अथवा कुछ कालकी मर्यादा लेकर त्याग करना

---

१ जो वस्तु एक वार ही सेवन करनेमें आती है, वह भोग है, जैसे भोजन और जो वस्तु बार बार भोगनेमें आती है वह उपभोग है, जैसे वस्त्र, चारपाई, स्त्री। कहीं कहींपर भोगको उपभोग और उपभोगको परिभोग भी कहा है।

भोगोपभोगपरिमाणव्रत है । जो पदार्थ अभक्ष्य हैं अथवा ग्रहण करने योग्य नहीं हैं, उनका तो सर्वथा जन्मपर्यंतके लिए त्याग करना चाहिए और जो भक्ष्य तथा ग्रहण करने योग्य हैं, उनका भी त्याग घड़ी, घंटा, दिन, महिना, वर्ष वगैरह कालकी मर्यादा लेकर करना चाहिए ।

४ भक्ति सहित, फलकी इच्छाके विना, धर्मार्थ मुनि वगैरह श्रेष्ठ पुरुषोंको दान देना, अतिथिसंविभागव्रत है । दान चार प्रकारका है:—१ आहारदान, २ ज्ञानदान, ३ औषधदान, ४ अभयदान ।

१ मुनि, त्यागी, श्रावक, व्रती तथा भूखे, अनाथ विधवाओंको भोजन देना आहारदान है ।

२ पुस्तकें बाँटना, पाठशालाएँ खोलना, व्याख्यान देकर धर्म और कर्तव्यका ज्ञान कराना ज्ञानदान है ।

३ रोगी मनुष्योंको औषध देना, उनकी चर्या करना औषधदान है ।

४ जीवोंकी रक्षा करना अथवा मुनि त्यागी और ब्रह्मचारी लोगोंके रहनेके लिए स्थान बनवाना, अँधेरी रातमें सड़कोंपर लेम्प जलवाना, चौकी पहरा लगवाना, धर्मात्मा पुरुषोंको दुःख और संकटसे निकालना अभयदान है ।

प्रश्नावली ।

१ व्रत किसे कहते हैं ? व्रतोंके कितने भेद हैं ?

२ अणुव्रत, महाव्रत, भोग, उपभोग, यम, नियम, दिग्व्रत, देशव्रत, और प्रोषध, उपवास, प्रोषधोपवासमें क्या भेद है ?

---

१ जीवनपर्यन्त त्यागको यम और कालकी मर्यादासे त्यागको नियम कहते है ।

उदाहरण देकर समझाओ।

३ इन प्रश्नोंके उत्तर दोः—

(क) प्रोषधोपवासके दिन क्या क्या करना चाहिये ?

(ख) ग्यारहवीं प्रतिमाधारीके व्रत अणुव्रत हैं या महाव्रत ?

(ग) सामायिक कहाँ और किस समय करनी चाहिये और सामायिक करते समय क्या विचार करना चाहिये ?

(घ) अनर्थदण्डव्रतका धारी ऐसी पुस्तकें पढ़ेगा व सुनेगा या नहीं जिनमें जीवहिंसा और युद्धका कथन हो ?

(ङ) पंचाणुव्रतका पालनेवाला कौनसी प्रतिमाका धारी है ?

(च) अहिंसाणुव्रतका धारी लड़ाईमें जाकर लड़ेगा या नहीं ? मन्दिर, कुआ, तालाब बनवायगा या नहीं ? खेती करेगा या नहीं ?

(छ) छपी हुई पुस्तकें बाँटना, अंग्रेजी तथा शिल्पविद्याके लिये रुपया देना ज्ञानदान है या नहीं ?

(ज) गुणव्रत तथा शिक्षाव्रत विना अणुव्रतके हो सकते हैं या नहीं ? क्या शिक्षाव्रती अणुव्रती है ?

(झ) एक पुरुषने यह नियम किया कि मैं एशिया, योरोप, अफरीका, अमेरिका, आस्ट्रेलिया अर्थात् पञ्च महाद्वीपोंके बाहर न जाऊँगा तो बताओ उसका यह दिग्व्रत है या नहीं ?

(ञ) एक पंडित महाशय विना कुछ लिये दिये विद्यार्थियोंको पढ़ाते हैं तो बताओ वे कौनसा व्रत पाल रहे हैं ?

(ट) मिथ्यात्वका नाश करने और ज्ञानका प्रकाश करनेके लिये अकलंकने आपत्ति पड़नेपर झूठ बोलकर अपने प्राणोंकी रक्षा की, बताओ उन्हें झूठका पाप लगा या नहीं ?

(ठ) सड़कपर एक पैसा पड़ा था, हरिने उठाकर एक भिखारीको दे दिया, बताओ हरिने अच्छा किया या बुरा ?

(ड) साफ मालूम है कि अपराधीको फाँसीकी सजा मिलेगी, किसी सूरतसे उसके प्राण नहीं बच सकते, उसको बचानेके लिये झूठी गवाही देना अच्छा है या बुरा ?

(ढ) एक दुष्टा स्त्री सदा अपने कटु शब्दोंसे अपने पिताका जी दुखाती है बताओ वह कौनसा पाप करती है ?

(ण) एक जुआरी अपना सब रुपया हार जानेके बाद घर आकर अपनी स्त्रीसे कहने लगा कि यदि तुम्हारे पास कुछ रुपया हो तो दे दो। यद्यपि स्त्रीके पास रुपया था, परन्तु जुवेके कारण उसने कह दिया कि मेरे पास तो एक फूटी कौड़ी भी नहीं, मैं कहाँसे दूँ ? बताओ उसने झूठ बोला या सच ?

४ अतिथिसंविभागव्रत, अनर्थदण्डव्रत, और परिग्रहपरिमाणुव्रतसे क्या समझते हो ? उदाहरण सहित बताओ।

आठवाँ पाठ।

ग्यारह प्रतिमा।

श्रावकोंके ११ दरजे होते हैं, उन्हें ग्यारह प्रतिमा कहते हैं। श्रावक ऊँचे ऊँचे चढ़ता हुआ एकसे दूसरी, दूसरीसे तीसरी, तीसरीसे चौथी, इसी तरह ग्यारहवीं प्रतिमा तक चढ़ता है और उससे ऊपर चढ़कर साधु या मुनि कहलाता है। अगली अगली प्रतिमाओंमें पहलेकी प्रतिमाओंकी क्रियाका होना भी जरूरी है।

दर्शनप्रतिमा–सम्यग्दर्शन सहित अतीचार रहित आठ मूलगुणोंका धारण करना और सात व्यसनोंका अतीचार सहित त्याग करना दर्शनप्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी दार्शनिकश्रावक कहलाता है। वह सदा संसारसे उदासीन दृढ़चित्त रहता है और मुझे इस शुभ कामका फल मिले ऐसी वांछा नहीं रखता।

२ व्रतप्रतिमा–पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षा-व्रत, इन १२ व्रतोंका पालना व्रतप्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी व्रती श्रावक कहलाता है।

३ सामायिकप्रतिमा—प्रतिदिन प्रातःकाल, मध्यान्हकाल और सायंकाल अर्थात् सवेरे, दुपहर, शामको दो दो घड़ी विधिपूर्वक[1] निरतिचार सामायिक करना सामायिकप्रतिमा है।

४ प्रोषधप्रतिमा—हरएक अष्टमी और चतुर्दशीको १६ पहरका अतीचार रहित उपवास अर्थात् प्रोषधोपवास करना और गृह, व्यापार, भोग, उपभोगकी तमाम सामग्रीका त्याग करके एकांतमें बैठकर धर्मध्यानमें लगना, प्रोषधप्रतिमा है। मध्यम १२ और जघन्य ८ पहरका प्रोषध होता है।

५ सचित्तत्यागप्रतिमा—हरी वनस्पति अर्थात् कच्चे फल फूल बीज पत्ते वगैरहको न खाना सचित्तत्यागप्रतिमा है।

---

१ सामायिक करनेकी विधि यह हैः—पहले पूर्व दिशाकी ओर मुँह करके खड़ा होकर नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़ दण्डवत् करे, फिर उसी तरफ खड़े होकर तीन दफे णमोकार मन्त्र पढ़ तीन आवर्त और एक नमस्कार (शिरोनति) करे और फिर क्रमसे दक्षिण पश्चिम और उत्तर दिशाकी ओर तीन तीन आवर्त्त और एक एक नमस्कार करे अनन्तर पूर्व दिशाकी ओर मुँह करके खड़े होकर अथवा बैठकर मन वचन कायको शुद्ध करके पाँचों पापोंका त्याग करे, सामायिक पढ़े, किसी मन्त्रका जप करे अथवा भगवानकी शान्ति मुद्राका या चैतन्य मात्र शुद्ध स्वरूपका अथवा कर्म-उदयके रसकी जातिका चिन्तवन करे, फिर अन्तमें खड़ा हो ९ दफे मन्त्र पढ़ दण्डवत करे। सामायिकका उत्कृष्ट समय ६ घड़ी, मध्यम ४ घड़ी और जघन्य २ घड़ी है। २४ मिनटकी एक घड़ी होती है।

जिसमें जीव होते हैं उसे सचित्त कहते है। अतएव ऐसे पदार्थको जिसमें जीव हों न खाना सचित्तत्यागप्रतिमा है।

६ रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा—कृत कारित अनुमोदनासे और मन वचन कायसे रात्रिमें हरएक प्रकारके आहारका त्याग करना अर्थात् सूरज छिपनेके २ घड़ी पहलेसे सूरज निकलनेके २ घड़ी पीछे तक आहार पानीका बिलकुल त्याग करना, रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा है।

कहीं कहींपर इस प्रतिमाका नाम दिवामैथुन त्याग प्रतिमा भी है। अर्थात् दिनमें मैथुनका त्याग करना।

७ ब्रह्मचर्यप्रतिमा—मन वचन कायसे स्त्री मात्रका त्याग करना ब्रह्मचर्यप्रतिमा है।

८ आरंभत्यागप्रतिमा—मन वचन कायसे और कृत कारित अनुमोदनासे गृह-कार्य संबंधी सब तरहकी क्रियाओंका त्याग करना, आरंभत्यागप्रतिमा है। आरंभत्याग प्रतिमावाला स्नान दान पूजन वगैरह कर सकता है।

९ परिग्रहत्यागप्रतिमा—धन धान्यादि परिग्रहको पापका कारणरूप जानते हुए आनंदसे उनका छोड़ना परिग्रहत्याग-प्रतिमा है।

१० अनुमतित्यागप्रतिमा—गृहस्थाश्रमके किसी भी कार्यका अनुमोदन नहीं करना, अनुमतित्यागप्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी उदासीन होकर घरमें या चैत्यालय या मठ वगैरहमें बैठता है। घरपर या और जो कोई श्रावक भोजनके लिए बुलावे उसके यहाँ भोजन कर आता है।

किन्तु अपने मुँहसे यह नहीं कहता कि मेरे वास्ते वह चीज बनाओ।

११ उद्दिष्टत्यागप्रतिमा—घर छोड़कर वनमें या मठ वगैर-हमें तपश्चरण करते हुए रहना, खण्डवस्त्र धारण करना, विना याचना किये भिक्षावृत्तिसे योग्य उचित आहार लेना उद्दिष्ट-त्यागप्रतिमा है। इस प्रतिमाधारीके दो भेद हैं:—१ क्षुल्लक २ ऐलक। क्षुल्लक अपने शरीरपर छोटी चादर रखते हैं पर ऐलक लंगोटी मात्र रखते हैं।

प्रश्नावली।

१ प्रतिमा किसे कहते है? और इसके कितने भेद हैं? नाम सहित बताओ। भगवानकी मूर्तिको भी प्रतिमा कहते हैं, बतलाओ उक्त प्रतिमा शब्दका इससे कुछ सम्बन्ध है या नहीं?

२ प्रतिमाओंका पालन कौन करता है? किसी प्रतिमाके पालन करनेके लिए उससे पहलेकी प्रतिमाओंका पालन करना जरूरी है या नहीं?

३ एक आदमी अभी तक किसी भी प्रतिमाका पालन नहीं करता था परन्तु अब उसने पहली प्रतिमा धारण करली, तो बताओ उसने पहलेसे क्या उन्नति की?

४ निम्न लिखित कौन प्रतिमाओंके धारी हैं? ब्रह्मचारी, पर्वोंके दिन प्रोषधोपवास करनेवाला, घरका कोई भी काम न करके तमाम दिन धर्मध्यान करनेवाला, स्त्री मात्रका त्याग करनेवाला, एक लंगोटीके सिवाय और किसी तरहका परिग्रह न रखनेवाला।

५ ये ऊँचीसे ऊँची कौनसी प्रतिमाओंका पालन कर सकते हैं।—गृहस्थ, स्त्री, पुरुष, पशु, पक्षी।

६ कोट बूट पतलून पहिनते हुए, सौदागिरी करते हुए, रेलमें सफर करते हुए, लंदनमें रहते हुए, लड़ाईके मैदानमें लड़ते हुए, वकालत, अध्यापकी, वैद्यक, ज्योतिषी, सम्पादकी करते हुए, राज्य और न्याय करते हुए, कौनसी प्रतिमाका पालन हो सकता है?

७ इन प्रश्नोंके उत्तर दोः—

(क) सातवीं प्रतिमाधारी स्त्रियोंके बीच खड़ा होकर व्याख्यान दे सकता है या नहीं ?

(ख) दसवीं प्रतिमाधारीको यदि कोई भोजनका बुलावा दे तो उसके यहाँ जाय या नहीं ?

(ग) ग्यारहवीं प्रतिमाधारी पाठशाला खुलवा सकता है या नहीं ? उसके लिए रुपया देनेको अनुमोदना करेगा या नहीं तथा रेल, घोड़े, गाड़ी वगैरहमें बैठेगा या नहीं ?

(घ) आठवीं प्रतिमाका धारी मंदिर बनानेकी सलाह देगा या नहीं तथा पूजन करेगा या नहीं ?

(ङ) उद्दिष्टत्यागप्रतिमाधारी किसीसे धर्म पुस्तक अर्थात् शास्त्रके लिए याचना करेगा या नहीं ? कोई पुस्तक लिखेगा या नहीं ? रोग हो जानेपर किसीसे उसका जिक्र करेगा या नहीं ?

(च) दूसरी प्रतिमाधारीके लिए तीनों समय सामायिक करना जरूरी है या नहीं ?

(छ) प्लेग आ जानेपर पहली प्रतिमाका धारी प्लेगग्रसित स्थानको छोड़ेगा या नहीं अथवा किसी सम्बन्धीके मरनेपर रोयेगा या नहीं ?

(ज) जिस स्थानपर कोई जैनी न हो तथा जैनमंदिर न हो वहाँ प्रतिमाधारी रहेगा या नहीं ?

(झ) सामायिककी क्या विधि है, इसका करना कौनसी प्रतिमाधारीके लिए आवश्यक है ?

(ञ) सचित्त किसे कहते हैं ? कच्चे फल फूल सचित्त हैं या नहीं ?

(ट) दूसरी प्रतिमाका धारी रातको भोजन करेगा या नहीं ? यदि नहीं तो छठी प्रतिमा रात्रिभोजनत्याग क्यों रक्खी है ?

(ठ) सातवीं प्रतिमाधारी मनुष्य क्या क्या काम करेगा और क्या क्या नहीं करेगा ?

(ड) ग्यारहवीं प्रतिमाधारी श्रावक है या मुनि ? उसके पास क्या क्या वस्तुएँ होती हैं ?

नौवाँ पाठ।

तत्त्व और पदार्थ।

तत्त्व सात होते हैं:—१ जीव, २ अजीव, ३ आस्रव, ४ बंध, ५ संवर, ६ निर्जरा, ७ मोक्ष।

जीव

जीव उसे कहते हैं, जो जीवें, जिसमें चेतना हो अथवा जिसमें प्राण हों। पाँच इंद्रिय, तीन बल (मनबल, वचनबल, कायबल), आयु और श्वासोच्छ्वास, ये दस द्रव्यप्राण तथा ज्ञान दर्शन ये भावप्राण हैं। जिसमें ये पाये जाते हैं वे जीव[1] कहलाते हैं। जैसे मनुष्य देव, पशु पक्षी वगैरह।

अजीव

अजीव[2] उसे कहते हैं जिसमें चेतना गुण न हो अथवा जिसमें कोई प्राण न हो। जैसे लकड़ी पत्थर वगैरह।

आस्रव

आस्रव बंधके कारणको कहते हैं। इसके २ भेद हैं:—१ भावास्रव, २ द्रव्यास्रव। जैसे किसी नावमें कोई छेद हो जाय और उसमेंसे उस नावमें पानी आने लगे, इसी प्रकार

---

१ एक इन्द्रिय जीवमें स्पर्शन इन्द्रिय, आयु कायबल और श्वासोच्छ्वास, ये चार प्राण होते हैं। दो इंद्रिय जीवमें रसना (जिह्वा) इन्द्रिय और वचन बल मिलाकर ६ प्राण होते है। तीन इंन्द्रिय जीवमें नासिका (नाक) इंद्रिय बढ़कर सात प्राण हैं। चार इन्द्रिय जीवमें चक्षु (आँख) इन्द्रिय बढ़कर ८ प्राण हैं। पंचेन्द्रिय संज्ञीजीवमें मन मिलाकर पूरे दस प्राण होते हैं।

२ अजीवके पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ५ भेद हैं, जिनका कथन तीसरे भागमें आ चुका है।

आत्माके जिन भावोंसे कर्म आते हैं उन्हें भावास्राव कहते हैं और शुभ अशुभ पुद्गलके परमाणुओंको द्रव्यास्रव कहते हैं।

आस्रवके मुख्य ४ भेद हैं:—१ मिथ्यात्व, २ अविरति, ३ कषाय, ४ योग, इन्हीं चार खास कारणोंसे कर्मोंका आश्रव होता है।

१ मिथ्यात्व—संसारकी सब वस्तुओंसे जो अपनी आत्मासे अलग़ हैं राग और द्वेष छोड़कर केवल अपनी शुद्ध आत्माके अनुभवमें निश्चय करनेको सम्यक्त्व कहते हैं। यही आत्माका असली भाव है, इससे उल्टे भावको मिथ्यात्व कहते हैं। मिथ्यात्वकी वजहसे संसारी जीवमें तरह तरहके भाव पैदा होते हैं और इसीसे मिथ्यात्व कर्मबंधका कारण है। इसके ५ भेद हैं:—१ ऐकांत, २ विपरीत, ३ विनय, ४ संशय, ५ अज्ञान।

२ अविरति—आत्माके अपने स्वभावसे हटकर और और विषयोंमें लगना अविरति है। छह कायके जीवोंकी हिंसा करना और पाँच इंद्रिय और मनको वशमें नहीं करना अविरति है।

३ कषाय[६]—जो आत्माको कषे अर्थात् दुःख दे, वह कषाय है। इसके २५ भेद हैं:—अनंतानुबंधी क्रोध, मान,

---

१ वस्तुमें रहनेवाले अनेक गुणोंका विचार न करके उसका एक ही रूप श्रद्धान करना एकांतमिथ्यात्व हैं। २ उलटा श्रद्धान करना विपरीतमिथ्यात्व है। ३ सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्‌चारित्रकी अपेक्षा न करके सबका बराबर विनय और आदर करना विनयमिथ्यात्व है। ४ पदार्थोंके स्वरूपमें संशय (शुबह) रहना संशयमिथ्यात्व है। ५ हित अहितकी परीक्षा किए बिना ही श्रद्धान करना अज्ञानमिथ्यात्व है। ६ कषायोंका विशेष कथन आगे कर्मप्रकृतियोंमें किया जायगा।

अविरति, आदि परिणामोंके कारण कर्म आते हैं। और वे आत्माके प्रदेशोंके साथ मिल जाते हैं। जैसे धूल उड़कर गीले कपड़ेमें लग जाती है।

बंध और आस्त्रव साथ साथ एक ही समयमें होता है तथापि इनमें कार्य-कारणभाव है, इसलिए जितने आस्त्रव है उन सबको बंधके कारण समझना चाहिए।

संवर।

आस्त्रवका न होना अथवा आस्त्रवका रोकना, अर्थात् नष्ट कर्मोंका नहीं आने देना, संवर है।

जैसे जिस नावमें छेद हो जानेसे पानी आने लगा था अगर उस नावके छेद बंद कर दिये जायँ तो उसमें पानी आना बंद हो जायगा, इसी प्रकार जिन परिणामोंसे कर्म आते हैं, वे न होने पावें और उनकी जगहमें उनसे उल्टे परिणाम हों, तो कर्मोंका आना बंद हो जायगा। यही संवर है। इसके भी भावसंवर और द्रव्यसंवर दो भेद हैं। जिन परिणामोंसे आस्त्रव नहीं होता है, वे भावसंवर कहलाते हैं और उनसे जो पुद्गल परमाणु कर्मरूप होकर आत्मासे नहीं मिलते हैं, उसको द्रव्यसंवर कहते हैं।

यह संवर ३ गुप्ति, ५ समिति, १० धर्म, १२ अनुप्रेक्षा २२ परीषहजय और ५ चारित्रसे होता है अर्थात् संवरके गुप्ति, समिति, अनुप्रेक्षा, परीषहजयचारित्र ये ५ मुख्य भेद हैं।

गुप्ति—मन, वचन और कायसे हलन चलनको रोकना, ये तीन गुप्ति हैं।

समिति*—ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण, उत्सर्ग ये पाँच समिति हैं।

धर्म—उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य ये दस धर्म हैं।

अनुप्रेक्षा—वार वार चिंतवन करनेको अनुप्रेक्षा कहते हैं। अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ, धर्म ये १२ अनुप्रेक्षा हैं। इनको १२ भावना भी कहते हैं।

१ अनित्यभावना—ऐसा विचार करना कि संसारकी तमाम चीजें नाश हो जानेवाली हैं, कोई भी नित्य नहीं है।

२ अशरणभावना—ऐसा विचार करना कि जगत्में कोई शरण नहीं है और मरणसे कोई बचानेवाला नहीं है।

३ संसारभावना—ऐसा चिंतवन करना कि यह संसार असार है, इसमें जरा भी सुख नहीं है।

४ एकत्वभावना—ऐसा विचार करना कि अपने अच्छे बुरे कर्मोंके फलको यह जीव अकेला ही भोगता है, कोई सगा साथी नहीं बटा सकता।

५ अन्यत्वभावना—ऐसा विचार करना कि पुत्र स्त्री वगैरह संसारकी कोई भी वस्तु अपनी नहीं है।

६ अशुचिभावना—ऐसा विचार करना कि यह देह अपवित्र और घिनावनी है, इससे कैसे प्रीति करना चाहिए?

७ आस्रवभावना—ऐसा चिंतवन करना कि मन वचन

* समिति और १० धर्मोंका स्वरूप पूर्वमें दिया जा चुका है।

कायके हलन चलनसे कर्मोंका आस्रव होता है सो बहुत दुख-दाई है, इससे बचना चाहिए।

८ संवरभावना—ऐसा विचार करना कि संवरसे यह जीव संसार-समुद्रसे पार हो सकता है, इसलिए संवरके कारणोंको ग्रहण करना चाहिए।

९ निर्जराभावना—ऐसा विचार करना कि कर्मोंका कुछ दूर होना निर्जरा है, इसलिए इसके कारणोंको जानकर कर्मोंको दूर करना चाहिए।

१० लोकभावना—लोकके स्वरूपका विचार करना कि कितना बड़ा है, उसमें कौन कौन जगह है और किस किस जगह क्या क्या रचना है और उससे संसार-परिभ्रमणकी हालत मालूम करना।

११ बोधिदुर्लभभावना—ऐसा विचार करना कि मनुष्य-देह बड़ी कठिनाईसे प्राप्त हुई है, इसको पाकर बेमतलब न खोना चाहिए, किंतु रत्नत्रयको (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र) धारण करना चाहिए।

१२ धर्मभावना—धर्मके स्वरूपका चिंतवन करना कि इसीसे इसलोक और परलोकके सब तरहके सुख मिल सकते हैं।

परीषह—मुनि लोग कर्मोंकी निर्जरा, और कायक्लेश, करनेके लिये समताभावोंसे जो स्वयं दुःख सहन करते हैं उन्हें परीषह[1] कहते हैं।

---

[1] परीषहसे परीषह-सहन समझना चाहिए।

परीषह २२ हैं—क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंश-मसक, नग्न, अरति, स्त्री, चर्या, आसन, शय्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार—पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान और अदर्शन।

१ भूखके सहन करनेको क्षुधापरीषह कहते हैं।

२ प्यासके सहन करनेको तृष्णापरीषह कहते हैं।

३ सर्दीका दुःख सहन करनेको शीतपरीषह कहते हैं।

४ गर्मीके दुःख सहन करनेको उष्णपरीषह कहते हैं।

५ डाँस, मच्छर, बिच्छू वगैरह जीवोंके काटनेके दुःख सहन करनेको दंश—मसकपरीषह कहते हैं।

६ नंगे रहकर भी लज्जा, ग्लानि और विकार नहीं करनेको नग्नपरीषह कहते हैं।

७ अनिष्ट वस्तु पर भी द्वेष नहीं करनेको अरतिपरीषह कहते हैं।

८ ब्रह्मचर्य्यव्रत भंग करनेके लिये स्त्रियोंके द्वारा अनेक उपद्रव होनेपर भी विकार नहीं करना स्त्रीपरीषह है।

९ चलते समय पैरमें कटीली घास कंकर चुभ जानेका दुःख सहन करना चर्यापरीषह है।

१० देर तक एक ही आसनसे बैठे रहनेका दुःख सहन करना, आसनपरीषह है।

११ कंकरीली जमीन अथवा पत्थरपर एक ही करवटसे सोनेका दुःख सहना करना, शय्यापरीषह है।

१२ किसी दुष्ट पुरुषके गाली वगैरह देनेपर भी क्रोध न करके क्षमा धारण करना, आक्रोशपरीषह है।

१३ किसी दुष्ट पुरुष द्वारा मारे पीटे जानेपर भी क्रोध और क्लेश नहीं करना, वधपरीषह है।

१४ भूख प्यास लगने अथवा रोग हो जानेपर भी भोजन औषधादि वगैरह नहीं माँगना, याचनापरीषह है।

१५ भोजन न मिलने अथवा अंतराय हो जानेपर क्लेश न करना, अलाभपरीषह है।

१६ बीमारीका दुःख न करना रोगपरीषह है।

१७ शरीरमें काँच, सुई, काँटे, वगैरहके चुभ जानेका दुःख सहन करना तृणस्पर्शपरीषह है।

१८ शरीरमें पसीना आजाने अथवा धूल मिट्टी लग जानेका दुःख सहन करना और स्नान नहीं करना, मलपरीषह है।

१९ किसीके आदर सत्कार अथवा विनय प्रणाम वगैरह न करनेपर बुरा न मानना, सत्कारपुरस्कारपरीषह है।

२० अधिक विद्वान् अथवा चारित्रवान् हो जानेपर भी मान न करना, प्रज्ञापरीषह है।

२१ अधिक तपश्चरण करनेपर भी अवधिज्ञान आदि न होनेसे क्लेश न करना, अज्ञानपरीषह है।

२२ बहुत काल तक तपश्चरण करनेपर भी कुछ फलकी प्राप्ति न होनेसे सम्यग्दर्शनको दूषित न करना अदर्शनपरीषह है।

चारित्र—आत्मस्वरूपमें स्थित होना चारित्र है। इसके

५ भेद हैं:—सांमायिक, छेदोपंस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसांपराय, यथाख्यात।

निर्जरा।

कर्मोंका थोड़ा थोड़ा भाग क्षय होते जाना निर्जरा है। जैसे नावमें पानी भर गया था, उसे थोड़ा थोड़ा करके बाहर फेंकना, इसी प्रकार आत्माके जो कर्म इकट्ठे हो रहे हैं, उनका थोड़ा थोड़ा क्षय होना निर्जरा है। इसके भी दो भेद हैं—१ भावनिर्जरा, २ द्रव्यनिर्जरा। आत्माके जिस भावसे कर्म अपना फल देकर नष्ट होता है, वह भावनिर्जरा है और समय पाकर तपसे नाश होना द्रव्यनिर्जरा है।

मोक्ष।

सब कर्मोंका क्षय हो जाना मोक्ष है। जैसे एक नावका भरा हुआ पानी बाहर फेंका जाय तो ज्यों ज्यों उसका पानी बाहर फेका जाता है त्यों त्यों वह नाव ऊपर आती जाती है, यहाँ तक कि बिलकुल पानीके ऊपर आ जाती है,

---

१ सब जीवोंमें समताभाव रखना, सुख दुःखमें समान रहना, शुभ अशुभ विकल्पोंका त्याग करना, सामायिकचारित्र है। २ सामायिकसे डिग जानेपर फिर अपनेको अपनी शुद्ध आत्माके अनुभवमें लगाना तथा व्रतादिकमें भंग पड़नेपर प्रायश्चित्त वगैरह लेकर सावधान होना, छेदोपस्थापनाचारित्र है। ३ राग द्वेषादि विकल्पोंका त्यागकर अधिकताके साथ आत्म-शुद्धि करना परिहारविशुद्धिचारित्र है। ४ अपनी आत्माको कषायसे रहित करते करते सूक्ष्मलोभ कषाय नाम मात्रको रह जाय, उसको सूक्ष्मसांपराय कहते हैं। उसके भी दूर करनेकी कोशिश करना सूक्ष्मसाम्परायचारित्र है। ५ कषाय रहित जैसा निष्कंप आत्माका शुद्ध स्वभाव है, वैसा होकर उसमें मग्न होना यथाख्यातचारित्र है।

इसी प्रकार संवरपूर्वक निर्जरा होते होते, जब सब कर्मोंका क्षय हो जाता है और केवल आत्माका शुद्ध स्वरूप रह जाता है, तभी वह आत्मा ऊर्ध्वगमनस्वभाव होनेसे तीनों लोकोंके ऊपर जा विराजमान होता है और इसीका नाम मोक्ष है।

पदार्थ।

इन्हीं सात तत्त्वोंमें पुण्य और पाप मिलानेसे ९ पदार्थ कहलाते हैं।

पुण्य।

पुण्य उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीवोंको इष्ट वस्तु सुख सामग्री वगैरह मिले। जैसे किसी आदमीको व्यापारमें खूब लाभ हुआ, घरमें एक पुत्र भी पैदा हुआ और पढ़ लिखकर उच्चपदपर नियत हुआ, ये सब पुण्यके उदयसे समझना चाहिए।

पाप।

पाप उसे कहते हैं कि जिसके उदयसे जीवोंको दुःख देनेवाली चीजें मिलें। जैसे कोई रोग हो गया अथवा पुत्र मर गया अथवा धन चोरी चला गया, ये सब पापके उदयसे समझना चाहिये।

विद्या और जातिकी बढ़वारी करना, परोपकार करना, धर्मका पालन करना ऐसे कामोंसे पुण्यका बंध होता है और जूआ खेलना, झूठ बोलना, चोरी करना, दूसरेका बुरा विचारना ऐसे बुरे कामोंसे पापका बंध होता है।

प्रश्नावली ।

१ प्राण कितने होते हैं ? जीवमें ही होते हैं या अजीव में भी ? देव, पंचेन्द्रिय, असैनी, तिर्यंच, वृक्ष, नारकी, स्त्री, मक्खी और चींटीके कौन कौन प्राण हैं ?

२ प्राण रहित पदार्थोंके कितने भेद हैं नाम सहित वताओ ?

३ भावास्रव, द्रव्यास्रव तथा भावनिर्जरा, द्रव्यनिर्जरामें, क्या भेद है, उदाहरण देकर वताओ तथा यह भी वताओ कि जहाँ भावास्रव होता है, वहाँ द्रव्यास्रव होता है या नहीं ?

४ बंध किसे कहते हैं ? इसके कौन कौन कारण हैं और ? ऐसे कौन कौन कारण हैं जिनसे बन्ध नहीं होता ?

५ निर्जरा और मोक्षमें क्या फरक है ? पहले निर्जरा होती है या मोक्ष ?

६ मिथ्यात्व, योग, गुप्ति, आदाननिक्षेपणसमिति, अनुप्रेक्षा, चारित्र, अदर्शनपरीषहजय, लोकभावना, संशयमिथ्यात्वसे क्या समझते हो ?

७ वताओ इन साधुओंने कौन परीषह सहन की ?

(क) एक तपस्वी गर्मीके दिनोंमें दोपहरके समय एक पहाड़पर ध्यान लगाये बैठे हैं। प्याससे गला सूख गया है, ढाई घंटे हो गये हैं, बराबर एक ही आसनसे बैठे हैं।

(ख) सुकुमालका आधा शरीर गीदड़ने खा लिया।

(ग) एक मुनि महाराजको एक दुष्ट राजाने पकड़वाकर कैदमें डलवा दिया, वहाँपर एक साँपने उन्हें काट खाया।

(घ) जिस समय रामचन्द्रजी ध्यानारूढ़ थे, सीताके जीवने स्वर्गसे आकर अपने अनेक हाव-भावसे उनको मोहित करनेकी बहुत कुछ कोशिश की, मगर वे अपने ध्यानसे विचलित न हुए।

(ङ) एक साधु धर्मोपदेश दे रहे थे, कुछ शराबियोंने आकर उनको गालियाँ दीं और उनपर पत्थर बरसाये।

(च) राजा श्रेणिकने एक मुनिके गलेमें मरा हुआ साँप डाल दिया था जिसके सम्बन्धसे बहुतसे कीड़े मकोड़े उनके शरीरपर चढ़ गये।

(छ) एक तपस्वीको खुजलीका रोग हो गया जिससे तमाम शरीरमें बड़े बड़े जखम (फोड़े) हो गये, परन्तु उन्होंने किसीसे दवा नहीं माँगी।

८ निम्न लिखित प्रश्नोंके उत्तर दोः—

(क) जीवतत्त्वका और तत्त्वोंसे क्या सम्बन्ध है और कब तक है ?

(ख) क्या कभी ऐसी हालत हो सकती है कि जब आस्रव और बंध बिलकुल न हों, केवल निर्जरा ही हो।

(ग) बंध जो कहनेमें आता है, सो किस चीजका होता है ?

(घ) संवरभावनामें क्या चिंतवन किया जाता है ?

(ङ) यथाख्यातचारित्रके आस्रव और बंध होते हैं या नहीं ?

(च) पहले आस्रव होता है या बंध ?

(छ) परीषह कौन सहन करते हैं और एक समयमें एक ही परीषह सहन होती है या ज्यादह भी ?

९ पुण्य पाप किसे कहते हैं और कैसे कैसे काम करनेसे वे होते हैं ?

१० निम्नलिखित कामोंसे पुण्य होगा या पाप ?

(क) एक मनुष्यने एक शहरमें जहाँ १० मंदिर थे और उनमें से दो तीन खंडहर हो गये थे और तीनमें पूजा प्रक्षालनका भी कोई प्रबंध न था, वहाँ अपना नाम करनेके लिए ग्यारहवाँ मन्दिर बनवा दिया, पूजनके लिये चार रुपये महीनेका पुजारी नौकर रख दिया।

(ख) एक सेठ हररोज बड़े नम्र भावोंसे दर्शन, पूजन, सामायिक स्वाध्याय करते हैं ।

(ग) एक धनीने एक दूरके गांवके टूटे फूटे मंदिरको ठीक कराया और किसीको भी यह जाहिर न किया कि हमने इतना रुपया वहाँ लगाया है।

(घ) एक जैनीने पूरे ६०००) रुपयोंमें अपनी बेटीको बेचकर रथ चलाया और सिंघई पदवी प्राप्त की।

(ङ) यह विचारकर रिशवत (घूँस) लेना कि इसको धर्मके कामोंमें लगायँगे।

(च) एक पंडित महाशय किसी बातको न समझ सके, उन्होंने यह तो नहीं कहा कि मैं इसे नहीं समझता हूँ, किन्तु उलटी तरहसे समझा दिया।

(छ) एक विद्यार्थीने पुस्तकोंके लिए अपने माता पितासे कुछ दाम

माँगे; परन्तु उन्होंने देनेसे इन्कार किया, विद्यार्थीने दूकानमेंसे पैसे चुराकर पुस्तकें मोल ले ली।

(ज) पाठशालाएँ खुलवानेसे, भट्टारक बनकर धर्मध्यान कुछ भी न करके मजेसे चैन उड़ानेसे, ऐसे भट्टारकोंकी वैयावृत्ति करनेसे धर्मके लिए झूठ बोलनेसे, बाल बच्चोंको न पढ़ानेसे, अनाथालय औषधालय खुलवानेसे, हिंसक मनुष्योंके साथ सम्बन्ध रखनेसे, निर्धन भाइयोंकी सहायता करनेसे, पेटके लिये भीख माँगनेसे, विद्या उपार्जन करनेके लिये अन्य देशोंमें जानेसे, झूठी हाँ में हाँ मिलानेसे, विद्यार्थियोंको वजीफे देकर पढ़ानेसे, जवान भाई बंधुओंके मरनेपर उधार लेकर भाइयोंको लड्डू खिलानेसे, बच्चोंकी छोटी उम्रमें शादी करनेसे, धर्मादेके रुपयोंको व्यर्थ खर्च करनेमें, बेटीपर रुपया लेकर अयोग्य वरसे ब्याहनेसे, मांसाहारियोंमें दयाधर्मकी पुस्तकें बाँटनेसे, स्त्रियोंको पढ़ानेसे।

दशवाँ पाठ।

कर्मोंकी उत्तरप्रकृतियाँ।

कर्मकी मूल प्रकृतियाँ ८ हैं और उत्तरप्रकृतियाँ १४८ हैं। ज्ञानावरणकी ५, दर्शनावरणकी ९, वेदनीयकी २, मोहनीयकी २८, आयुकी ४, नामकी ९३, गोत्रकी २ और अंतरायकी ५।

ज्ञानावरणकर्म—मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण ये पाँच ज्ञानावरणकर्मके भेद अथवा प्रकृतियाँ हैं।

---

१ इन्द्रियों तथा मनसे जो कुछ जाना जाता है उसे मतिज्ञान कहते हैं।

२ मतिज्ञानसे जानी हुई वस्तुके सम्बन्धसे अन्य बातको जानना श्रुतज्ञान है। ये दोनों ज्ञान चाहे ज्यादह चाहे कम हरएक जीवके होते हैं।

१ मतिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो मतिज्ञानको न होने दे अथवा मतिज्ञानका आवरण या घात करे।

२ श्रुतज्ञानावरण उसे कहते हैं जो श्रुतज्ञानका घात करे।

३ अवधिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो अवधिज्ञानका[1] घात करे।

४ मनःपर्ययज्ञानावरण उसे कहते हैं जो मनःपर्ययज्ञानका[2] घात करे।

५ केवलज्ञानावरण उसे कहते हैं जो केवलज्ञानका[3] घात करे।

दर्शनावरणकर्म—चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधि दर्शनावरण, केवलदर्शनावरण, निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, और स्त्यानगृद्धि, ये ९ दर्शनावरणकर्मकी प्रकृतियाँ हैं।

चक्षुदर्शनावरण उसे कहते हैं जो चक्षुदर्शन (आँखोंसे देखना) न होने दे।

अचक्षुदर्शनावरण उसे कहते हैं जो अचक्षुदर्शन[4] न होने दे।

अवधिदर्शनावरण उसे कहते हैं जो अवधिदर्शन न होने दे।

---

१ विना इन्द्रियोंकी सहायताके आत्मीक-शक्तिसे रूपी पदार्थोंके जानने को अवधिज्ञान कहते हैं, यह पंचेंद्रिय संज्ञी जीवके ही होता है। २ विना इन्द्रियोंकी सहायताके दूसरेके मनकी बात जान लेनेको मनःपर्ययज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान मुनिके ही हो सकता है। ३ लोक अलोककी, भूत भविष्यत् और वर्तमान कालकी सब वस्तुओंको और उनके सर्व गुण पर्यायों (हालतों) को एक साथ एक कालमें विना इन्द्रियोंकी सहायतासे आत्मीक-शक्तिसे जाननेको केवलज्ञान कहते हैं। केवलज्ञानीके ज्ञानसे कोई वस्तु बची नहीं रहती। ४ आँखके सिवाय बाकी इन्द्रियों तथा मनसे किसी वस्तुकी सत्तामात्र (मौजूदगी) को देखना।

केवलदर्शनावरण उसे कहते हैं जो केवलदर्शन न होने दे।

निद्रा उसे कहते हैं जिसके उदयसे नींद आवे।

निद्रानिद्रा उसे कहते हैं जिसके उदयसे पूरी नींद लेकर भी फिर सोवे।

प्रचला उसे कहते हैं जिसके उदयसे बैठे ही सो जाय अर्थात् सोता भी रहे और कुछ जागता भी रहे।

प्रचलाप्रचला उसे कहते हैं जिसके उदयसे सोते हुए मुखसे लार बहने लगे और कुछ आंगोपांग भी चलते रहें।

स्त्यानगृद्धि उसे कहते हैं जिसके उदयसे नींदमें ही अपनी शक्तिसे बाहर कोई काम करले और जागनेपर मालूम भी न हो कि मैंने क्या किया है।

वेदनीयकर्म—सातावेदनीय और असातावेदनीय, ये दो वेदनीयकर्मके भेद हैं। इनके दूसरे नाम सद्वेद और असद्वेद हैं।

सातावेदनीय उसे कहते हैं कि जिसके उदयसे इंद्रियजन्य सुख हो।

असातावेदनीय उसे कहते हैं जिसके उदयसे दुःख हो।

मोहनीयकर्म—मोहनीयकर्मके मूल दो भेद हैं।

१ दर्शनमोहनीय, २ चारित्रमोहनीय।

दर्शनमोहनीय उसे कहते हैं जो आत्माके सम्यग्दर्शन[1] गुणका घात करे।

चारित्रमोहनीय उसे कहते हैं जो आत्माके चारित्र गुणका घात करे।

---

१ तत्त्वोंके सच्चे श्रद्धान याने विश्वास-यकीन करनेको सम्यग्दर्शन कहते हैं

दर्शनमोहनीयके ३ भेद हैं:—मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति।

मिथ्यात्व उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीवके यथार्थ तत्त्वोंका श्रद्धान न हो।

सम्यग्मिथ्यात्व उसे कहते हैं जिसके उदयसे मिले हुए परिणाम हों जिनको न तो सम्यक्त्वरूप ही कह सकते हैं और न मिथ्यात्वरूप।

सम्यक्प्रकृति उसे कहते हैं जिसके उदयसे यथार्थ तत्त्वोंका श्रद्धान चलायमान या मलिनरूप हो जाय।

चारित्रमोहनीयके २ भेद हैं—कषाय और नोकषाय।

कषायमोहनीयके १६ भेद हैं—अनंतानुबंधी क्रोध, अनंतानुबंधी मान, अनंतानुबंधी माया, अनंतानुबंधी लोभ; अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, अप्रत्याख्यानावरण मान, अप्रत्याख्यानावरण माया, अप्रत्याख्यानावरण लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण मान, प्रत्याख्यानावरण माया, प्रत्याख्यानावरण लोभ; संज्वलन क्रोध, संज्वलन मान, संज्वलन माया, संज्वलन लोभ।

अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, उन्हें कहते हैं जो आत्माके सम्यग्दर्शन गुणका घात करें। जबतक ये कषायें रहती हैं सम्यग्दर्शन नहीं होता।

अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ, उन्हें कहते हैं जो आत्माके देशचारित्रको घातें अर्थात् जिनके उदयसे श्रावकके १२ व्रत पालन करनेके परिणाम न हों।

प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ उन्हें कहते हैं जो आत्माके सकलचारित्रको घातें अर्थात् जिनके उदयसे मुनियोंके व्रतपालन करनेके परिणाम न हों।

संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ उन्हें कहते हैं जो आत्माके यथाख्यातचारित्रको घातें अर्थात् जिनके उदयसे चारित्रकी पूर्णता न हो।

नोकषाय (किंचित्कषाय) के ९ भेद हैं:—हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुंवेद, नपुंसकवेद।

हास्य उसे कहते हैं जिसके उदयसे हँसी आवे।

रति उसे कहते हैं जिसके उदयसे प्रीति हो।

अरति उसे कहते हैं जिसके उदयसे अप्रीति हो।

शोक उसे कहते हैं जिसके उदयसे संताप हो।

भय उसे कहते हैं जिसके उदयसे डर लगे।

जुगुप्सा उसे कहते हैं जिसके उदयसे ग्लानि उत्पन्न हो।

स्त्रीवेद उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीवके पुरुषसे रमनेके भाव हों।

पुंवेद उसे कहते हैं जिसके उदयसे स्त्रीसे रमनेके भाव हों।

नपुंसकवेद उसे हैं जिसके उदयसे स्त्री पुरुष दोनों से रमनेके परिणाम हों।

इस प्रकार १६ कषाय, ९ नोकषाय, ये २५ चारित्रमोहनीयकी और ३ दर्शनमोहनीयकी कुल मिलाकर २८ मोहनीयकर्मकी प्रकृतियाँ हैं।

आयुकर्मः—आयुकर्मके चार भेद हैंः—नरकआयु, तिर्यंच-आयु, मनुष्यआयु, देवआयु,

नरकआयु उसे कहते हैं जो जीवको नारकीके शरीरमें रोक रक्खे।

तिर्यंचआयु उसे कहते हैं जो जीवको तिर्यंचके शरीरमें रोक रक्खे।

मनुष्यआयु उसे कहते हैं जो जीवको मनुष्यके शरीरमें रोक रक्खे।

देवआयु उसे कहते हैं जो जीवको देवके शरीरमें रोक रक्खे।

नामकर्म—इस कर्मकी ९३ प्रकृतियाँ हैंः—

४ गति (नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव)—इस गति नाम-कर्मके उदयसे जीवका आकार नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवके समान बनता है।

५ जाति—एकइंद्रिय, दोयइन्द्रिय, तीनइंद्रिय, चारइंद्रिय, पाँचइंद्रिय,—इस जातिनामकर्मके उदयसे जीव एकइंद्रिय आदि शरीरको धारण करता है।

शरीर * (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण) —इस शरीरनामकर्मके उदयसे जीव औदारिक आदि शरीरको धारण करता है।

---

*औदारिकशरीर स्थूल शरीरको कहते हैं, यह शरीर मनुष्य तिर्यञ्चों के होता है। वैक्रियकशरीर देव, नारकी और किसी किसी ऋद्धिधारी मुनिके भी होता है। इस शरीरका धारी अपने शरीरको जितना चाहे घटा बढ़ा

३ आंगोंपांग (औदारिक, वैक्रियक, आहारक,)—इस नाम कर्मके उदयसे हाथ, पैर, सिर, पीठ वगैरह अंग और ललाट, नासिका वगैरह उपांगका भेद प्रगट होता है।

४ निर्माण *—इस नाम कर्मके उदयसे आंगोपांगकी ठीक ठीक रचना होती है।

५ वंधन (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण)—इस नाम कर्मके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंके परमाणु आपसमें मिल जाते हैं।

६ संघात (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण)—इस नाम कर्मके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंके परमाणु विना छिद्रके एकरूपमें मिल जाते हैं।

७ संस्थान (समचतुरस्रसंस्थान, न्यग्रोधपरिमण्डल-संस्थान, स्वातिसंस्थान, कुब्जकसंस्थान, वामनसंस्थान,

---

सकता है, और अनेक प्रकारके रूप धारण कर सकता है। आहारकशरीर छट्ठे गुणस्थानवर्ती उत्तम मुनिके होता है। जिस समय मुनिको कोई शंका होती हैं, उस समय उनके मस्तकसे एक हाथका पुरुषके आकारका सफेद रंगका पुतला निकलता है और वह केवली या श्रुतकेवलीके पास जाता है; पास जाते ही मुनिकी शंका दूर हो जाती है, और पुतला वापस आकर मुनिके शरीरमें प्रवेश हो जाता है, यही आहारकशरीर कहलाता है। तैजसशरीर वह है जिसके उदयसे शरीरमें तेज वना रहता है। कार्माणशरीर कर्मोंके पिंडको कहते हैं! तैजस, कार्माण ये दोनों शरीर हरएक संसारी जीवके हैं।

* निर्माणनामकर्मके २ भेद हैं:—१ स्थाननिर्माण, प्रमाणनिर्माण। स्थाननिर्माणनामकर्मसे अंगोपांगकी रचना ठीक ठीक स्थानपर होती है और प्रमाणनिर्माणनामकर्मसे अंगोपांगकी रचना ठीक ठीक नामसे।

हुंडकसंस्थान)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरकी आकृति यानी शकल सूरत बनती है।

समचतुरस्रसंस्थान नामकर्मके उदयसे शरीरकी आकृति ऊपर नीचे तथा बीचमें ठीक बनती है।

न्यग्रोधपरिमंडलनामकर्मके उदयसे जीवका शरीर बड़के पेड़की तरह होता है अर्थात् नाभिसे नीचेके भाग छोटे और ऊपरके बड़े होते हैं

स्वातिसंस्थाननामकर्मके उदयसे शरीरकी शकल पहलेसे बिलकुल उलटी होती है यानी नाभिसे नीचे अंग बड़े और ऊपरसे छोटे होते हैं।

कुब्जकसंस्थाननामकर्मके उदयसे शरीर कुबड़ा होता है।

वामनसंस्थाननामकर्मके उदयसे शरीर बौना होता है।

हुंडकसंस्थाननामकर्मके उदयसे शरीरके अंगोपांग किसी खास शकलके नहीं होते हैं। कोई छोटा कोई बड़ा, कोई कम, कोई ज्यादह होता है।

६ संहनन (वज्रर्षभनाराचसंहनन, वज्रनाराचसंहनन, नाराचसंहनन, अर्द्धनाराचसंहनन, कीलकसंहनन, असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन)–इस नामकर्मके उदयसे हाड़ोंका बन्धन-विशेष होता है।

वज्रर्षभनाराचसंहनन नामकर्मके उदयसे वज्रके हाड़ वज्रके बेठन और वज्रकी कीलियाँ होती हैं।

वज्रनाराचसंहनननामकर्मके उदयसे वज्रके हाड़ वज्रकी कीली होती हैं, परन्तु बेठन वज्रके नहीं होते हैं।

नाराचसंहनननामकर्मके उदयसे हड्डियोंमें वेठन और कीलें लगी होती हैं।

अर्द्धनाराचसंहनननामकर्मके उदयसे हड्डियोंकी संधियाँ आधी कीलित होती हैं, यानी एक तरफ तो कीलें लगी होती हैं परन्तु दूसरी तरफ नहीं होतीं।

कीलकसंहनननामकर्मके उदयसे हड्डियोंकी सँधियाँ कीलोंसे मिली होती हैं।

असंप्राप्तासृपाटिकासंहनननामकर्मके उदयसे जुदी जुदी हड्डियाँ नसोंसे बँधी होती हैं, उनमें कीलें नहीं लगी होती हैं।

८ स्पर्श (कड़ा, नर्म, हलका, भारी, ठंडा, गरम, चिकना, रूखा)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमें कड़ा, नर्म, हलका भारी वगैरह स्पर्श होता है।

५ रस (खट्टा, मीठा, कड़वा, कषायला, चर्परा) इस नामकर्मके उदयसे शरीरमें खट्टा मीठा वगैरह रस होते हैं।

२ गंध (सुगंध दुर्गंध)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमें सुगंध या दुर्गंध होती है।

५ वर्ण (काला, पीला, नीला, लाल, सफेद)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमें काला, पीला, वगैरह रंग होते हैं।

४ आनुपूर्व्य, (नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव)—इस नामकर्मके उदयसे विग्रहगतिमें यानी मरनेके पीछे और जन्मसे पहले रास्तेमें मरनेसे पहलेके शरीरके आकारके आत्माके प्रदेश रहते हैं।

१ अगुरुलघु—इस नामकर्मके उदयसे शरीर न तो ऐसा

भारी होता है जो नीचे गिर जावे, और न ऐसा हलका होता है जो आककी रुईकी तरह उड़ जावे।

१ उपघात—इस नामकर्मके उदयसे ऐसे अंग होते हैं जिनसे अपना घात हो।

१ परघात—इस नामकर्मके उदयसे दूसरेका घात करनेवाले अंगोपांग होते हैं।

१ आताप—इस नामकर्मके उदयसे आतापरूप शरीर होता है।

१ उद्योत—इस नामकर्मके उदयसे उद्योतरूप शरीर होता है।

१ विहायोगति (शुभ अशुभ)—इस नामकर्मके उदयसे जीव आकाशमें गमन करता है।

१ उच्छ्वास—इस नामकर्मके उदयसे जीव श्वास और उच्छ्वास लेता है।

१ त्रस—इस नामकर्मके उदयसे दो इंद्रिय आदि जीवोंमें जन्म होता है अर्थात् दो इंद्रिय, तीन इंद्रिय, चार इंद्रिय, अथवा पाँच इंद्रिय होता है।

स्थावर—इस नामकर्मके उदयसे पृथिवी, जल, अग्नि, वायु अथवा वनस्पतिमें अर्थात् एकइंद्रियमें जन्म होता है।

१ बादर—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे दूसरेको रोकनेवाला और स्वयं दूसरेसे रुकनेवाला शरीर होता है।

सूक्ष्म—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे ऐसा बारीक शरीर होता है जो न तो किसीसे रुकता और न किसीको

रोकता है। लोहे, मिट्टी, पत्थरके बीचमेंसे होकर निकल जाता है।

पर्याप्ति—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे अपने योग्य अपने आहार, शरीर, इन्द्रिय श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन इन पर्याप्तियोंकी पूर्णता हो।

अपर्याप्ति—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे एक भी पर्याप्ति न हो।

१ प्रत्येक—इस नामकर्मके उदयसे एक शरीरके स्वामी एक ही जीव होता है।

१ साधारण—इस नामकर्मके उदयसे एक शरीरके स्वामी अनेक जीव होते हैं।

१ स्थिर—इस नामकर्मके उदयसे एक शरीरके धातु और उपधातु अपने अपने ठिकाने रहते हैं।

१ अस्थिर—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके धातु और उपधातु अपने ठिकाने नहीं रहते हैं।

१ शुभ—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके अवयव (हिस्से) सुंदर होते हैं।

---

१ एकेंद्रिय जीवके भाषा और मनके बिना ४ पर्याप्ति होती है। द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असैनी पंचेन्द्रिय जीवके मनके बिना ५ पर्याप्ति होती है। सैनी पंचेन्द्रिय जीवके छहों पर्याप्ति होती है।

२ अनंते निगोदिया जीवोंका एक ही शरीर होता है और उन सबका जन्म और मरण श्वास वगैरह लेना सब क्रियाएँ एक साथ होती है।

१ अशुभ—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके अवयव (हिस्से) भद्दे होते हैं।

१ सुभग—इस नामकर्मके उदयसे दूसरे जीवोंको अपनेसे प्रीति होती है।

१ दुर्भग—इस नामकर्मके उदयसे दूसरे जीव अपनेसे अप्रीति वा वैर करते हैं।

१ सुस्वर—इस नामकर्मके उदयसे स्वर अच्छा होता है।

१ दुःस्वर—इस नामकर्मके उदयसे स्वर अच्छा नहीं होता है।

१ आदेय—इस नामकर्मके उदयसे शरीरपर प्रभा और कांति होती है।

१ अनादय—इस नामकर्मके उदयसे शरीरपर प्रभा और कांति नहीं होती है।

१ यशःकीर्ति—इस नामकर्मके उदयसे जीवकी संसारमें प्रशंसा और कीर्ति (नामवरी) होती है।

१ अयशःकीर्ति—इस नामकर्मके उदयसे जीवकी कीर्ति नहीं होने पाती है।

१ तीर्थंकर—इस नामकर्मके उदयसे जीवको अरहंत पद मिलता है अर्थात् वह तीर्थंकर होता है।

गोत्र कर्म।

गोत्र कर्मके २ भेद हैं:—१ उच्चगोत्र २ नीचगोत्र।

उच्च गोत्र उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीव लोकमान्य ऊँचे कुलमें पैदा हो।

नीच गोत्र उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीव लोकनिंदित अर्थात् नीच कुलमें पैदा हो।

अन्तराय कर्म।

अन्तराय कर्मके ५ भेद हैं:-१ दानअंतराय, २ लाभअंतराय, ३ भोगअंतराय, ४ उपभोगअंतराय, ५ वीर्यअंतराय।

दानअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे यह जीव दान न दे सके।

लाभअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे लाभ न हो सके।

भोगअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे अच्छे पदार्थोंका भोग न कर सके।

उपभोगअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे जेवर कपड़ों वगैरह चीजोंका उपभोग न करे।

वीर्यअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे शरीरमें सामर्थ्य यानी बल और ताकत न हो।

प्रश्नावली।

१ कर्म किसे कहते हैं ! कर्मकी मूल और उत्तरप्रकृतियाँ कितनी हैं !

२ सबसे ज्यादह प्रकृतियाँ किस कर्मकी हैं ? और सबसे कम किसकी !

३ अवधिज्ञान, अचक्षुदर्शन, सम्यग्दर्शन, संहनन, संस्थान, अगुरुलघु, आहारकशरीर, जुगुप्सा, सम्यक्प्रकृति, प्रचलाप्रचला, विग्रहगति, मतिज्ञान, नोकषाय, आनुपूर्व्य, साधारण, अनादेय, इनसे क्या समझते हो ?

४ सुभग, अस्थिर, नाराचसंहनन, स्वातिसंस्थान, वीर्यान्तराय, तीर्थंकर, अप्रत्याख्यानकषाय, स्त्यानगृद्धि, इन कर्मप्रकृतियोंके उदयसे क्या होता है !

५ संस्थान और संहनन किस किसके होते हैं ? नीचे लिखे हुओंके संस्थान, संहनन हैं या नहीं ? अगर हैं तो कौन कौनसे ? देव, कुबड़ा मनुष्य, स्त्री, राममूर्ति, मच्छी, शेर, साँप, नारकी, मक्खी।

६ ऐसे कर्म बतलावो जिनकी प्रकृतियोंपर ६ का भाग पूरा पूरा चला जाय ?

७ नामकर्मकी ऐसी प्रकृतियाँ बताओ जो एक दूसरेसे उलटी हैं ?

८ निम्न लिखित प्रकृतियोंका उदय किन किनके होता है ? समचतुरस्र-संस्थान, अपर्याप्ति।

९ नीचे लिखे हुए प्रश्नोंके उत्तर दो:—

(क) तुम पंचेन्द्रिय क्यों हुए ?

(ख) लोगोंको नींद क्यों आती है ?

(ग) हमको अवधिज्ञान क्यों नहीं होता ?

(घ) सम्यग्दर्शन कबतक नहीं होता ?

(ङ) सब मनुष्य कुबड़े और बौने क्यों नहीं होते ?

(च) हम आकाशमें क्यों नहीं चल फिर सकते ?

(छ) देव अपना शरीर छोटा बड़ा कैसे कर सकते हैं ?

(ज) हमको तमाम चीजें क्यों नहीं दिखलाई देतीं ?

(झ) हम हर जगह क्यों नहीं जा सकते ?

१० बताओ इनकें किस किस कर्मप्रकृतिका उदय है ?

(क) सोहन पढ़ते पढ़ते सो जाता है ?

(ख) जयदेवी बड़ी डरपोक है ?

(ग) गोविंद बहरा गूँगा और अन्धा है।

(घ) राममूर्ति बड़ा मोटा ताजा पहलवान है।

(ङ) राम सदा रोगी रहता है।

(च) मोहनसे सब ग्लानि करते हैं।

(छ) देवदत्त लखपती होनेपर भी किसीको एक पैसा तक नहीं देता, बड़ा कंजूस है।

(ज) काल्हू भंगीके घर पैदा हुआ है।

(झ) देवी कुवड़ी है उसका भाई बौना है।

(ञ) देव आकाशमें गमन करते हैं।

(ट) गुलाब बहुत अच्छा गाता है, उसका स्वर अच्छा है।

(ठ) गोपाल बड़ा भारी पंडित है हर जगह लोग उसकी तारीफ करते हैं

(ड) हरी बहुत हँसता है, पर उसकी बहिन बहुत रोती है।

(ढ) मेरे अंगोपांग सब ठीक हैं।

(ण) गंगारामका सर लम्बोतरा, नाक चपटी और आँखें अंदरको दबी हुई है।

(त) लाल अपने भाई पालको बहुत प्यार करता है।

समाप्त

ॐ

श्री नानू भजन संग्रह

प्रकाशिका:—

श्री मास्टर नानूलाल स्मारक कोष समिति

जयपुर।
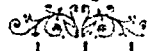
प्रथमवार १००० | वीर निर्वाण संवत २४७३ | मूल्य पांचआना

अध्यात्म प्रेमी

स्वर्गीय मास्टर नान्हूलालजी भांवसा

जन्म

चैत्र कृष्णा ४ सं १६५०

स्वर्गवास

पौष वदी ११ सं० २००८

* श्री *

मास्टर साहिब का परिचय

दिगम्बर जैन समाज जयपुर में मास्टर साहब एक अध्यात्म प्रेमी व्यक्ति थे। आपक नाम नानूलालजी था। आपका जन्म चैत्र कृष्णा ४ विक्रम संवत् १६५० में हुवा था। आपके पिताजी का नाम श्री हुकमचन्दजी भौंसा था। इनका स्वार्गवास अबसे कोई ३५ वर्ष पहिले हो चुका है। ये पुराने जमाने के अंग्रेजी पढ़े लिखे सीधे सादे व्यक्ति थे और महकमे इन्जिनेरी में क्लर्क थे।

हुकमचन्दजी साहब के ३ पुत्र तथा ३ पुत्रियां हुई। तीनों पुत्रों में बड़े का नाम आनंदीलालजी है जो इस वक्त विद्यमान हैं और इन्जनेरी विभाग से ही पेन्शन पारहे हैं—छोटे का नाम श्री छोटेलालजी था। भाई छोटेलालजी तथा मास्टर नानूलालजी साहब की उम्र में कोई दो दो वर्ष का ही अन्तर था। दोनों भाई साथ साथ एक ही क्लास में पढते थे और दोनों ने ही एफ० ए तक की शिक्षा प्राप्त की थी। पठन काल में ही दोनों भाइयों का विवाह होगया था।

भाई छोटेलालजी की धर्मपत्नी (श्री संघी मास्टर मोती-लालजी की सुपुत्री) का कुछ दिन की बीमारी के बाद स्वर्गवास होगया। उन्होंने २०—२२ साल की उम्र में ही दूसरा विवाह

करने से इन्कार कर दिया और धर्मपत्नी के स्वर्गवास के तीसरे दिन ही स्थानीय वर्धमान विद्यालय के बोर्डिंग में जोकि उस वक्त श्री सेठी अर्जुनलालजी के द्वारा चलाया जारहा था चलेगये। यहां कुछ दिन रहकर वे देहली चलेगये और देहली में क्रान्तिकारियों में लार्ड हार्डिञ्ज पर बम गेरने के केस में पकड़े गये पर निर्दोष सावित हुए। तत्पश्चात् पूज्य महात्मा गांधी के पास सावरमती आश्रम में रह कर उन्होंने महात्माजी के खास कार्य कर्त्ताओं में अपना स्थान बना लिया। महात्माजी उनकी बड़ी कद्र करते थे। वे अपने धुनके पक्के और जनता के मूक सेवक थे। उन दिनों महात्माजी चर्खा प्रचार तथा दक्षिण प्रान्त में हिन्दी प्रचार के काम में खास तौर पर जोर दे रहे थे। छोटेलालजी ने उन दिनों ग्राम ग्राम में भ्रमण किया और सैकडों जगह चर्खा संघ की स्कीम को कार्यान्वित किया और फिर मद्रास प्रान्त में जाकर हिन्दी प्रचार के काम में काफी सफलता प्राप्त की।

महात्मा गांधी अपने दिल में भाई छोटेलालजी की कितनी कद्र करते थे इसके लिए एक घटना का उल्लेख करना काफी होगा। एक बार हमारे चरित्र नायक मास्टर साहब नानूलालजी अपने लघु भ्राता छोटेलालजी से मिलने के लिए सावरमती आश्रम गये। वहां जब वे महात्माजी से मिले तो स्वयं महात्माजी ने मास्टर साहब से फरमाया कि आप जैसे व्यक्ति किस छोटी सी नोकरी के फेर में पड़े हो। आपको तो अपने छोटे भाई का अनुकरण करके लोक सेवा में जुट जाना चाहिये। उन्होंने फरमाया कि छोटेलाल जैसे यदि ५० व्यक्ति भी मुझको मिल

जावें तो हिन्दुस्तान में न मालूम मैं कितना काम कर पाऊं। मास्टर साहब को अपने भाई के प्रति महात्माजी के उपरोक्त उद्‌गार सुन कर असीम आनंद प्राप्त हुआ और तब से अपने छोटे भाई के प्रति बड़ी श्रद्धा रखने लगे। अफसोस है कि भाई छोटेलालजी साबरमती आश्रम में बीमार होकर चल बसे। उनके निधन पर महात्माजी ने अपने निजी पत्र नवजीवन में जो लेख प्रकाशित करके छोटेलालजी की सेवाओं का जिक्र करते हुए दुःख प्रकट किया उससे छोटेलालजी की महानता विदित होती थी और जैन समाज के लिए भी यह कम गौरव की बात नहीं थी।

मास्टर नानूलालजी राज्य के महाराजा हाई स्कूल में गणित के अध्यापक थे और अपने विषय में उन्होंने काफी ख्याति प्राप्त करली थी। वे जयपुर के गणित विषय के माने हुए विद्वानों में थे। परीक्षाओं में इनके क्लास के नतीजे हमेशा अच्छे रहते थे और स्कूल में इनकी बड़ी धाक थी। स्कूल के हैडमास्टर आप पर इतना ज्यादा विश्वास रखते थे कि एक तरह से अपनी सारी जिम्मेदारी मास्टर साहब पर छोड़े हुये थे और मास्टर साहब उसको पूरी तरह से निभाते थे। मास्टर साहब गणित पढ़ाने में इतने विख्यात थे कि लोग साल साल भर पहले से मास्टर साहब को ट्यूसन के लिए नियुक्त कर लेते थे। मास्टर साहब एक विद्यार्थी को एक घंटे से ज्यादा कभी टाइम नहीं देते थे। इनके ट्यूशन प्राप्त विद्यार्थियों में कोई सा ही होगा जो कभी फेल हुवा हो।

मास्टर साहब अपनी साधारण आय में भी हमेशा प्रसन्न रहते थे और आमदनी के माफिक दिल खोल कर खर्च करते थे। आपने हिन्दुस्तान भर के तीर्थों की कई कई बार यात्रा की। कई वर्ष तक तो लगातार मास्टर साहब अपनी मित्र-मंडली के साथ यात्रा को गये थे। सम्मेद शिखरजी की शायद आपने ५ बार यात्रा की थी। इस प्रकार आप अपनी सीमित आमदनी का सद्व्यय करते थे और यथासाध्य हर एक संस्थाओं को चन्दों में मदद पहुंचाते थे। इसके सिवा कई असमर्थ कुटुम्बी जनों को भी आप प्राईवेट तौर पर भोजन वस्त्र के लिए सहायता दिया करते थे। आपका जीवन एक आदर्श था।

आप शुरू से ही स्वाध्याय-प्रेमी थे और श्री ब्रह्मचारी शीतल प्रसादजी के लिखे हुए साहित्य को बडे प्रेम और श्रद्धा से पढा करते थे। जब सन् १६३१ में दिगम्बर जैन संस्कृत कालेज जयपुर में श्रीमान् पंडित चैनसुखदासजी न्यायतीर्थ अध्यक्ष होकर आये और दीवान शिवजीलालजी के मंदिर में शास्त्र-प्रवचन करने लगे तब से आप बराबर शास्त्रसभा में सम्मलित होते, चर्चा में मुख्य भाग लेते और प्रवचन समाप्त होने पर आध्यात्म रस पूर्ण भजन बोला करते थे। आप बचपन से ही संगीत प्रेमी थे और बचपन में पंडित चिमनलालजी की प्रेरणा से गायन तथा नृत्य कला में भी प्रवेश किया था, किन्तु बीच के २५ वर्ष में इस तरफ प्रवृत्ति नहीं थी।

संवत् १६५६ में जयपुर में बाल सहेली नामक एक भजन-

मंडली कायम हुई और उसके द्वारा हर शुक्रवार को जैन मंदिर में पूजन भजन गायन नृत्य होने लगे और इसके बाद अलग अलग वारों की अलग अलग सहेलियां चालू हो गई। मास्टर साहब इन सहेलियों में भी शरीक होते रहे, किन्तु इन सहेलियों में हमेशा वही दस बीस साधारण भजन गाये जाते थे और नये तथा प्राचीन कवियों के भजनों की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। अतः मास्टर साहब कभी कभी इन सहेलियों की समालोचना भी किया करते थे। वे यह भी कहा करते थे कि इन सहेलियों में हजारों रुपया हमारी समाज का खर्च होता है और डूम ढाढी लोग इस रुपये को ले जाते है पर बीसों वर्षों में दस बीस भाई भी निपुण गानेवाले तैय्यार नहीं हो पाये।

आपको प्राचीन कवियों के भजनों का बडा शौक था। पं० दौलतरामजी, भूधरदासजी, भागचंदजी, द्यानतरायजी, आदि के सैकडों भजन आपने कंठस्थ याद कर लिये थे पंडित चैन-सुखदासजी का सायंकाल शास्त्र सभा में जिस विषयपर प्रवचन होता था उसही विषय पर आप भजन गाते और श्रोतागणों को मुग्ध कर देते थे।

गत पांच सात वर्षों में तो आपके भजन-कीर्तन की जयपुर जैन समाज में इतनी ख्याति होगई थी कि जहां भी मंदिरों में उत्सव विधान होता वहां मास्टर साहब के भजनों के लिए कम से कम एक दिन का प्रोग्राम जरूर ही रखा जाता था और मास्टर

साहब का नाम सुनकर भजनों में नहीं जाने वाले भाई भी पहुंचने की कोशिश करते थे। मास्टर साहब जिस वक्त सभामें खडे होकर भजन शुरू करते थे सभा मंत्र-मुग्ध होजाती थी। कभी कभी तो मास्टर साहब खुद आप हाथ में करताल खंजरी लेकर बजाने लगते और इतने मस्त हो जाते थे कि दूसरी तरफ की सुध बुध भूल जाते थे। आप भजन स्वयम गाते और श्रोताओं को साथ बुलवाते। इससे भजन सभाओं में ऐसा समा बंध जाता था कि जिसके लिए कुछ कहा नहीं जासक्ता। मास्टर साहब खाली संगीत प्रेमी या भजनानंदी ही नहीं थे, बल्कि एक अध्यात्म प्रेमी व्यक्ति भी थे। आप एक मामूली छोटासा भजन छेडकर उसके बीच में पंडित बनारसीदासजी के नाटक समयसार के दोहे, कवित्त वगैरह बोलकर अध्यात्मरस स्वयम् पीते थे और श्रोताओं को पिलाते थे। आपके विचार बडे उदार थे।

जैन कवियों के सिवाय दूसरे धर्मों के प्राचीन कवि सुन्दरदासजी, कबीरदासजी, सूरदासजी तथा आधुनिक कवि शङ्कर आदि के भो खास खास भजनों को बड़े प्रेम से गाते थे और उनका भी अर्थ उसही प्रकार समझाते जैसे समयसार का समझाते थे और श्रोताओं को प्रेरणा करते थे कि देखो असली धर्म सबका एक ही है।

आपके भजनों में जैनियों के अलावा कई अजैन सज्जन भी आकर आनन्द रस का पान किया करते थे। आपका गृहस्थ जीवन

सादा और आनन्दमयी था। जैन मुनियों के आप सच्चे भक्त थे। कभी कभी "ते गुरु मेरे उरवसो जे भव जलधि जहाज" इस मुनियों की जयमाला को बड़ी भक्ति और प्रेम से गाया करते थे।

जब जयपुर में मुनि मुनीन्द्रसागर का आगमन हुआ। मास्टर साहब भी उनके पास पहुंचे; किन्तु उनके चारित्र को देखकर और बातें सुनकर निराश होकर लौटे और फिर कभी उनके पास नहीं गये।

इसके कुछ ही अरसे बाद जयपुर में दक्षिण से मुनिसंघ का आगमन हुआ। जयपुर कीसमाज के लिए सैकडों वर्षों मे यह पहला ही अवसर था कि एक साथ सात मुनियों का संघ आया। सारा जैन समाज स्वागत के लिए उमडपडा। मास्टर साहब भी संघ के दर्शन करके धर्म लाभ लेने की भावना से ठोलियों के मंदिर में पहुचें और एक एक करके सबही मुनियों के पास गये। आचार्य शान्ति सागरजी के पास भी पहुंचे किन्तु जब वहाँ शूद्र जल त्याग तथा जनेऊ धारण आदि का आग्रह देखा तो दिलमें बडे सकुचाये। मास्टर साहब ने आचार्य महाराज से बडे विनय केसाथ इस विषय को समझने के लिए कुछ प्रश्न किये और पंडित टोडरमलजी बनारसी दासजी आदि का जिक्र करते हुये उनसे विनम्र भाव से कुछ निवेदन किया। उसका उत्तर मिला कि जो जनेऊ धारण नहीं करता है वह शूद्र है। मास्टर साहब पंडित टोडरमलजी और बनारसीदासजी के साहित्य को बडी श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे और एक प्रकार से उनके भक्त बन गये थे, उनको शूद्र बतलाने

की बात सुनकर मास्टर साहब के दिल में बड़ी चोट लगी और बस उस दिन के बाद वे मुनिसंघ के पास भी नहीं फटके।

कुछ ही समय के बाद जयपुर में जैन मुनि आचार्य सूर्य सागर जी के संघ का आगमन हुवा; किन्तु मास्टर साहब उदासीन ही रहे और मुनिजी के दर्शनों तक के लिए नहीं गये। एक दिन अकस्मात ही मास्टर साहब के पड़ोस के मंघीजी के मन्दिर में मुनि महाराज का आगमन हुवा और मास्टर साहब भी वहां जा पहुंचे। वे चुपचाप जाकर बैठ गये यहां तक कि नमस्कार तक नहीं किया, किन्तु जब मुनि श्री का उपदेश सुना तो इनके विचार में एकाएक परिवर्तन हुआ और शनैः शनैः मुनिजी के उपदेश में जाना शुरू हो गया।

आचार्य महाराज कुछ दिन जयपुर में ठहरकर वापस पधारे और सेठ चांदमलजी के बाग में ठहरे। मास्टर साहब को सुबह मालुम हुआ कि आचार्यश्री आज यहां से आगे रवाना हो जावेंगे; तो एकाएक विचार किया कि ऐसे मुनियों का फिर मिलना न मालूम होवे या नहीं, अपन ने तो एक दिन अहार देने का लाभ भी नहीं लिया और यह कहकर अपने दो चार मित्रों को लेकर उसही समय सेठ चांदमलजी के बाग पहुंचे। वहां जाकर दूसरी मंजिल की एक कोठरी में चोका बनाया दूसरे सब लोग हंस रहे थे कि अब आधा घंटे में महाराज गोचरी को निकलने वाले हैं और ये लोग अब चौका बनावेंगे; किन्तु वहां बनाने को कौनसी तैयारियां करनी थीं। मास्टर

साहब और सब मित्र जुटे और महाराज गोचरी को निकले उससे पहिले नीचे उतर कर पडगाहने को आखड़े हुये। मास्टर साहब की उत्कट अभिलाषा का ही फल था कि अन्य सब चोके वाले खड़े ही रहे और मुनि महाराज का निरंतराय अहार मास्टरजी के चोके में होगया।

निरंतराय अहार होजाने के पश्चात महाराज से जब दूसरे लोग साधारण प्रतिज्ञाएँ ले रहे थे-मास्टर साहब आगे बढ़े और नत मस्तक होकर ब्रह्मचय व्रत मांगा। मुनि महाराज ने पूछा कितने दिन के लिए? मास्टर जी ने निवेदन किया कि यावज्जीवन। इनके यह शब्द सुनकर सारे मित्रगण स्तब्ध से रहगये। महाराज ने पूछा-तुम्हारे स्त्री है? संतान है? मास्टर साहब ने हाथ जोडकर कहा कि स्त्री भी है और एक लडका तथा एक लडकी इस प्रकार दो संतानें भी हैं। इससे ज्यादा संतान-उत्पत्ति की मुझ को जरूरत नहीं है। महाराज के प्रश्न के उत्तर में मास्टर साहब ने कहा कि मैं अपनी धर्मपत्नी से अनुमति लेकर आया हूँ। गुरु महाराज ने बहुत समझाया। व्रत पालन की कठिनताओं को भी बतलाया। अधिक आग्रह देखकर छहमहीने तथा एक वर्ष के लिए ब्रह्मचर्य लेने और अभ्यास होजाने पर आगे विचार करने के लिए फरमाया। किन्तु मास्टर साहब ने दृढता पूर्वक यावज्जीवन के लिए ही प्रार्थना की और इसमें जराभी नहीं हटे। अन्त में पूर्णतः विचारों को सुनकर मुनि महाराज ने यावज्जीवन ब्रह्मचर्य का व्रत प्रदान करदिया और साथ ही महाराज ने मास्टर साहब से कहा कि

मास्टरजी आज से तुम ब्रह्मचारी हो. किन्तु इस व्रत की आज्ञा देने के साथ २ मैं तुम से यह भी कह देना चाहता हूँ कि ब्रह्मचारी होकर भी अपने घर पर ही रहना। इस वक्त घर छोडदोगे तो आकुलता में पड जावोगे। यह समय घर में रहकर ही धर्म ध्यान करने का है। जोश में आकर घर छोड देना आसान है, किन्तु इसको शान्ति पूर्वक निभाना बड़ा मुशकिल है।

दस मिनट पहले जो मित्र-गण मास्टर सहाब को अपना बराबर का समझ रहे थे दस मिनट बाद ही वह बराबरी की भावना बदल कर एक पूज्य दृष्टि के रूप में परिणत हो गई।

सब लोग शहर में वापस आये। मास्टर साहब ने खुशी के साथ यह खबर अपनी धर्मपत्नि को सुनाई और कहा कि गुरु की कृपा से अपना मनोरथ सफल हो गया। धर्मपत्नि ने इस संवाद को बड़े आनंद और उल्लास के साथ सुना।

इससे सबको विश्वास हो गया कि मास्टर साहब व उनकी धर्मपत्नि में पहले से यह सब सलाह हो गई थी और दोनों ने यावज्जीवन ब्रह्मचर्य रखने का निश्चय कर लिया था। इस विचार में मुनि महाराज के द्वारा म्होर लगा लेना मात्र शेष था जो कि आज हो गया। मास्टर साहब व मास्टरनीजी के आज आनंद की सीमा नहीं थी।

साधु पुरुषों को विपत्तियां अधिक आया करती हैं। भाग्य की बात। थोड़े दिन बाद मास्टर साहब की पुत्री विद्यादेवी

जिसका विवाह हो चुका था बीमार हो गई। मास्टर साहब ने उसका बहुत कुछ इलाज कराया किन्तु लडकी नहीं बची और चल बसी। इस सदमें को मास्टर साहब ने प्रगट नहीं होने दिया और संसार का स्वरूप जानकर संतोषसा कर लिया था कि यकायक एक भयानक परिस्थिति उपस्थित हो गई। मास्टर साहब का एक मात्र सुपुत्र विद्युतकुमार बीमार रहने लगा और बराबर क्षीण होने लगा।

विद्युत्कुमार एक होनहार लडका था। उसके चहरे पर पुण्य वानी व शान्ति झलकी पडती थी। बचपन से ही उसके पढने लिखने का समुचित प्रबंध था। यही वजह थी कि १६ वें वर्ष में उसने बी. काम पास कर लिया। और बाद में राज्य के अकाउन्ट्स आफ़िस में एक अच्छी पोस्ट पर नोकर भी होगया। विद्युतकुमार एक विनयशील, शर्मीला बालक था। मास्टर साहब उसको हमेशा अपनी साथ रखते थे। दूसरे बालकों के साथ खेल कूद तक में शरीक नहीं होने देते थे। नतीजा इसका यह निकला कि पढने में जहां इतने जल्दी उसने ऊंची डिगरी प्राप्त की उसके साथ ही शारीरिक स्वास्थ्य गिरता चला गया। फिर तो मास्टर साहब भी अपनी गलती महसूस करने लगे और उसको दूसरे बराबर के साथियों में जाने आने की प्रेरणा भी करने लगे। मगर विद्युत कुमार की आदत बन चुकी थी और बराबर के साथियों में जाकर खडे होने और बात करने में भी उसको शर्म सी मालूम होने लग गई थी। विद्युत् कुमार एक लंबे अर्से तक बीमार रहा और अंन्तमें मास्टर साहब को छोडकर चलता बना। मास्टर साहब ने

जिस प्रकार विद्युत् कुमार की परिचर्या की तथा आखिरी समय तक उसको शुभोपयोग व भगवन् स्मरण में लगाये रखा वह अनुकरणीय था। एक इकलौते सुपूत लडके का उसके पिता द्वारा इस प्रकार अंतसमय तक दृढता पूर्वक धर्मध्यान कराना, प्रभु-सुमरन में चित्त रखने की प्रेरणा करते रहना उनके आध्यात्मिक जीवन होने का ज्वलन्त प्रमाण है। किन्तु इतना ही नहीं; जिस वक्त विद्युत कुमार की अरथी घर से निकली उस वक्त कौन ऐसा वज्र-हृदय व्यक्ति था जिसके हृदय पर चोट न पहुंची हो और आखों से अश्रुपात न हुआ हो किन्तु मास्टर साहब चुपचाप साथ रहे और अपने कंधे पर अपने नोनिहाल सुपुत्र की अरथी को लेकर श्मशान तक पहुंचाया। जिस वक्त विद्युत् कुमार के मृत शरीर को श्मशान में रखा गया, सैकडों आदमी जो श्मशान यात्रा में साथ थे दुःखी हो रहे थे, किन्तु मास्टर साहब ने उस वक्त जो कुछ किया वह एक आदर्श और जैन गृहस्थियों के लिए ऐतिहासिक सी घटना थी।

मित्रों व कुटुम्बीजनों को मास्टर साहब ने आवाज देकर एक तरफ बिठलाया और संसार का स्वरूप बतलाते हुये समयसार का उपदेश देने लगे। मास्टर साहब की इस दृढता को देखकर सब लोग आश्चर्य कर रहे थे। उनके कुछ मित्र चिन्तित भी थे कि मास्टर साहब के एक भी आंसू नहीं आया है ऐसा न हो कि इसका असर इनके दिल व दिमाग पर खतरनाक साबित हो। इस प्रकार अपने एक मात्र कलेजे के टुकड़े आज्ञाकारी सुपुत्र का

दाह संस्कार करके घर लौटे और उसही समय अपनी सहधर्मिणी को उपदेश देकर उसका रुदन बंद कराया। इसके बाद रोना पीटना कतई बंद रहा। तीजे की बैठक के समय सब रिश्ते-दार कुटुम्बी समय पर बैठक में इकट्ठे होगये पर नियत समय तक भी मास्टर साहब बाहर नहीं आये। जब मास्टर साहब को अन्दर से बुलाया गया तो मालूम हुवा कि बैठक के अन्दर २००-३०० की तादाद में इकट्ठी हुई स्त्री समाज को मास्टर साहब उपदेश दे रहे हैं और संसार का स्वरूप बतला रहे हैं।

मास्टर साहब का यही क्रम बैठक तक बराबर जारी रहा सैकड़ों नहीं बल्कि हजारों की तादाद में जैन अजैन मित्रगण मास्टर साहब को सांत्वना देने आते थे और मास्टर साहब स्वयम् उनको सांत्वना प्रदान करते थे। इनके इस समय के कार्यों को व दृढता को देख कर सब लोग धन्य धन्य कह कर जाते थे और कहते थे कि व्यक्ति सच्चा है या झूंठा, धर्मात्मा है या ढोंगी-यह सब बातें ऐसे मौकों पर ही प्रकट होती हैं।

विद्युत कुमार के स्वर्गवास के कुछ दिनों बाद ही मास्टर साहब ने घर छोड़ कर बाहर किसी आश्रम में जाकर रहने का विचार किया। उनके मित्रों ने उनको समझाया और उनके गुरु आचार्य सूर्य सागरजी महाराज के उन वचनों की याद दिलाई जो उन्होंने ब्रह्मचर्य धारण के समय कहे थे। इस पर मास्टर साहब ने कहा कि एक दफा मैं बाहर जाकर सब जगह घूम कर

वापस आजाऊंगा और फिर अपना विचार स्थिर करूंगा। इनका विचार सब से पहले सोनगढ गुजरात जहां कानजी स्वामी विराजते हैं और समयसार का उपदेश देते हैं उनके समीप रहने तथा वहां से पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णी की सेवामें उपस्थित होने का था। कानजी स्वामी का आत्म-धर्म पत्र यह पहले से ही पढ़ा करते थे और वहां मुमुक्षु और उदासी भाइयों के लिए सब प्रकार का उत्तम प्रबंध है यह भी कहा करते थे। अपने इसी विचार के अनुसार वह अपनी सहधर्मिणी को साथ लेकर सोनगढ पहुंचे। किन्तु वहां की व्यवस्था तथा गुजराती भाषा में व्याख्यान होने आदि की अड़चनों से वे वहां दो तीन दिन से ज्यादा नहीं ठहर पाये और आगे शत्रुंजय गिरनार, तारंगा, पावागढ की यात्रा को निकलगये। अहमदाबाद में उनको और उनकी सहधर्मिणी को मलेरिया बुखार हुआ। मास्टर साहब का झुकाव ज्यादातर प्राकृतिक चिकित्सा की तरफ रहा करता था। कुनेन आदि औषधियों के प्रति उनको बहुत ही कम विश्वास था। किन्तु जब कई दिनों तक बुखार नहीं टला और दोनों की ही हालत खराब होने लगी तब मास्टरनीजी ने बहुत आग्रह किया और उज्जैन जहां कि यह पांच सात दिन से ठहरे हुये थे जयपुर के लिए प्रस्थान किया, उस समय मास्टर साहब की हालत बहुत कमजोर हो चुकी थी। अतः चलती रेल में ही उनको बेहोशी होगई और नब्ज तक जाती रही। साथ में अकेली मास्टरनीजी थी और वे भी काफी बीमार थीं। किन्तु रेल में ही एक दो सज्जन जो कहीं जा रहे थे उन्होंने पूछताछ की और उनको जब गह

मालूम हुआ कि यह तो मास्टर नानूलालजी और उनकी धर्मपत्नी है तो उन लोगों ने काफी कोशिश की। कोटा स्टेशन के स्टेशनमास्टर एवं डाक्टर आदि को तार दिलाया। तदनुसार डाक्टर स्टेशन पर तय्यार मिले और उन्होंने ट्रेन के आते ही इनका तलाश करके इन्जेक्शन दिया। जिससे फिर होश आया और नाड़ी चलने लगी। मास्टरनीजी के कहने से मालूम पडा कि वह दोनों सज्जन कोई रेलवे के ही मुलाजिम थे और उन्होंने बतों ही बातों में अपने आपको मास्टर साहब के शिष्य होना प्रकट कर दिया। सवाई माधोपुर से तो और भी जयपुर आने वाले भाइयों का साथ मिलगया और मास्टर साहब घर पर आ पहुंचे। किन्तु उनकी हालत बडी कमजोर होगई थी, शरीर पीला पडगया था। डाक्टरों को बुलाया गया उन्होंने खून की परीक्षा करनी चाही और उसके लिए खून लेने की कोशिश की गई मगर शरीर के किसी भी हिस्से से खून का एक कतरा भी नहीं निकल सका। यह देखकर डाक्टर भी ताज्जुब में आगये और सहसा उनके मुंह से निकला कि इस प्रकार खून की कमीवालों का पहला केस हमारे सामने है। तीसरे पहर से ही मास्टर साहब की हालत गिरने लगी उनके हितैषी लोग जब उनसे पूछताछ करते थे तो उनको जवाब देते हुये कई दफा निम्नलिखित वाक्य—

जो जो देखी वीतराग ने सो सो होसी वीरा रे।
अन होनी होसी नहीं कबहूँ काहे होत अधीरा रे।।

उनके मुंह से निकलते थे। इससे उनका आध्यात्मिकता में दृढ

विश्वास प्रकट होता है। रात्रि के आठ बजे तक वे बातचीत करते रहे और पूछने पर उत्तर भी देते रहे इसके बाद बोलना कम पड़ गया बात चीत बंद होगई। किन्तु बीच बीच में णमोकार मंत्र का उच्चारण बराबर सुनाई पड़ रहा था। इस प्रकार रात भर भगवत स्मरण करते हुये पौष बदि ११ ता० ३०-१२-४५ सं० २००२ को प्रातः काल ५ बजे के करीब मास्टर साहब ने इस नश्वर शरीर को छोड़ दिया। उनकी धर्मपत्नी ने उस रात्रि को स्वयम मलेरिया से पीड़ित होते हुए तेज बुखार में भी सेवा तथा परिचर्या में जो दृढता दिखलाई वह अनुकरणीय थी।

मास्टर साहब के अचानक देहावसान के समाचार जयपुर जैन समाज में बिजली की तरह फैल गये और सैकड़ों जैन भाइयों ने शव यात्रा में शामिल होकर अपना प्रेम भाव दर्शाया। दूसरे दिन पौष बुदी १२ ता० ३१-१२-४५ को श्रीवीर सेवक मंडल के तत्वा-विधान में जयपुर जैन समाज की एक शोक सभा दीवान शिवजी लालजी के मंदिर में श्रीमान पं० चैनसुखदासजी के सभापतित्व में हुई। सारी उपस्थित समाज ने मास्टर साहब की आत्मा को सद्गति प्राप्ति के लिए भगवान से प्रार्थना की। उसही सभा में मास्टर साहब के मित्रगणो ने मास्टर साहब की स्मृति को बनाये रखने के लिए एक कोष की स्थापना का विचार प्रगट किया जिसको उपस्थित सब भाइयों ने भी पसंद किया और तत्कालही २०००) के करीब रकम इकट्ठी होगई। इस स्मृति कोष में सबसे पहले श्रीमती सूरज बाईजी धर्मपत्नी स्वर्गीय मास्टर साहब नानूलालजी ने

५००) रुपया जमा कराने की सूचना दी। इस कोष का नाम श्री मास्टर नानूलाल स्मारक कोष रक्खा गया और इसकी एक प्रबन्ध समिति चुनीगई जिसके मंत्री श्री बख्शी केशर-लालजी बनाये गये।

अनूपचंद सेठी
मंत्री
श्री वीर सेवक मण्डल जयपुर।
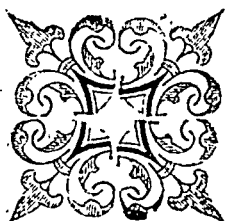
सम्पादकीय

इस संग्रह में स्वर्गीय मा० नानूलालजी भांवसा द्वारा रचित भजनों का संकलन है। कविता की दृष्टि से ये भजन बहुत ही साधारण हैं फिर भी एक भक्त कवि की रचना होने के कारण इनका महत्त्व है। जयपुर के मुमुक्षु भजन प्रेमियों में इन भजनों का काफी प्रचार है और वे कई दिनों से इनके प्रकाशन की मांग कर रहे हैं। यही कारण है कि इनके प्रकाशन का आयोजन किया गया।

मास्टर साहब एक आध्यात्मिक गायक थे। अपने और पं० बनारसीदासजी, दौलतरामजी, भागचन्दजी, द्यानतरायजी, भूधरदासजी, सुन्दरदासजी एवं कबीरदासजी आदि विभिन्न कवियों के करीब १०००,उनको पद याद होंगे। उनकी महत्ता एक भक्त गायक की दृष्टि से है। मैंने उनको अनेकों बार गाते देखा है। मेरे श्रद्धेय गुरु श्रीमान् पं० चैनसुख दासजी न्यायतीर्थ के प्रवचन में वे अविरत रूप से आते और शास्त्र प्रवचन के बाद प्रायः वे ही भजन गाते। इन्हीं के संसर्ग से मास्टर साहब ने जैन धार्मिक शास्त्रों का भी बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त कर लिया था। ये जयपुर जैन समाज के ख्यात गायक थे। प्रतिवर्ष मन्दिरों में उनके कई जागरण होते थे। ये अकेले ही रात भर गाते किन्तु थकने का काम नहीं। आपकी उपस्थिति से जयपुर का कोई भी उत्सव वंचित

नहीं रहता था। जब वे धीरे धीरे गायक बन गये तब इन्हें कविता करने का भी शौक हुआ और इन्होंने बहुत से भजन बना डाले। ये गायक होने के अतिरिक्त हारमोनियम बजाना भी जानते थे और जब करताल हाथों में लेकर गाते हुये बजाते तो देखते ही बनता था।

इस संग्रह में जो कठिन स्थल हैं उनकी विशद टिप्पणियां अन्त में भजनों का क्रम देकर दे दी गयी हैं, जिससे साधारण पाठक भी सहज ही इन भजनों का अर्थ समझ सकता है। इतना ही नहीं भजनों में आये हुये पारिभाषिक शब्दों के लक्षण और भेद पाठकों की सुविधा के लिए दे दिये गये हैं जिससे इस संग्रह की उपयोगिता बढ गयी है।

बहुत कुछ खोज करने पर भी ३६ भजनों से अधिक मास्टर साह के भजन नहीं मिले। यदि किसी भाई के पास इनके अतिरिक्त भी कोई भजन हो तो हमें जरूर ही सूचित करें। आशा है मुमुक्षु भाई बहन इन भजनों का अवश्य ही उपयोग करेंगे जिससे यह श्रम सफल हो।

कस्तूरचंद एम, ए, शास्त्री

प्रकाशकीय

श्री मास्टर नानूलालजी साहब जयपुर के विभूति-स्वरूप थे। उनके निधन पर सभी बन्धुओं को काफी दुःख हुआ था। ता० ३१-१०-४५ को श्री वीर सेवक मण्डल की ओर से सामूहिक रूप से शोक मनाने को स्थानीय जैन बन्धु एकत्र हुए और उस समय विचार हुआ कि श्री मास्टर साहब के स्मारक के रूप में कोई योजना बनानी चाहिए। फलतः निश्चय हुआ कि श्री मास्टर साहब के बनाये हुए भजनों को प्रकाशित कराया जाय, तथा श्री दि० जैन संस्कृत कालेज एवं श्री महावीर दि० जैन हाई स्कूल, जयपुर की सर्वोच्च कक्षा में धर्म विषय में सर्व प्रथम उत्तीर्ण होने वाले छात्रों को प्रति वर्ष एक २ मास्टर नानूलाल पदक दिया जावे। यदि कोष पर्याप्त हो जाय तो दोनों कन्या पाठशालाओं की छात्राओं को भी पदक दिये जाने की व्यवस्था की जासकती है। इसके लिए निम्न प्रकार से निम्न लिखित स्मारक कोष में चन्दा एकत्र हुआ और एक प्रबन्ध समिति का निर्माण हुआ जिसके सदस्य ये हैं:—

१. श्री पं० चैनसुखदासजी न्यायतीर्थ,
२. श्री सेठ रामचन्द्रजी खिन्दूका
३. श्री पं० भँवरलालजी न्यायतीर्थ
४. श्री बा: सुरजमलजी वैद बी. एस. सी:
५. बख्शी केसरलाल——मंत्री

इस पुस्तक के प्रकाशन में काफी विलम्ब हुआ है। प्रथम तो भजनों के संग्रह में और फिर प्रेस में। इसके लिए खेद है।

दातारों की सूची:—

५००) धर्मपत्नी मास्टर नानूलालजी
२५१) सेठ जोखीरामजी वैजनाथजीसरावगी
२०१) सेठ मधीचन्दजी गंगवाल १५१) खुद के
५०) धर्मपत्नी की ओर से
२०१) सेठ केसरलालजी चिरंजीलालजी
सिवाड वालों के १५१) स्वयं के
५०) धर्मपत्नी सेठ केशरलालजी
१५१) सेठ रामचन्द्रजी खिन्दूका
१०१) मास्टर भूरामलजी खिन्दूका
१०१) बा० गैंदीलालजी गंगवाल
१०१) सेठ केशरलालजी नेमीचन्दजी वकील
१०१) केशरलाल बख्शी
१०१) श्री वीर सेवक मंडल, जयपुर
५१) सेठ रामचन्द्रजी भाँवसा कोठ्यारी
५१) सेठ मूलजी छोगालालजी सेठी पंसारी
५१) सेठ गुलाबचन्दजी कुन्दनमलजी भांवसा
२५) सेठ धन्नालालजी चांदवाड
२५) सेठ महोरीलालजी बिलाला
२५) सेठ नानूलालजी बैद
२५) सेठ गैंदीलालजी ठोलिया
२५) बा० रतनलालजी गोधा
२५) बा० उमरावमलजी सोगाणी
२१) सेठ गुलाबचन्दजी पंसारी
२१) सेठ भूरामलजी पंसारी
२१) मु० गुलाबचन्दजी साह पंसारी
११) सेठ बसंतीलालजी लुहाडिया
११) बा० कपूरचंदजी गोधा
११) सेठ हीरालालजी ठोलिया
११) सेठ गोपीचन्दजी सौगाणी
११) बा० कपूरचन्दजी पापडीवाल
११) मु० फूलचन्दजी सोनी
११) मु० गूजरमलजी झांझरी
११) सेठ गैंदीलालजी छाबडा खादीवाले
११) बा० मूलचन्दजी खिन्दूका
११) पं० चैनसुखदासजी न्यायतीर्थ
११) मु० किशनलालजी फूलचंदजी बाकीवाले
११) बा० मानकचन्दजी छाबडा
११) मु० सूर्यनारायणजी सेठी वकील

१) सेठ प्यारेलालजी सेठी
११) सेठविजयलालजी लिखमीचन्दजी कसेरा
११) बा० विद्यानन्दजी काला
११) बा० चान्दमलजी पार्श्वलालजी चांदवाड
११) पं० श्रीप्रकाशजी शास्त्री
११) बा० ताराचन्दजी काला
११) मु० गुलाबचन्दजी साह
११) बा० जयकुमारजी बी. ए जैन अग्रवाल
५) बा० केवलचन्दजी श्रीमाल
५) मु० फतेहलालजी सिलह खानेवाले
५) ,, फूंदीलालजी खन्दूका
५) ,, हजारीलालजी पापडीवाल
५) ,, किशनलालजी चौधरी
५) सेठ नानूलालजी ठोलिया
५) ,, केशरलालजी चांदवाड
५) ,, दासूलालजी छाबड़ा
५) ,, सेठ सेडमलजी भांभरी
५) ,, चांदूलालजी भांभरी
५) ,, नोरतनमलजी भांभरी
५) ,, गोपीचन्दजी पाटणी
५) मु० शिखरचन्दजी सरिस्तेदार
५) बा० मानकचन्दजी मास्टर बी. ए.
५) मु० विमलचन्दजी सेठी
५) पं० केशरलालजी शास्त्री
५) सेठ कल्याणमलजी हलवाई
५) मु० कन्हैयालालजी पाटोदी
५) सेठ फूलचन्दजी घड़ीवाले

२५०१)

जिन में से सेठ बधीचन्दजी गंगवाल के ब्याज दर ।=।।। जमा कराये २०००) बाकी ५०१) मोजूद वास्ते छपाई पुस्तकें व तय्यारी डाई वगैरह के।

दीपमालिका
वीर नि० २४७३

बख्शी केशरलाल
मंत्री
श्रीमास्टर नानूलाल स्मारक कोष
समिति, [illegible]

ओ३म्

नानू भजन संग्रह

भजन नं० १

राग–भैरवी

श्री महावीर भगवान की, सब मिलकर जय जय बोलो
ध्यान लगाओ वीर प्रभू का, करो गान गुण महाऋषी का।
वह है ईश्वर सुखी दुखी का, उस महान गुण खान की,
महिमा गाके अघ धोलो ॥ १ ॥

जब दुनियां में पाप समाया, वीर प्रभु झटपट यहाँ आया,
विश्व प्रेम का पाठ पढाया, रीति बता कल्याण की,
बोले–अब नैना खोलो ॥ २ ॥

ऊँच नीच का भेद मिटाया, देव मनुज पशु सभी बुलाया।
वीर प्रभु ने यह सिखलाया, जीवात्मा महान की,
है अनन्त शक्ति तुम तोलो ॥ ३ ॥

पञ्च पाप हिरदै से छोड़ो, विषय कषायों से मुख मोड़ो,
सब की सेवा में मन जोड़ो, यह शिक्षा भगवान की,
निज आतम में तुम बोलो ॥ ४ ॥
आज बनी दुर्दशा हमारी, पाप करम करते हम भारी,
गई एकता मनसे सारी, करें मरम्मत मान की,
घुण्डी दिल की अब खोलो ॥ ५ ॥
गई गई अब कहना मानो, वीर की शिक्षा हिरदै टानो,
समय गये पर बहु पछतानो, 'नानू' उस शक्ति महान की,
फिर सब मिल जय जय बोलो ॥ ६ ॥

भजन नं० २

राग–विहाग

भजन करो तुम ज्ञानी प्रानी ॥ टेक ॥
मोक्ष को कारन दोष निवारन, वेद पुराण बखानी ॥ १ ॥
भोग व्यसन में दिन मत खोवे, यह दुर्गति अगवानी ।
घड़ि घड़ि पल पल बीतत आयु, ज्यों अंजुली को पानी ।२।
नारी सुत मित प्यारे बन्धु, करें धर्म में हानी ।
स्वारथ के वश तुमसे रमते, बात नहीं कुछ छानी ॥३॥

स्वप्न समान जगत की रचना, सर्व वस्तु हैं फानी ।
भजन सम नहिं काज दूजो, दृढ निश्चय मन आनी ॥ ४ ॥
विषय कषाय त्याग धर धीरज, श्रवण करो जिन वानी ।
तनसे, मनसे, धनसे, वचन से हो सबको सुख दानी ॥५॥
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण तप, जीव दया व्रत ठानी ।
पर को त्याग लाग शुभ मारग, तजदे तू मनमानी ॥६॥
आन अचानक कंठ दबेंगे, छांड दे आना कानी ।
निशि दिन भजन करो तुम 'नानू'मुक्ति पुरी की निशानी॥

भजन नं० ३

राग—उजाभ

तू तो समझ समझ रे ज्ञानी, क्यों विषय भोग लिपटानी
सूखे हाड चबाकर कूकर, करत आपनी हानी ।
निज मुख रुधिर पीयके मूरख, तिरपत होय अज्ञानी ॥१॥
अग्नि बुझावन कारन कोई, घृत डारै जिमि पानी ।
तैसे तू विषयन को सेवत, तृष्णा नाहिं अघानी ॥ २ ॥
मधु से लिप्त कृपाण समझकर, तजते ज्ञानी प्रानी ।
खाज खुजावत मीठी लागै, अन्त महा दुख दानी ॥३॥

विषय भोग से विमुख होयकर, आतम अनुभव ठानी।
ज्ञान ध्यान में रमजा 'नानू', मुक्ति पुरी की निशानी ॥४॥

भजन नं० ४

राग-सोरठ

जाग रे नर जाग प्यारे, मोह निद्रा त्याग रे ॥ टेक ॥
नरभव अमोलक रत्न से, मत तू उड़ावे कागरे।
मिलना बड़ा ही है कठिन, तू छांड दे सब रागरे ॥ १ ॥
गया बालापन अज्ञान में, जोबन है पानी झागरे।
भोगन में तू मत खो इसे, अब तो भजन में लागरे ॥२॥
क्या मात पितु क्या नारि सुत, क्या माल महल क्या बागरे
पल में जुदा हो जायेंगे, इत उत वृथा न भागरे ॥ ३ ॥
जो कुछ गई सो गुजर गई, धरले तू अब वैरागरे।
'नानू' तू शिव पद पायगा, तू आतमा में पागरे ॥ ४ ॥

भजन नं० ५

राग-भैरवा

है यह संसार असार रे, तू क्यों इसमें है रमता ॥ टेक ॥
दुनियां है धोखे की टट्टी, अन्त ~~ा मिट्टी की मिट्टी।

आंखन में तेरे बंधी है पट्टी, डूब रहा मझधार रे।

धरता क्यों नहीं तू समता ॥ १ ॥

बालापन लड़कन संग खोया, खेल कूद में कुछ नहिं जोया
यौवन में नारी सङ्ग मोह्या, जरा अवस्था खाररे।

अजहूं मूरख नहिं नमता ॥ २ ॥

देव गती में भोग समाया, नर्क काल पीडा में गमाया।
पशू गती में पाप कमाया, कौन गती सुख काररे।

जप तप में क्यों नहिं जमता ॥ ३॥

आतम अनुभव कर तू भाई, केवल ज्ञान प्रकट होजाई।
लगे न फिर कर्मन की काई, 'नानू' शिव पद धार रे,

तू छांड जगत की ममता ॥ ४ ॥

भजन नं० ६

राग—मारवाडी

जगत सपने की माया, मूरख यामें वृथा लुभाया,
माया जाल के दूर करन को भेद बतायारे ॥ टेक ॥
रङ्क एक को सपना आवे, लाख करोड़ बहुत धन पावे।
मन ही मन में क्षणिक लुभाकर फिर दुख पायारे ॥ १ ॥

सपने में शत्रु इक भारी, नृप की सम्पति छीनी सारी।
दारुण दुख लहि जागे यों सपने की छायारे ॥ २ ॥
मनुष्य जन्म है लंबा सपना, आतमरूप सम्भालो अपना।
इस सपने का काल बली ने अन्त करायारे ॥ ३ ॥
नया स्वप्न तब आगे आवे, जीव तहां सुख दुख फिर पावे।
यों अनादि से जीव सकल संसार भ्रमायारे ॥ ४ ॥
ज्ञानी इसमें कबहुं न रमता, कर्म काट के पाता समता।
'नानू' तू भी मोह त्याग सत्गुरु यों गायारे ॥ ५ ॥

भजन नं० ७

राग–मारवाड़ी

देख देख तू आतम प्यारा चेतन पुद्गल न्यारा न्यारा,
भेद ज्ञान की छैनी लगत ही हो उजियारा रे ॥ टेक ॥
जैसे चीर नीर मिल जावे, तैसे जड़ चेतन दरसावे।
समकित रूपी राज हंस से होवे न्यारारे ॥ १ ॥
आतम काच कर्म है काई, कर पुरुषार्थ मिटाओ भाई।
तीन लोक और तीन काल का हो चमकारारे ॥ २ ॥
जीव कनक तन मिट्टी जानो, मोह कर्म वश नहिं पहचानो।
भेद ज्ञान की अग्नि से खुलता मोक्ष द्वारारे ॥ ३ ॥

क्या जप तप क्या तीरथ दाना, बिन सम्यक्त निरर्थक माना
या बिन 'नानू' है तेरा जीवन धिकारा रे ॥ ४ ॥

भजन नं० ८

राग-मारवाडी

जीव का रूप निराला, क्यों तू डूबे जग जंजाला रे।
पर परणति जब विनस जाय तब होय उजाला रे ॥ टेक॥
मात पिता नारी सुत भाई मूरख यामें वृथा लुभाई।
मोह कर्म ने जीवों को चक्कर में डाला रे ॥ १ ॥
अपने तन से प्रीति हटाओ, जप तप संयम में चित लाओ
देह सों नेह देह को कारण है मतवालारे ॥ २ ॥
पञ्च पाप अरु चार कषाई क्रम२ हैं इनको जीतो भाई।
इन्हें त्याग कर ज्ञानी पीवे ज्ञान पियालारे ॥ ३ ॥
तेरो रूप अचल अविनाशी, सिद्ध स्वरूपी स्वयं प्रकाशी।
आतम ऋद्धी पाकर 'नानू' होत निहाला रे ॥ ४ ॥

भजन नं० ९

राग-पैरवा

है दिन परसों इमतिहान का, जो करना हो सो करलो ।टेक।

प्रश्न कठिन पूछे जावेंगे, क्योंकर उनको निपटावेंगे।
दारुण दुख में पड़जावेंगे, मारग कुछ कल्याण का
पहिले से मनमें धरलो ॥ १ ॥
निश दिन विद्या जो पढ़ते हैं, ऊंची कक्षा में चढ़ते हैं,
सुस्त आलसी नहिं बढ़ते हैं, जप तप संयम ध्यान का,
तुम सोच इसी विधि करलो ॥ २ ॥
सज्जन जन हैं गुरु और शिक्षक, कर्म हमारे रहें निरीक्षक,
काल बली है बड़ा परीक्षक, मालिक है भुगतान का,
अब छोड़ पुण्य तुम करलो ॥ ३ ॥
गई गई अब राख सयाने, फेल हुवे पर बहु पछताने,
तीर तेज यम राजा ताने, विषय भोग की बान का
हठ त्याग के 'नानू' तरलो ॥ ४ ॥

भजन नं० १०

राग—पैरवा

काल अचानक खायगा, क्या फूला फूला डोले ॥ टेक ॥
अर्ध समय सोने में खोवे, अर्ध में माया काया होवे,
विषय कषायों को नहिं धोवे, फिर पीछे पछतायगा,
क्यों अमृत में विष घोले ॥ १ ॥

इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्र हु सारे, काल बली से सब ही हारे
क्षणिक एक में सब को मारे, तुम को भी ले जाएगा,
हँस चुका बहुत अब रोलै ॥ २ ॥

जलचर वनचर भूचर नभचर, देव नारकी दीरघ लघुतर,
यमराजा सबको लेता हर, तू चक्कर में आयगा,
अब नैना क्यों नहिं खोलै ॥ ३ ॥

सन्त समागम करो सयाना, भजन प्रभू का करे कल्याना,
तुझ को भी है आखिर जाना, 'नानू' शिव पद पायगा,
तू अष्ट कर्म को धोलै ॥ ४ ॥

भजन नं० ११

राग—पनघट पर मच रही भीर, शीश पर घड़ा धरा पणिहारी।

तुम सुनना चतुर सुजान, सीख सत्गुरु की तुम्हैं सुनाऊं।टेक।
इस नर देही को पाय, वृथा मत राग रङ्ग में खोना।
जप तप में समय बिताय, नींद गफलत की में मत सोना,
यहां चोर लुटेरे भटकैं हैं, धन धर्म की पूंजी गटकै हैं।
तुम सदा संभाले रहना ॥ १ ॥

जिनवर की पूजन गाय, तिलक मस्तक पर लम्बा धरते।

फिर करैं पाठ स्वाध्याय, त्याग भी हरी भरी का करते।
कर पाप कपट छल माया, धन लाख करोड़ कमाया।
भगवन से भी नहिं डरते ॥ २ ॥

सब धर्मों का सरदार, अहिंसा व्रत को मन में ठानो।
मत देखो तुम परदार, झूठ मुख से मत कभी बखानो।
पर वस्तुन को मत ग्रहण करो,वश कर मन को संतोष धरो
परिग्रह दुख मूला जानो ॥ ३ ॥

इस कली काल में लोग, दिखाऊ क्रिया कारड करते हैं।
यह बड़ा मान का रोग, लगे जब नरक जाय परते हैं।
'नानू' तज विषय कषाई, सत्गुरु यह सीख बताई।
ज्ञानी हिरदे हैं धरते ॥ ४ ॥

भजन नं० १२

राग—पैरवा

भोग भुजंग समान हैं, विषधर हैं दारुण कारे ॥ टेक ॥
भुजग डसंत इक बार ही मरता,जन्म अनन्ते या से धरता,
नारक पशु गति परता परता, पावे दुख महान है,
तज दे तू यह हैं खारे ॥ १ ॥

फरस विषय के कारन वारन, परता मरत करे दुख धारन,
जल में झख के कंठ विदारन, रसना इन्द्रिय बान है,
खोती वो प्रान पियारे ॥ २ ॥
अलि मरता घ्राणेन्द्रिय वश में, कमल गंधसे पड़ता गशमें,
चक्षु विषय की कशिम कशिश में, जाय पतंग के प्रान हैं,
यह विषय भोग मतवारे ॥ ३ ॥
करन विषय वश हरिन खरा है,हाथ शिकारी जाय परा है,
प्रान परवेरू हाय उरा है, वनता भोजन पान है ।
विषयन ने सबको जारे ॥ ४ ॥
एक एक विषयन की यारी, देख देख तू कैसी खारी
रहता तू तो स्वेच्छाचारी, पंचेन्द्रिय दुख खान है,
नरकों में तुझको डारे ॥ ५ ॥
इनको त्यागे जो कोई भाई, तिसकी महिमा सुरपति गाई,
अविनाशी सुख सम्पत्ति पाई, लहै मोक्ष निर्वान है ।
'नानू' शिव मारग पारे ॥ ६ ॥

भजन नं० १३

राग—पैरवा

काया अथिर विनावनी, मत करना इससे यारी ॥ टेक ॥

रज वीरज के बीजों सेती, मातृ गर्भ में लग गई खेती,
उदर बढा जब भई सचेती, राग रङ्ग मन भावनी
होती है घर में जारी ॥ १ ॥

सुन्दर शिशु सब ही को भावे, मीठी बानी मन हर्षावे,
खेल कूद में समय बितावे, अथिर जवानी पावनी,
थोड़े दिन लागे प्यारी ॥ २ ॥

काम भोग ने यह फल दीना, पुत्रादिक ने बासा लीना,
मोह पाश में कुछ नहिं चीन्हा, आई जरा डरावनी,
संसार लगे अब खारी ॥ ३ ॥

रोग पिशाच बढे तन मांही, रींट गीड़ कफ मिटते नाहीं
सुत दारादिक को परछांही, लगती बहु असुहावनी,
खटिया पौरी में डारी ॥ ४ ॥

सत्य अवस्था तनकी सारी, अब प्रत्यक्ष देख नरनारी,
नसां जाल की है फुलवारी, कैसी मैल अपावनी,
मलमूत्र खजाना भारी ॥ ५ ॥

काल बली ने आन सताया, अन्त समय हिरदै में लाया,
पाप कर्म जो खूब कमाया, नीच गती अब पावनी,
क्या होवे मूर्ख अनारी ॥ ६ ॥

नर तन काना इन्नु मानो, आतम अनुभव हिरदै ठानो,
जपतप संयम मनमें आनो, स्वर्ग मोक्ष सुखदायनी,
'नानू' शिक्षा हितकारी ॥ ७ ॥

भजन नं० १४

राग—देश (उड़ी हवा में जाती है, गाती चिड़िया यह राग)

क्षमा क्षमा सब बोले रे, भाई क्षमा क्षमा सब बोल,
जोड़ जुगल कर मैं भी मांगूं देदो पूरी तोल ॥ टेर ॥
क्रोध भाव को दूर भगा के, वचन मधुर तू बोल।
क्षमा शास्त्र को धारण करले, पहन दया का चोल ॥ १ ॥
मान कषाय नष्ट फिर करके, द्वेष भाव दे ढोल।
सबको आप समान गिनै तो, ले सम्यक् अन्मोल ॥ २ ॥
कपट कृपाण मिटै नहिं जबलों, क्षमा कभी मत बोल।
अन्तर उज्ज्वल करके प्यारे, दिलकी घुण्डी खोल ॥ ३ ॥
तीन कषाय नष्ट जब होवैं, लोभ की निकलै पोल।
क्षपक श्रेणी चढ करके 'नानू' पावे शिव अन्मोल ॥ ४ ॥

भजन नं० १५

राग–सारङ्ग

खेलै छै तो सम्यक् चौसर खेल रे, जीं खेल्यां सैं शिव
गोरी मिल जाय सी । टेक

सबसे पहली मोह करम तू त्याग रे
ईं का फन्दा काट्यां कारज चालसी ॥ १ ॥
ईं का बेटा राग द्वेष दो जान रे
प्रेम बैर क्यों करतो डोलै गैर से ॥ २ ॥
सब जीवों को आप समाना मान रे
समदर्शी की या मोटी पहिचान छै ॥ ३ ॥
भेद ज्ञान की छैनी चित में धार रे
जड चेतन नै न्यारो न्यारो देख ले ॥ ४ ॥
निश्चय में यो शुद्ध धर्म तू ठान रे
ईं कै बिन 'नानू' सब करणी वृथा कही ॥ ५ ॥

भजन नं० १६

राग–सारङ्ग

धरती नै क्यों बोझयां मारी चेत रे

भजन विना जीवन वृथा गयो । टेक ।
भजन करो तुम प्रभुजी के दरबार रे
मोह करम सब जल्दी छूट सी ॥ १ ॥
वेद शास्त्र सब करते यही बखान रे
सत संगत में बैठ बैठ कर भजन करो ॥ २ ॥
सत संगत में सत्यज्ञान की बात रे
झूंठो छै माया ई सब संसार की ॥ ३ ॥
भजन किये तें आत्मा धुल जायरे
भेद ज्ञान को साबुन जल्दी पायसी ॥ ४ ॥
'नानू' तू भी प्रीति भजन से ठान रे
भजन किये तें शिव मारग मिल जायसी ॥ ५ ॥

भजन नं० १७

राग-सारङ्ग

झूलो झूलै रे करम वश चेतन जी, हींदो हींदे रे । टेक ।
सादि अनादि निगोद दोय में, काल अनन्त बिताया जी
एक श्वास में अठारह बारी, जामन मरण कराया जी ॥१॥
काल लब्धि पाकर के फिर तू, थावर तन में आया जी
भूजल ज्वलन पवन आदिक में, कष्ट महा तू पाया जी ॥२॥

चिन्तामणि ज्यों दुर्लभ जग में, त्रस पर्याय लहाया जी
लट पिपीलि अलि आदि जन्म ले, दर दर पै भटकायाजी॥३॥
पंचेन्द्रिय पशु तन पाकर के, निशि दिन भार वहायाजी
अति संक्लेश भाव तें मर कर, नरकों में पटकायाजी ॥४॥
बहु सागर तहां दुख पाकर के, मनुज देह में आया जी
किंचित् पुण्य करम तुझ को पुनि, स्वर्गों मांहि पठायाजी॥५॥
विषय भोग में मग्न होय तहँ, आतम राम भुलाया जी
माला जब मुरझाय गई तब, छै महिने विललायाजी ॥६॥
तहँतें चय एकेन्द्री उपज्या पुनि निगोद में आयाजी
यों अनादि से रुलतो रुलतो चेतन जी भरमायाजी ॥७॥
यह नर भव देवन को दुर्लभ, क्यों भोगन विलमाया जी
अमृत से पैरों को धोकर, कुछ भी नहिं शरमायाजी ॥८॥
आतम अनुभव करके ज्ञानी, जप तप ध्यान लगायाजी
करम डोर कट जाय सहज ही 'नानू' शिवमग पायाजी॥९॥

भजन नं० १८

राग—सारङ्ग

सुख चाहे तो विषय कषायां त्याग रे ज्ञानी जियो कूच
का नक्कारा पाछै वाजसी । टेक

क्रोध सूं तो आत्मा हिल जायरे ज्ञानी जिया
मारतां मरतां भी प्रानी नहीं डरै ॥ १ ॥
अभिमानी कै पास कोऊ नहिं जाय रे ज्ञानी जिया
विनयवान की सबका सब रक्षा करै ॥ २ ॥
कपटी को कोइ नहीं करे विश्वास रे ज्ञानी जिया
बोलै कांई चालै कांई सूगलो ॥ ३ ॥
लोभ पाप को बाप कह्यो संसार में ज्ञानी जिया
सांप का चोला में जाकर जनमसी ॥ ४ ॥
हाथी मछली मच्छर भौंरा हरिण रे ज्ञानी जिया
एक एक विषयां ने सेयां मर गया ॥ ५ ॥
ज्ञान ध्यान सब 'नानू' यो ही जान रे ज्ञानी जिया
विषय कषायां छोड्यां कारज चालसी ॥ ६ ॥

भजन नं० १६

राग—मांड

सुन ज्ञानी प्राणी चेतै क्यों न अवसर बीत्यो जाय । टेक ।
यह संसार स्वप्नवत जानो या में कुछ नहिं सार।
वक्त गया फिर हाथ न आवे ज्यों अंजुली की धार ॥ १ ॥

बालपने अज्ञान पने में, बीता समय अपार।
खेल कूद में हंसते रोते कुछ नहिं किया विचार ॥ २ ॥
यौवन में नारी सङ्ग रमकर, भूला आतम ज्ञान।
धन दौलत में आपा मान्या, जो पापों की खान ॥ ३ ॥
वृद्ध समय में जर्जर तन से, बनता कुछ नहिं काम।
तृष्णा के वश में पड़ करके, ले न भुप्र का नाम ॥ ४ ॥
मोह शत्रु इक जीत करके, राग द्वेष दो त्याग।
तीन गुप्ति को धारण करके, चार कषाय से भाग ॥ ५ ॥
पञ्च पाप को त्याग करके, षट् कर्मों को धार
सातों व्यसन महा दुखदाई, आठ मदों को हार ॥ ६ ॥
नवधा भक्ति दस लक्षण को, आतम हिरदे ठान।
ग्यारह प्रतिमा द्वादश अनुप्रेक्षा, चित्त अपने आन ॥७॥
तेरह चरित चौदह गुणठानों, पंद्रह प्रमद बखान
सोलह कारण सत्रह नेम व्रत, दोष अठारह जान ॥ ८ ॥
इह विधि आतम शुद्धि करके, कर अपना कल्याण।
धर्म शुक्ल सीढी चढ 'नानू' पावे मोक्ष निधान ॥ ९ ॥

भजन नं० २०

तर्ज—काया का पींजरा डोले

है यह संसार असारा, भव सागर ऊंडी धारा। टेक।

इस भंवर में जो कोई रमता, वो लहै न क्षण भर समता

नहिं बुझे प्यास जल खारा ॥ १ ॥

चारों गति दुख महाना, सत्गुरुजन खूब बखाना

नहिं चेतै मूढ गंवारा ॥ २ ॥

मन चिन्ता स्वर्ग में भारी, पशु गति अज्ञान भयकारी

नारक दुख अपरम्पारा ॥ ३ ॥

अनुपम नर देही पाई, सच्ची तुम करो कमाई

क्यों डूबो वापिस प्यारा ॥ ४ ॥

सम्यक्त्व महासुखकारी, अपनाते शिवमगचारी

या बिन नरभव धिक्कारा ॥ ५ ॥

पुनि संयम को अपनाओ, जप तप में ध्यान लगाओ

यों उतरो परली पारा ॥ ६ ॥

'नानू' अनुभव चित लाओ, कर्मों को शीघ्र जलाओ

फिर बजे कूच नक्कारा ॥ ७ ॥

भजन नं० २१

तर्ज—काया का पींजरा डोले

मन मूरख है दीवाना, भटकै फिरता हैराना । टेक ।

मन चञ्चल पंछी जानो, दो चपल पक्षयुत मानो

इन राग द्वेष बखाना ॥ १ ॥

सब इन्द्रिय इस वश रहतीं, निशिदिन इसके संग बहतीं

प्राणी दुख भोगे नाना ॥ २ ॥

मन खाने को ललचावे, मन भोगों में बिलमावे

लिपटे तब कर्म महाना ॥ ३ ॥

यह मन इन्द्रिय का राजा, इस जीते लश्कर भाजा

तब हो आतम कल्याणा ॥ ४ ॥

'नानू' तुम ध्यान लगाओ, मन रोके तें सुख पाओ

तब मिले अमर पद थाना ॥ ५ ॥

भजन नं० २२

राग—मांड

चेत २ रे चेत सयाने, अवसर बीता जाता है । टेक ।

सादि अनादि निगोद दोय में, काल अनन्त गमाता है

जन्म मरण नव दुगुन श्वास में कष्ट महा तू पाता है ॥१॥

काल लब्धि पाकर के फिर तू स्थावर तन में आता है

काल असंख्य पूर्ण कर २ के, विकल-त्रय में जाता है॥२॥

पशु पंचेन्द्रिय तन धर २ के, निशिदिन भार वहाता है

अति संक्लेश भाव पुनि तुमको नर्कों में भरमाता है ॥३॥

नर भव चिन्तामणि पाकर के सम्यक् नहीं लहाता है
पुण्य कर्म से स्वर्ग पहुँच कर मरण समय बिललाता है॥४॥
सुथल सुकुल मानुष भव लहि कर भोगों में बिलमाता है
अमृत से पैरों को धोकर, टुक भी नहिं शरमाता है ॥५॥
ध्यान अग्नि से अष्ट कर्म रिपु, क्यों नहिं शीघ्र जलाता है
'नानू' अवसर अबके चूके, सागर मणी डुबाता है ॥ ६ ॥

भजन नं० २३

राग—देश (उड़ी हवा में जाती है, गाती चिड़िया यह राग)

अरहन्त सिद्ध तू बोल, तेरा क्या लगेगा मोल
बोल २ तू बोल बोल, यह समय चला अन्मोल । टेक ।
आठ पहर की साठ जो घड़ियां, मेल तराजू तोल
लेखा करके देखो प्यारे, दिल की घुंडी खोल ॥ १ ॥
अर्ध समय सोने में खोता, अर्ध में केलि कलोल
खाता पीता हँसता रोता, करता टालम टोल ॥ २ ॥
विषय काज क्यों व्यर्थ गमावे, मनुष जनम अन्मोल
हाथी चढ कर ईंधन ढोता, निकल जायगी पोल ॥ ३ ॥
मोत का डंका बाजेगा, तब पूरा होगा कोल

ठाठ पड़ा रह जावेगा, फिर कौन बजावे ढोल ॥ ४ ॥
नाती तो स्वारथ के साथी, चाहै सुख का झोल
तन धन भोग संयोग स्वप्नमय, कल्पित और कपोल ॥५॥
जप तप संजम शील दान अरु, दया का घोलो घोल
सम्यक दर्शन ज्ञान चरण का धर ले चेतन चोल ॥ ६ ॥
गई गई अब राख रही, तज दे तू खेल मखोल
धर्म शुक्ल सीढी चढ 'नानू' पावे शिव अनमोल ॥ ७ ॥

भजन नं० २४

राग मांढ (पीर २ क्या करता रे तेरी पीर न जाने कोय)

—अछूत कन्या

चेत चेत रे चेत किया तैं क्या नरभव पाके
बार २ सिख देत श्री गुरु तुझको समझाके। टेक।

मात तात रज वीरज द्वारे
तेरी नींव लगी मेरे प्यारे
बीते जब नव मास
गिरा तब पृथ्वी पर आके ॥१॥

बालापन लड़कन सङ्ग खोया
कबहुं हँसा कबहुं तू रोया

समय अमोलक खोय दिया
खेलन में मन लाके ॥ २ ॥

तरुण समय नारी संग मोया
माया अरु काया को ढोया
उदय अस्त कछु नहिं जोया
विषयेन में चित लाके ॥ ३ ॥

जरा अवस्था ज्यों ज्यों आई
रोग शोक की फौजें लाई
ज्ञान ध्यान सब भूल गये
तृष्णा के वश आके ॥ ४ ॥

तीनों पन तो यों ही खोये
विषय कषायों को नहिं धोये
नरभव रतन अमोलक खोया
काग उड़ा करके ॥ ५ ॥

आन अचानक जम दाबेगा
कौन सहायक तट धावेगा
पोट पाप की सङ्ग चलेगी
आतम राजा के ॥ ६ ॥

गई गई अब राग मयाने
आतम अनुभव हिरदे आने
विनती करता 'नानू' यह
शिव मारग बतलाके ॥ ७ ॥

भजन नं० २५.

—मांढ (पीर पीर क्या करता रे तेरी पीर न जाने कोय)

तीन भुवन में नामी स्वामी शीघ्र उतारो पार
तुम भवमोचन नाग सुलोचन करो मेरा निस्तार । टेक ।
चहुं गति जनम मरण में कीन्हा
आपा पर का भेद न चिन्हा
शरण तुम्हारी आया, दुख मम दूर करो भर्तार ॥ १ ॥
आन देव में पूजन धाया
किंचित् सुख भी नाहीं पाया
विषय कषायों में ही लुभाया, भया बहुत में ख्वार ॥२॥
मेरी पड़ी मझधार में नैय्या
तुम बिन नाहीं कोई खिवैय्या
रैन अंधेरी पार लगाओ, तम हो जगदाधार ॥ ३ ॥

नाती तो स्वारथ के गाहक
मैं उनके सङ्ग रमता नाहक
मोह कर्म का नाश करो तो, बेड़ा होवे पार ॥ ४ ॥
अब मैं ऐसी शक्ति पाऊँ
चार घातिया कर्म नशाऊँ
सम्यक्‌दर्शन ज्ञान चरन से जाऊँ मुक्ति द्वार ॥ ५ ॥
केवल ज्ञान प्रकट हो जावे
चेतन चेतन में रम जावे
दर्पणवत सब आभलके, पाऊँ निज आतम सार ॥ ६ ॥
नित्य निरंजन पद मैं पाऊँ
इस जग बीच कभी नहिं आऊँ
जन्म जरा मृत रोग दूर हो, 'नानू' करे पुकार ॥ ७ ॥

भजन नं० २६

राग—(मैं बन की चिड़िया बन के बन बन बोलूं रे)

तीन लोक में नामी अन्तरयामी जी
संकट दूर करो तुम मेरे स्वामी जी । टेक ।
मैं निगोद में दुख पाये, बहु जामन मरन कराये
अङ्क अनन्ते भाग ज्ञान तहां लहा बहुत दुख, सहा हो

मेरे स्वामी जी ॥ १ ॥

पुनि स्थावर तन में सटका, खा पी जीवों ने पटका
भू जल ज्वलन पवन प्रत्येक तरु असंख्यातवें भाग ज्ञान
मेरे स्वामी जी ॥ २ ॥

फिर विकलत्रय में आया, तहां ज्ञान कछू नहिं पाया
लट पिपील अलि आदि जन्म धर धर के, दर दर भटका
मेरे स्वामी जी ॥ ३ ॥

पशु पंचेन्द्रिय तन पाया, निशिदिन में भार वहाया
अति संक्लेश भाव धारण कर मरा नरक में परा हो
मेरे स्वामी जी ॥ ४ ॥

तहां घोर वेदना पाई, कछु वर्णन कियो न जाई
छेदन भेदन मारन ताडन भूख प्यास अरु शीत घाम
मेरे स्वामी जी ॥ ५ ॥

बहु सागर तहां दुख पाया, विधि योग मनुज गति थाया
गर्भ जन्म शिशु तरुण वृद्ध दुःख सहा न सम्यक् लहा हो
मेरे स्वामी जी ॥ ६ ॥

कछु पुण्य उदय जब आया, कर्मों ने स्वर्ग पठाया
विषय आश मन त्रास लही तहां मरण समय बिललाया
मेरे स्वामी जी ॥ ७ ॥

दुर्लभ नरभव ऐसा है, याको सुरपति चाहता है
चिन्तामणि ज्यों रतन अमोलक पाया, शरणैं आया
मेरे स्वामी जी ॥ ८ ॥

इक विनती मेरी गहिये, मम अष्ट कर्म सब दहिये
'नानूलाल' अधम सेवक को भव दधि पार उतारो
मेरे स्वामी जी ॥ ९ ॥

भजन नं० २७

चेतो जी चेतन नरभव जावे फेर नहीं पावो जी । टेक ।
काल अनन्त भयो जग भ्रम तें, अब संयम अपनाओ
स्वर्ग नरक पशु गति में नांही, आलस दूर भगावोजी
अमृत पाय पांव क्यों धोता 'नानू' शिव किन आवोजी

भजन नं० २८

भजन करो तुम ज्ञानी प्रानी । टेक ।
मोक्ष के कारन दोष निवारण वेद पुराण बखानी ।
भोग व्यसन में दिन मत खोवे, यह दुर्गति अगवानी ।
घड़ी घड़ी पल पल बीतत आयु ज्यों अंजुलि का पानी ।
नारी सुत मित प्यारे बन्धु, करें धर्म में हानी ।

स्वारथ के वश तुमसे रमते बात नहीं कछु छानी ।
स्वप्न समान जगत की रचना सर्व वस्तु है फानी ।
भजन सम नहीं काज दूजो दृढ निश्चय मन आनी ।
विषय कषाय त्याग धर धीरज श्रवण करो जिनवानी ।
तनसे मनसे धनसे वचन से हो सबको सुखदानी ।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण तप, जीव दया व्रत ठानी ।
पर को त्याग लाग शुभ मारग तज दे तू मन मानी ।
आन अचानक कंठ दवेंगे, चण में जाय पलानी ।
निशिदिन भजन करो तुम 'नानू' मुक्तिपुरी की निशानी ।

भजन नं० २९

बैठे छै तो सत्संगति में बैठ रे, खोटी सङ्गत बैठ्यां कालो
लागसी । टेक ।

पारस परस्यां लोह सुवर्ण बन जायरे
चन्दन बन में नीम सरस हो जायसी ॥ १ ॥

दुर्जन सङ्गत अति दुखदाई जानरे,
तीन तरह का दुष्ट जगत में होय है ॥ २ ॥

निज स्वारथ सों काज विगारे गैर को
प्रथम दुष्ट तू चित में अपने धार ले ॥ ३ ॥

बिन स्वारथ भी पर को काज बिगार दे

महा दुष्ट यह द्वितीय तरह का जान ले ॥४॥

अधमाधम की रीति कटुक अति होय रे

निज अरु पर दोऊ का करे विनाश है ॥५॥

सत्संगति सों अवगुण सब मिट जाय रे

या बिन 'नानू' शिव मारग पावै नहीं ॥६॥

भजन नं० ३०

महावीर स्वामी महावीर स्वामी, घट घट के तुम अन्तर्यामी

दीन दयाल दया के सागर,

नित्य निरंजन जगत उजागर

हमको वेग उबारो स्वामी ॥ १ ॥

सत्य प्रकाशक भ्रम तम नाशक, तुम प्रभु तीन भुवनके शासक

ज्ञान की ज्योति जगावो ॥ २ ॥

समता मूरत आनन्द पूरत, कष्ट आपदा दशा में चूरत

जन्म मरण दुःख मेटो स्वामी ॥ ३ ॥

शिव सुख दीजे ढील न कीजे, 'नानू' की विनती सुन लीजे

अजर अमर पद दीजे स्वामी ॥ ४ ॥

भजन नं० ३१

नैना क्यों नहिं खोलै, गति २ डोलै रे अज्ञानी
चेतै क्यों नहिं ज्ञानी तू तो करता अपनी हानी । टेक ।

नर भव पाया, सुथल में जाया, सुकुल में आया
सुनाकर जिनवानी, तजदे तू आनाकानी, तेरी मति भई
बोरानी ॥ १ ॥

विषयों से भाग, कषायों को त्याग, शुभ पथ लाग
चली यह जिंदगानी, ज्यों अंजुलि झरता पानी
तू करता है क्यों मनमानी ॥ २ ॥

संयम धार, काम को मार, अनुभव सार
जगत में सब जानी, तू बनजा ज्ञानी ध्यानी
'नानू' उत्तम सीख सयानी ॥ ३ ॥

भजन नं० ३२

पायो मैंने दरस तिहारोजी, अब दुख मेटो म्हारोजी ।टेक।
तुम प्रभुजी करुणा के सागर, करो मेरो निस्तारोजी॥१॥
आनपड़ो तुमरे चरणन में, बांह पकर के उबारो जी ॥२॥
कहूं कहां तक तुमरी महिमा,तुम हो जग उजियारोजी॥३॥
'नानू' की अरदास यही है, राग द्वेष मम टारोजी ॥४॥

भजन नं० ३३

मोय तारो श्री भगवान आया शरण
मोय दीजे यह वरदान, हां हां प्रभुजी दीजे यह वरदान
रहूं तेरी शरण हरदम । टेक ।

तुम अधम उधारण हो, भवजल तारन हो
अजर अमर अमलान ॥ १ ॥

तुम विघ्न विदारण हो, मङ्गल सुख कारण हो
हो नित निर्मल निर्मान ॥ २ ॥

तुम जगत विनायक हो, शिव सुख दायक हो
मुझे दीजे अमर पद थान ॥ ३ ॥

इत उत धाया मैं, भेद न पाया मैं
करो 'नानू' का अब कल्यान ॥ ४ ॥

भजन नं० ३४

नरभव खोदिया रे, मूरख कुछ नहिं करी कमाई । टेक ।
पुण्य कर्म से मूढ तू, पाई मिनखा देह ।
विषय भोग में रमकर मूरख, किया न प्रभु से नेह ॥१॥
लख चौरासी भटकत २ आयो अवसर आज

भावें वापिस हुव जा तू भावें वना ले काज ॥ २ ॥
वार २ गुरुजी कहते हैं, तू सुनता नहिं यार
मनुष जन्म की सौज वावरे, मिले न दूजी वार ॥ ३ ॥
काम क्रोध मद मोह ईर्षा तज दे इनका सङ्ग
इनकी सङ्गत रहते तेरा होगया रङ्ग बदरङ्ग ॥ ४ ॥
जप तप संयम शील को अपने हिरदै ठान
काल अचानक स्रायगा तब होगा शीघ्र प्रयान ॥ ५ ॥
आतम अनुभव परमसुख, आतम अनुभव ज्ञान
या बिन कर्म कटै नहिं पच पच मरो सुजान ॥ ६ ॥
सुरपति हरदम चाह करत है, पाऊँ कब नर जामा
'नानू' तुमको ध्यान नहीं है,भज अब जिनवर नामा॥७॥

भजन नं० ३५

श्री सूर्य सिन्धु आचार्य की सब मिल कर जय २ बोलो
सब मिलकर जय २ बोलो महिमा गाके अब भोलो।
वे पञ्च महाव्रत पालैं, वे पांचों समिति संभालै
वे तीन गुप्ति मय चालैं, सब मिलकर जय २ बोलो ॥१॥
वे तीन रतन के धारी, दृग ज्ञान चरण अधिकारी
वे शान्ति मूर्ति अविकारी, सब मिलकर जय२ बोलो॥२॥

पंचेन्द्रिय मन वश कीने, वे समता रस में भीने
जप तप संयम चित दीने, सब मिलकर जय२ बोलो ॥३॥
मद लोभ क्रोध छल त्यागे, दस लक्षण में अनुरागे
वे सदा आतमरस जागे, सब मिलकर जय २ बोलो ॥४॥
बाईस परीषह सहते, द्वादश तप में नित बहते
निज निजानन्द मय रहते, सब मिलकर जय२ बोलो॥५॥
यह पाप विषय दुखकारी, त्यागो कषाय नरनारी
यह शिक्षा देते भारी, सब मिलकर जय २ बोलो ॥ ६ ॥
सब जीवन निज सम जाने, सुख दुख एकसे माने
आतम अनुभव पहचाने, सब मिलकर जय २ बोलो ॥७॥
'नानू' अब शरणे आया, इन कर्मन बहुत सताया
तुम चरण कमल शिर नाया सब मिलकर जय२ बोलो॥८॥

भजन नं० ३६

प्रभु मेरी विनती मान २
चरणों का दास मुझको जान २ । टेक ।
तूने बहु अधम उधारे, अंजन आदिक भी तारे
गणधर भी कहते हारे सब वेद ग्रन्थ करें गान २ ॥१॥
तेरो रूप अचल अविनाशी, शिवरूपी स्वयं प्रकाशी

तू है शिवपुर का वासी मुनिवर करते तेरा ध्यान २ ॥२॥
तुम सम नहिं दाता दानी, क्या सुर नर क्या बहु ज्ञानी
यह निश्चय मैंने ठानी, दे भक्ति का मुझको दान २ ॥३॥
'नानू' तुम शरणे आया, इन कर्मन बहुत सताया
तुम चरण कमल शिरनाया मुझको दे केवल ज्ञान २ ॥४॥

कठिन शब्दों के अर्थ

भजन नं० १

अघ—पाप, घृणित कृत्य, कुकर्म। विश्वप्रेम—समग्र जीव धारियों के प्रति निःस्वार्थ प्रेम। रीति—मार्ग। घुण्डी—कुटिलता मनुज—मनुष्य। नन्तशक्ति—अनन्तशक्ति—यहां छन्दोभंग के कारण 'अ' उड़ा दिया गया है। पञ्च पाप—हिंसा, झूंठ, चोरी, कुशील और परिग्रह। विषय—स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण इन पांच इन्द्रियों के २७ विषय। कषाय—आत्मा को दुख देने वाली क्रोध, मान, माया और लोभ नामक चित्त वृत्तियां।

भजन नं० २

भोग—खाना पीना आदि संसार के सुख। व्यसन—बुरी आदतें जैसे जुआ खेलना आदि। सम्यक्दर्शन—स्वपर विवेक। ज्ञान—सम्यक्ज्ञान—संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय रहित जीवादि पदार्थों को जानना। चरण—सम्यक्चारित्र-अपने आप में लवलीन रहना। तप—इच्छाओं का निरोध करना। फानी—नाशवान। निशि—रात्रि।

भजन नं० ३

लिपटानी—चिपटना। मधु—शहद। अघानी—समाप्त होना कृपाण—तलवार।

भजन नं० ४

पाग रे—लवलीन होना। पानी झाग—पानी का झाग जैसे

वाणी से भी होता है।

संयम—संयम के दो भेद हैं प्राणिसंयम और इन्द्रिय संयम। पंचेन्द्रिय और मन को वश में करना इन्द्रिय संयम एवं स्थावर और त्रस जीवों की दया पालना प्राणिसंयम है। संयम शब्द का अर्थ अपनी प्रवृत्तियों को स्वाधीन रखना है।

भजन नं० ६–१०

इन्द्र—देवताओं का राजा। नरेन्द्र—चक्रवर्ती। फणीन्द्र नागराज, नागकुमार देवताओं का राजा। जलचर—मछली मगर वगैरह। वनचर—हरिन,शेर,चीता आदि। भूचर—मनुष्य, पशु आदि। नभचर—उड़ने वाले पक्षी।

भजन नं० १२

भोग—पंचेन्द्रियों के विषय। भुजङ्ग—सर्प। विषधर—सर्प। झष—मछली। दारुण—कठोर। भुजग—सर्प। वारण—हाथी। गरत—गड्ढा। गश—बेहोशी। कशिश—आकर्षण। खरा-खड़ा

भजन नं० १३

पोरी—दरवाजा। अपावनी—अपवित्र। इक्षू—गन्ना।

भजन नं० १४

चोल—चोला, कुर्ता। कृपाण—तलवार।

भजन नं० १५

सम्यक् चौसर-सम्यक्दर्शन रूपी चौंपड़। शिवगौरी-मुक्ति रूपी स्त्री। राग द्वेष—ये प्राणी की दो वृत्तियां हैं इन दोनों से ही जीव बंधता है। राग का मतलब है पर पदार्थों से प्रेम करना। राग के दो भेद हैं शुभ और अशुभ। कल्याणकारी पदार्थों में अनुराग रखना शुभ राग और शरीर, धन,गृह, कुटुम्बादि से प्रेम करना अशुभ राग है। द्वेष वैर को कहते हैं। राग दशवें गुणस्थान तक और वैर नवमें गुणस्थान तक रहता है।

समदृष्टी—सबमें समान दृष्टि रखने वाला अर्थात सम्यक दृष्टि। सम्यक्दृष्टि पदार्थों में इष्ट अनिष्ट की कल्पना नहीं करता किन्तु उनको ज्ञेय रूप से जानता है।

भेदज्ञान—आत्मा और जड़ को भिन्न भिन्न समझना। छैंनी नश्तर।

भजन नं० १७

सादि अनादि निगोद—निगोद (निगोत) अत्यन्त सूक्ष्म जीवों को कहते हैं। ये न किसी से रुकते हैं और न किसी को रोकते हैं। इन जीवों के सिर्फ एक ही स्पर्शन इन्द्रिय होती है। जैन सिद्धान्त में इनका साधारण वनस्पति नाम है। इनके दो भेद हैं एक अनादि यानी नित्यनिगोद और दूसरा सादि अर्थात् इतर निगोद। नित्यनिगोद उन जीवों को कहते हैं जिन्होंने निगोद के सिवाय अभी तक और कोई भी पर्याय नहीं पाई हो।

सादि निगोद वे जीव कहलाते हैं जिन्होंने निगोद के सिवाय दूसरी पर्याय पाकर फिर निगोद पर्याय धारण की हो।

एक श्वास में अठारह बार—इन जीवों की एक श्वास में अठारह बार मृत्यु और अठारह बार ही जन्म होता है।

भू—पृथ्वी कायिक जीव। काल लब्धि—निगोद पर्याय छोड़ कर दूसरी पर्यायों का प्राप्त करने का समय। ज्वलन—अग्नि कायिक जीव। चिन्तामणि—एक प्रकार का रत्न जो विचारते ही सब कुछ दे देता है।

त्रस—द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीव।

बहु सागर—बहुत से सागर। जैन सिद्धान्त की एक पारिभाषिक माप अर्थात् असंख्य वर्षों का समूह।

माला जब मुरझाय गई—देवताओं के गले की माला जो मृत्यु के ६ महिने पहिले मुरझा जाती है और जिसके मुरझाते ही उन्हें यह मालूम हो जाता है कि अब वे ६ महिने बाद जरूर मर जावेंगे। अमृत—एक प्रकार का रस जो केवल स्वर्ग में मिलता है और जो देवों के कण्ठों में स्वयं उत्पन्न होता है। देवताओं का यही भोजन है और बड़ा दुर्लभ है।

ध्यान—अन्य विषयों से हटाकर मन का किसी एक विषय पर एकाग्र हो जाना। इसके चार भेद हैं—आर्त्त, रौद्र, धर्म्य और शुक्ल अथवा पिण्डस्थ, पदस्थ, रूपस्थ और रूपातीत ये ध्यान के चार भेद हैं। पर ये चारों भेद धर्म्य ध्यान में आजाते हैं।

भजन नं० १६

सांप का चोला—सर्प का शरीर।

भजन नं० २०

तीन गुप्ति—गुप्ति वश में करने को कहते हैं। इसके तीन भेद हैं मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति।

चार कषाय—क्रोध मान माया लोभ। पांच पाप—हिंसा झूंठ, चोरी, कुशील और परिग्रह। षट् कर्म—देवपूजा, गुरुसेवा, स्वाध्याय, संयम, तप और दान। कर्म का अर्थ है प्रतिदिन करने योग्य क्रिया।

सातों व्यसन—जूआ खेलना, मांस खाना, शराब पीना, वेश्या सेवन करना, शिकार खेलना, चोरी करना और परस्त्री गमन करना।

आठ मद—मद अभिमान करने को कहते हैं-ज्ञान मद, प्रतिष्ठा मद (इज्जत का मद), कुल मद (पितृ वंश का मद), जाति मद (मातृ वंश का मद), बलमद (शक्ति मद), ऋद्धिमद (आत्मा की विशेष शक्तियों के प्रकट हो जाने का अभिमान), तपोमद और शरीर मद। नवधा भक्ति—मुनियों के आहार के समय आवश्यक ९ प्रकार की भक्ति—पड़गाहना, ऊंचे आसन पर विठाना, पैर धोना, पूजन करना, प्रणाम करना, मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि और आहार शुद्धि। दश धर्म—उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, तप, त्याग, संयम, आकिंचन्य

और ब्रह्मचर्य। ग्यारह प्रतिमा—श्रावकों के ११ दरजे होते हैं उन्हे ग्यारह प्रतिमा कहते हैं। श्रावक क्रम क्रम से चढता हुआ एक से दूसरी, दूसरी से तीसरी इसी तरह ग्यारहवीं प्रतिमा तक चढता है। दर्शनप्रतिमा, व्रतप्रतिमा, सामायिकप्रतिमा, प्रोपध प्रतिमा, सचित्त त्यागप्रतिमा रात्रिभोजनत्याग प्रतिमा, ब्रह्मचर्य प्रतिमा, आरम्भत्यागप्रतिमा परिग्रहत्यागप्रतिमा, अनुमतित्याग प्रतिमा और उद्दिष्टत्यागप्रतिमा।

बारह अनुप्रेक्षा—बार बार चितवन करने को अनुप्रेक्षा कहते हैं। अनित्य, अशरण, संसार. एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधि दुर्लभ और धर्म ये १२ अनुप्रेक्षा हैं। इनको बारह भावना भी कहते हैं।

तेरह चरित्र—५ महाव्रत ५ समिति और ३ गुप्ति इस प्रकार तेरह प्रकार के चरित्र कहे गये हैं।

चौदह गुणस्थान—गुणस्थान का अर्थ भावों की श्रेणी है। इन श्रेणियों को पार करता हुआ आत्मा परमात्मा बन जाता है। ये चौदह हैं—मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, अविरत, देशविरत प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म-सांपराय, उपशांतमोह, क्षीणमोह, सयोगकेवली और अयोग-केवली।

पन्द्रह प्रमाद—४ विकथा ४ कषाय ५ इन्द्रिय, निद्रा और स्नेह इस प्रकार १५ प्रमाद होते हैं। स्वरूप की असावधानता को प्रमाद कहते हैं।

१६ भावना—भावना अभ्यास को कहते हैं। इनका बार बार विचार कर जीवन में उतारने की चेष्टा की जाती है। इनके नाम ये हैं—दर्शन विशुद्धि, विनय सम्पन्नता, शीलव्रतेषु अनतिचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, संवेग, शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप, साधु समाधि, वैयावृत्तिकरण, अर्हद्भक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचनभक्ति, आवश्यकापरिहाणि, मार्गप्रभावना और प्रवचनवत्सलत्व।

१७ नियम—१ भोजन २, षट्रस, ३ पीने की चीज, ४ कुंकुमादि विलेपन ५ फूलों का पहनना सूंघना आदि, ६ तांबूल पानसुपारी आदि, ७ गीत लौकिक गान नाटक आदि, ८ नृत्य (लौकिक नृत्य आदि) ९ ब्रह्मचर्य—कामसेवन त्याग १० स्नान ११ वस्त्र १२ आभूषण १३ वाहन—हाथी घोड़ा बैल आदि १४ शयन—शय्यादि १५ आसन—चौकी, कुरसी फर्श आदि १६ सचित्त (सचित्त वस्तुओं के खाने का प्रमाण करना १७ वस्तु संख्या अर्थात् अन्य पदार्थों का परिमाण करना।

भजन नं० २२

दो चपल पक्ष—मन रूपी पक्षी के दो चंचल पांखे हैं जिनका नाम राग और द्वेष है।

लश्कर—फौज

भजन नं० २३

नवद्गुन—अठारह। स्थावरतन—पृथ्वी, अप, तेज, वायु

और वनस्पति कायिक जीवों का शरीर। विकलत्रय—द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीव। टुक—कुछ। अष्ट कर्म—ज्ञाना वरणीय, दर्शनवरणीय वेदनीय, मोहनीय आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय।

भजन नं० २४

भवमोचन—संसार को नष्ट करने वाला। ज्ञान सुलोचन ज्ञान रूपी अच्छी आंखें।

निस्तार—उद्धार। नाहक—व्यर्थ। चार घातिया—आत्मा के अनुजीवी गुणों के घातने वाले चार कर्म अर्थात् ज्ञानावरणीय दर्शनवरणीय, मोहनीय और अन्तराय।

भजन नं० २६

अन्तर्यामी—भीतर की बात जानने वाले।

अलि—भौंरा। पिपील—चिउंटी। भवदधि—संसार समुद्र

भजन नं० २६

कालो लागसी—धब्बा लग जायगा।

भजन नं० ३३

अधम उधारण—पतितों का उद्धार करने वाले। अम्लान नर्मल। जगत विनायक—संसार को शिक्षा देने वाले।

भजन नं० ३४

शील—ब्रह्मचर्य ।

भजन नं० ३५

सूर्य सिन्धु—दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के एक आचार्य जिनके पास कवि ने ब्रह्मचर्यव्रत की दीक्षा ली थी और जिन पर कवि की बहुत बड़ी भक्ति थी । ये जैनों के मुनि संघ के आचार्य हैं ।

भजन नं० ३६

अंजन—जैन पुराण का एक पात्र जिस चोर ने भगवान पर निश्शङ्क भाव से श्रद्धा करके तत्काल ही उद्धार पागया ।

मुद्रकः—
पं० भँवरलाल जैन न्यायतीर्थ
श्री वीर प्रेस, मणिहारों का रास्ता, जयपुर।

(प)

* ओ३म् *

हितैषी-गायन रत्नाकर

प्रथम भाग

भजन नं० १ स्तुति महावीर भगवान।

धन्य तुम महावीर भगवान, लिया पुण्य अवतार—
जगत का, करने को कल्याण ॥ टेक ॥

बिलबिलाहट करते पशुकुल को, देख दयामय प्राण।
परम अहिंसामय सुधर्म्म की, डालीनींव महान ॥धन्य० ॥१॥
ऊंच नीच के भेद भावका, बढ़ा देख परिमान।
सिखलायासबकोस्वाभाविक,समतातत्वप्रधान ॥धन्य० ॥२॥
मिला समवश्रित में सुरनरपशु, सबको सबसम्मान।
समता और उदारता का यह कैसा सुभगविधान ॥धन्य० ॥३॥
अन्धी श्रद्धा का ही जगमें, देख राज बलवान।
कहा न मानो बिना युक्तिके, कोई वचनप्रधान ॥ धन्यतुम० ॥४॥
जीव समर्थ स्वयं करता है, स्वतः भाग्यनिर्माण।
यों कह स्वावलम्ब स्वाश्रयका दियासुफलप्रदज्ञान ॥ धन्य० ॥५॥
इनही आदर्शों के सन्मुख, रहनेसे सुखखान।
भारतवासी एकसमय थे भाग्यवान गुनवान ॥धन्य तुम० ॥६॥

भजन नं० २ (लावनी)

तुम सुनो दीनके नाथ विनय इकमेरी, अब कृपा करो भगवान शरणमें तेरी ॥ टेक ॥ यह दास आपकी शरण चरण में आया, रखलीजे दीनकी लाज विश्वपतिराया। तुमनाम अनन्तअपार शास्त्र में गाया, गुणगावत गनधर आदि पार ना पाया ॥ मैं क्या वरनन करसकूं अल्पमति मेरी अब कृपा करो भगवान शरण में तेरी ॥१॥ तुम नेमीश्वर महाराज जगत के स्वामी, सच्चिदानंद सर्वज्ञ सकलजगनामी। मैं महामलिन मतिमन्द कुटिलखलकामी मोहि श्री जेनाथ अब शुद्ध ज्ञान अनुगामी दे३ मोको भक्तिवरदान करो मति देरी ॥ अब कृपा० ॥ २ ॥ इस जगमें जन्मत मरत महादुखपाया, लखचौरासीमें भ्रमन भ्रमत घबराया। कल्याननिधान जनजान करो अब दाया अति दुखित हुआ तब शरण आपकी आया ॥ काटो श्री पार्श यह कठिन कर्म की बेड़ी ॥ अब० ॥३॥ मैं किसे सुनाऊं व्यथा अपने मनकी, यहां अपना कोई नहीं आश करूंकिनकी। मैं कहांलगकरूं बखान दशा निजतन की, तुम सब जानत सर्वज्ञ पीर निजजन की ॥ अतिआरत हो फूलाये कहत प्रभु टेरी, अब कृपा करो भगवान शरण में तेरी ॥ ४ ॥

भजन नं० ३ (गुरु स्तुति)

मिलैं कब ऐसे गुरुज्ञानी ॥ टेक ॥

यश, अपयश, जीवन, मरण—जिन—सुख दुख, एकसमान।
मित्ररिपु इकसमलखै—ज्योंमंदिर त्योंस्मशान। एकसमगिनैं
लाभ हानी मिलैं कब ऐसे० ॥ १ ॥

कांचखंड, और रत्न, बराबर—ज्यों धन त्योंही धूल,
एक है दासी और रानी मिलैं कब ऐसे० ॥ २ ॥

ऊंच नीच नहीं लखैं किसीको, सब जियजिन को एक
दोष अठारह त्याग जिन्होंने गुण मन धरे अनेक।
है जिनकी सिद्धारथ बानी ॥ मिलैं कब ऐसे० ॥ ३ ॥

जगजीवन का हित करैं, अरु तारैं भवदधि पार—
ज्ञानजोति जगमगै जिन्होंकी—तिन्हें नमूं हरबार।
सुफल हो जासे जिंदगानी ॥ मिलैं कब ऐसे० ॥ ४ ॥

भजन नं० ४ (जिनवानी महिमा)

जगत में सांची जिनवानी ॥ टेक ॥

महावीर स्वामी ने, भाखी, जगतजीव, कल्याण,
गौतम गनधर ने, समझाकर, उदय किया रविज्ञान।
तिमिर मिथ्यात की कर हानी ॥ जगत में सांची० ॥ १ ॥

पापी, अव्रतापी, कुटिलनर संतापी, अतिचोर,
मिथ्याती,घाती, अधम, खल, हिंसक, हिये कठोर।
सुगतिलई बनकर श्रद्धानी ॥ जगत में सांची० ॥ २ ॥
सिंघ, बाघ, बानर, गज, शूकर कूकर, आदिक जीव,
भील, चोर, ठग, गनिका, जाने-कीनेपाप सदीव।
किया निजहित बनकर ज्ञानी ॥ जगत० ॥ ३ ॥
पुन्य-उदय जिसजीव का, सोईपढै, सुनै जिनबैन
तीनलोक की दिपै सम्पदा, खुलें ज्ञान के नैन,
इसी से जांनी उपठानी ॥ जगत में साची० ॥ ४ ॥

भजन नं० ५ (जिनवानी स्तुति)

दोहा—प्रगट वीरमुख से भई, गनधर किया प्रकाश।
हे माता जगदीश्वरी, करो हृदय ममवास ॥

छन्द पद्धडी।

किया अज्ञानतिमिर सब दूर—किया मिथ्यात सभी तुमचूर।
किया गुणज्ञान प्रकाश महान, विनय मनधार नमूं जिनवान ॥
लई जिनआन शरण तुम मात, किये तिन जीवों के दुखघात।
तुम्ही शिवमंदिरको सोपान विनय मनधार नमूं जिनवान ॥१॥
हुए वृषभादिजिनेश महेश—दिया जगजीवन को उपदेश।
किया खलपापिनका कल्यान विनय मनधार नमूं जिनवान।२।

चहे नरघाती हो विकराल, चहे मिथ्यामति हो चंडाल।
चहे विषलम्पट हो नादान, विनय मनधार नमूं जिनवान ॥३॥
चहे हो भील चहे ठग चोर—चहे गनिका अघकीने घोर।
दिया गुणज्ञान सभीकोदान विनय० ॥ ४ ॥
चहे गजघोटक सिंह सियाल—चहे शुकवानर शूकर व्याल।
चहे अज, महिषा, गर्दभ स्वान, विनय० ॥ ५ ॥
दिया उपदेश किये भवपार—किया भूमंडल माँहि विहार।
हरो मिथ्यात प्रकाशो ज्ञान। विनय मन० ॥ ६ ॥
किया फिर गौतम ने उपकार दिया उपदेश सुना संसार।
हुये बहुजीवन के दुखहीन। विनय मन० ॥ ७ ॥
भये श्रुतकेवलि-केवलि आदि—भये मुनिराज जयोजिन।
बादि रचे तिनग्रंथसुपंथ दिखान। विनय मन० ॥ ८ ॥
तुही जिनवानि तुही जिनग्रंथ, तुही जिनआगम है शिवपंथ।
तुही तम दूर करे अज्ञान, विनय मनधार नमूं० ॥ ९ ॥
भया मम मात मेरे मन शोक, भया अज्ञान दशा त्रिलोक।
किया जो मात तेरा अपमान—विनय० ॥ १० ॥
तुझे संदूकन में ली रोक—अलीगढ़ के दृढ़ ताले ठोक।
नमैं नित दूरखड़े अज्ञान—विनय० ॥ ११ ॥
नहीं दिन एकभी धूप दिखात—बड़े सुखचैन से दीमक खात।
विनय बतलावत याहि अज्ञान—विन० ॥ १२ ॥
लई मन मूर्खजनों ने धार, न होय किसी विधि तोयप्रचार।

न आगमभेद कोई लें जान—विनय० ॥ १३ ॥
लखी सब महिमा पञ्चमकाल, हुये पतिहीन फंसे भ्रमजाल।
पढ़ैं कोई शास्त्र न सुनियत कान विन० ॥ १४ ॥
किया तीर्थंकर आदि प्रचार-यह रक्खे मूंदके मूढ़ गंवार।
भला इनकेसम कौन अजान, विनय मन० ॥ १५ ॥
यदि तुम बैन न पढ़ै नरकोय, यदि परचार न तेरा होय।
तो कैसे हो फिर जग कल्यान, विनय मन धार० ॥ १६ ॥
न तुमबिन धर्म बढ़ै जगमांहि, फहरावै जैनपताका नाहि।
न हो उद्योत रवी शशि ज्ञान, विनय० ॥ १७ ॥
करो अब मात दया की दृष्टि, करो अब मात सुबुद्धि वृष्टि।
हरो सब जीवन का अज्ञान, विनय मन० ॥ १८ ॥
करो सब जीवन का उपकार, यह दो सब जन के मन में धार।
करें प्रचार बनें बुधवान विनय० ॥ १९ ॥
न होय प्रचार में तुमरे रोक, करैं सब सत्यविनयदें धोक।
सभीजगबीच प्रकाशै ज्ञान, विनय मन० ॥ २० ॥

घत्ता

जयजय जिनवानी, शिवसुखदानी, जगजिय प्रानीहितकरनी
दुष्ट उधारन, पापी तारन, कुमति कुमतियां की हरनी।
भील उधारे चोर उभारे, पशुनन को तारन तरनी।
पारकिये जगजीव अनन्ता, यों महिमा जोती बरनी॥ २१ ॥

भजन नं० ६ प्रार्थना।

भगवन समय हो ऐसा—जब प्रान तन से निकले।
तुम से ही लौ लगी हो, तुम नाम मन से निकले॥ टेक॥
सिद्धगिर के शिखर पर, तेरी ही, टोंक भीतर।
तुझ ध्यान हूं रहा धर, भक्ति दहन से निकले-भगवन०॥१॥
गुरुजी दरश दिखाते, उपदेश भी सुनाते,
आराधना कराते मीठे वचन से निकले भगवन० ॥ २ ॥
भूमीपै हो संथारा, लगता हो ध्यान थारा,
त्यागूं सभी आहारा, तुझनाम धुनसे निकले भगवन० ॥३॥
सम्मुख छवी तेरी हो—उसपर निगाह मेरी हो।
संसार से वरी हो. आत्मा चमन से निकले। भगवन० ॥४॥
भक्ती के तेरे नारे, चहुंओर जा उचारे।
जैनी कहे पुकारे, प्राणी मगन से निकले, भगवन० ॥५॥

भजन नं० ७ (गज़ल शान्तनाथ स्तुति)

शान्त प्रभू शान्तिता का स्वाद हम को दीजिये।
नष्ट करके कर्म सारे, पार खेवा कीजिये॥ टेक॥

भक्ती से ती शक्ती हमारी, हो प्रगट परमात्मा।
सुधरे भारत की दशा, होवें सभी धरमात्मा॥ शांति० ॥१॥

विद्या की हो उन्नति, और नाश हो अज्ञान का ।
प्रेम से पूरित हों सारे, ढूंढें पंथ कल्यान का ॥ शान्ति० ॥२॥
खोटे कुकर्मों से बचें, और तेरी भक्ति मन बसें ।
शान्ति पावें प्रानी सारे, दुःख सब के ही नशैं ॥ शान्ति० ॥३॥
सारी विद्याओं को सीखें, ज्ञानावरनी नाश कर ।
धर्म क्रिया नित्य करें पूजन सामायिक ध्यान धर ॥ शांति० ॥४॥
क्रोधी मानी माया, वो लोभी हम में से कोई न हो ।
सप्त विस्नों से बचें, और छोड़ देवें मोह को ॥ शान्ति० ॥५॥
कर्म आठों कारने में, मन लगा रहवे सदा ।
होवें सभी पुरुषार्थी उपकार में चित रह लगा ॥ शान्ति० ॥६॥
सत्संग अच्छे में रहें, और जैन मारग पर चलें ।
तेरे ही रहवें उपासक, सब कुकर्मों से टलें ॥ शान्ति० ॥७॥
जैनी जवाहरलाल की, विनती प्रभू स्वीकार हो ।
होवे सुधार समाज का, भारत का बेड़ा पार हो ॥ शांति० ॥८॥

भजन नं० ८ (अर्हन्त देव से प्रार्थना)

गज़ल

अर्हन्त देव तुम से, यह मेरी प्रार्थना है ।
जौहर अनादि से, जो मुझ में भरा हुआ है ॥

वो ढक रहा कर्म से, ज़ाहिर हो इल्तजा है ।
आदर्श जिंदगी हो, यह मेरी भावना है ॥ १ ॥
शक्ती हो मुझ में ऐसी, सब की मदद करूं मैं ।
सब की भलाई कारन, आगे कदम धरूं मैं ॥
ताकत हो मुझ में ऐसी, जैसी थी भीम अर्जुन ।
पालूं मैं शील ऐसा, ज्यों सेठ थे सुदर्शन ॥
मुहब्बत हो ऐसी पैदा, ज्यों राम अरु लक्ष्मण ।
स्थूल भद्र जैसा, राखूं मैं पवित्र मन ॥ २ ॥
वाहू बली सा मुझ में, बल और वीरता हो ।
गज सुखमाल के मुताबिक, हां ध्यान धीरता हो ॥
अभय कुमर जैसी, बुद्धि मेरी हो निर्मल ।
गुरु हेमचन्द्र जैसा, आलमवन् में आमिल ॥
सिद्ध सैन की तरह से, विद्या करूं मैं हांसिल ।
दुनियां के प्राणियों का, दुख मेट दूं मैं कामिल ॥३॥
हरिभद्र कालिकाचार्य्य, विश्नुकुमार स्वामी ।
रक्षा करूं धर्म्म की, ऐसे ही बन के हामी ॥
धन्ना वो शालिभद्र, जैसी हो अस्तक़ामत ।
खंदक मुनि वो अर्जुन, माली सी हो वो हिम्मत ॥
वस्तुपाल की तरह से, खर्चूं धर्म्म में दौलत ।
विजय वो विजिया जैसा, कायम रख मैं जतसत ॥४॥
रिद्धी हो भरत जैसी, वैराग भी हो पूरा ।

बनजाऊं केवना में, श्रीपाल जैसा सूरा ॥
खातिर वतन के ज़रदूं मैं भामाशाह जैसा ।
बहबूदी मुल्क की में हो सर्फ मेरा पैसा ॥
सेवक बनूं गुरु का, कुमारपाल जैसा ।
श्रेयांस की तरह से दूं दान मैं भी वैसा ॥ ५ ॥

गुरु आत्माराम मानिंद, चर्चाधर्म फैलादूं ।
रहकरके ब्रह्मचारी, अज्ञान को हटादूं ।
दिच्छा के वास्ते में, ऐलान कृष्ण सा दूं ।
गुण ग्रहण की भी आदत, इनकीसी में बनालूं ॥
खातिर वतन के अपना, सर्वस्व मैं लगादूं ।
ग़फलत की नींद से मैं, हरएक को जगादूं ॥ ६ ॥

दुनियां के प्राणियों को, रस्ता धर्म्म बताकर ।
सेवा करूं धर्म्म की, तन मन सभी लगाकर ॥
साबितकदम रहूं मैं गरचे कोई सतावे ।
खुश हो तमाम सहलूं, पेशानी खम न खाये ।
इस तन से सर जुदा हो, और जान तक भी जाये ।
लेकिन धर्मपै मेरे मुतलक हर्फ न आये ॥
खिदमत करूं मुलक की, और धर्म्म को बढ़ाऊं ।
जैनी धर्म्म का डंका चहुंओर में बजाऊं ॥ ७ ॥

भजन नं० ९ (गजल प्रार्थना)

सन्मति भवसागर के मांहि, नैय्या पार लघानेवाले ॥ टेक॥
आये पावापुर के बीच, मारे वैरी आठो नीच।
अपने धनुषध्यान को खींच, कर्म के झाड उड़ानेवाले ॥
सन्म० ॥ १ ॥
लेकर चक्रसुदर्शनज्ञान, करके मिथ्यामत का भान।
जितलाकर न्यामत परवान, मुक्ति की राह बतानेवाले ॥
सन्त० ॥ २ ॥

भजन नं० १० (लावनी देश)

तन मन सारेजी सांवरिया, तुमपर वारनाजी ॥ टेक ॥
बालापन में कमठनिवारो, अगनीजलता नाग उबारो।
वैरी करमन मारो तपबल धारनाजी तन मन० ॥ १ ॥
जीवाजीव द्रव्य बतलाये, सब जीवन के भरम मिटाये।
शिवमारग दरसाये, दुख पर हारनाजी तन मन सा० ॥ २ ॥
स्याद्वाद सतभंग सुनायो, नय प्रमान निश्चय करवायो।
झूठे मत किये खंडन सतको धारनाजी तन मन० ॥ ३ ॥
न्यामत जिन पारस गुन गावे, पुनिपुनि चरनन शीस निवावे।
वीतरागसर्वज्ञ तुही हितधारनाजी तन मन सारेजी० ॥ ४ ॥

भजन नं० ११ (दादरा थियेटर)

प्रभु लीजो खबरिया हमारीजी ॥ टेक ॥
मुझको कर्म डबोते हैं इस मोह जाल में, इससे बचाओ मुझको, करूं अर्ज हाल में करो पार नबरिया हमारीजी प्रभु०॥ १ ॥
निद्रा अनादि बीचपड़ा में ही तो सोताहूं, सुमरन नकी भक्ति तिहारी यों ही खोताहूं सु थलीजो मरवरिया हमारीजी प्रभु० ।२
तुम जगको त्याग जाय बसे, मुक्तद्वार में। दिखलाओ राह मुक्त कहूं बार २ में। रली मोक्ष डगरिया हमारीजी प्रभु० ॥ ३
मुझपर दया करो प्रभु होकर दयालतुम । सुकृत न हूं तुम्हारा दास, करो प्रतिपालतुम नहीं तुमबिन गुजरिया हमारीजी प्रभु लीजो० ॥ ४ ॥

भजन नं० १२ (दादरा थ्येटर)

चलोहूं जिनडगरिया तुम्हारीजी ।
मिले मुक्तिनगरिया हमारीजी ॥ टेक ॥

(शेर)

भटका फिरा मैं आन मगों में जगह जगह ।
भ्रमता रहा हूं नीचगतों में जगह जगह ॥
पाई अब मैं खबरिया तुम्हारीजी चलोहूं० ॥ १ ॥
भवदधि से पार आके हो सम्यक्त के घाटपर ।
डाले न आंख भूल कभी राजपाट पर ॥

पड़ी जिस पै नजरिया तुम्हारी जी चालो हूं जि०॥ २ ॥ बाजों की लागती है भयानक भनक मुझे, भाता नहीं है राग जगत् का तनक मुझे, सुन शासन वसरिया तुम्हारी जी। चालो हूंजि० ॥ ३ ॥ करमों की घास फेंकी प्रभू ने उखाड़ कर, वैराग्न की वढाई है खेती की वाढ़ कर, छाई करुणा बदरिया तुम्हारी जी। चालो हूं जी डगरिया० ॥४॥

१३

(दादरा थ्येटर)

लीजो २ खबरिया हमारी जी ॥ टेक ॥ धोखे में आगये हैं कुमतिया की चाल में, रक्खा है हम को बांध के कर्मों के जाल में, लीजो० ॥ १ ॥ बीता अनादिकाल हाल कह नहीं सक्के, जो दुख हमें दिये हैं वो अब सह नहीं सक्के, लीजो० ॥ २ ॥ तन धन का नाथ कुछ भी भरोसा मुझे नहीं, माता पिता भी कोई संगाती मेरे नहीं, लीजो० ॥३॥ सच है कहा संसार में कोई न किसी का, न्यामत को सिवा तेरे भरोसा न किसी का, लीजो० ॥४॥

१४

(प्रभु तार २ भव सिंधु०)

प्रभु तार तार भवसिंधु पार, संकट मंझार, तुम ही

अधार, दुकदो सहार, तारो तारो म्हारी नैय्या ॥टेक॥ परमाद चोर, किया हम पै जोर, भवसिंधु पोत, दियो मंझ में बोर, तुम सम न और तारन तर नैय्या । प्रभु तार तार० ॥ १ ॥ मोहि दंड२ दियो दुख प्रचंड, कर खंड २ चहु गति में भंड, तुम हो तरंड, काढ़ो काढ़ो गहि बहियां। प्रभु० ॥ २ ॥ हग सुखदास, तेरो उदास, मेरी काट फांस, हरो भव को वास, हम करत आस, तुम हो जग उधरैय्या । प्रभु० ॥ ३ ॥

१५

(दादरा थ्येटर)

अवार मोरे स्वामी भव दधि से कर मुझ को पार ॥टेक॥ चहुं गति में रुलता फिरा मोरे स्वामी, दुखड़े सहे हैं अपार अपार, मोरे स्वामी । भव दधि० ॥ १ ॥ मिथ्या अंधेरा, मगर मोह ने घेरा, कर्मों के विकट पहार, पहार मोरे स्वामी भवदधि से कर मुझ को पार ॥ २ ॥ सातों विषय क्रोध मद लोभ माया, आये लुटेरे हहार हहार मोरे स्वामी । भवदधि से० ॥ ३ ॥ सम्पति की बेड़ी भँवर में पड़ी है, वेगी से लेना उभार । उभार मेरे स्वामी भवद० ॥ ४ ॥

१६

(तर्ज—चाहे वोलो या न वोलो)

चाहे तारो या न तारो चरणों में आ पड़ा हूं ॥ टेक॥
तेरे दरश को मैं आया, मन में तुही समाया, अति दीन हो खड़ा हूं। चाहो त्यारो० ॥ १ ॥ सब जगत में फिर आया, शरना कहीं न पाया, तेरी शरन आ गिरा हूं। चाहे त्यारो० ॥ २ ॥ निज दास जान लीजे, शिव मग बताय दीजे, बन २ भटक फिरा हूं। चाहो त्यारो० ॥३॥

१७

(गज़ल)

लीजिये सुधि अय प्रभू जी, अब तो हमारी इन दिनों।
गरदिशे दुनियां से हैगी वेकरारी इन दिनों ॥ टेक॥
आठ अरि घेरे पड़े हैं कर दिया खाना खराब, बचने की सूरत नहीं इन से हमारी इन दिनों। लीजि० ॥ १ ॥ गुस्सागर हा वुराज लालच से नहीं मुझ को पनाह, हो गई बन बन के तबिअत की खराबी इन दिनों। लीजि० ॥ २ ॥ क्या करूं किससे कहूं, कहां बचके इन से जाऊं मैं, कोल्हू केसे बैल जैसी गति हमारी इन दिनों। लीजि० ॥ ३ ॥ तुम को बिन जाने दयानिधि चार गति भ्रमता

रहा, अब तो कदमों की शरण लीन्ही तुम्हारी इन दिनों। लीजि० ॥ ४ ॥ तुम गरीब निवाज हो, और मैं गरीबों का गरीब, जग उद्धारक की विरद जाहर है भारी इन दिनों। लीजि० ॥ ५ ॥ सख्त आफत में फंसा हूं अब मेरे मुश्किल कुशां, कर दो मुश्किल सख्त को आसान मेरी इन दिनों। लीजि० ॥ ६ ॥ अपनी महफिल आली का दीजे ज़रा रस्ता बता, मथुरा की ख्वाहिश बरारी होगी पूरी इन दिनों। लीजि० ॥ ७ ॥

१८

(कव्वाली)

आज जिनराज दर्शन से भयो आनंद भारी है ॥ टेक ॥
लहे ज्यों मोर घन गर्जे, सुनिधि पाये भिखारी है, तथा मो मोद की बातें, नहीं जाती उचारी है। आज० ॥ १ ॥ जगत् के देव सब देखे क्रोध भय लोभ भारी है, तुम्ही दोषावरन बिन हो कहा उपमा तिहारी है। आज० ॥ २ ॥ तुम्हारे दर्श बिन स्वामी, भई चहुं गति में ख्वारी है, तुम्ही पदकंज नमते ही मोहनो धूल झारी है। आज० ॥ ३ ॥ तुम्हारी भक्ति से भविजन, भये भवसिंधु पारी है, भक्ति मोहि दीजिये अविचल सदा याचक विहारी है। आज० ॥ ४ ॥

१९

(गज़ल)

मेरी नाव भवदधि में पड़ी कर पार अब सुन लीजिये, जग वन्धु वामानंद से अरदास अब सुन लीजिये ॥ टेक ॥ है झांझरी नैय्या मेरी मंझधार गोते खा रही, वसु कर्म वाम झकोरती, जगतार अब सुन लीजिये । मेरी नाव०॥ १ ॥ गति चार जलचर जहां बसैं मुख फाड़ फाड़ डरावते, तिन से बचाओ दीन पति इस बार अब सुन लीजिये । मेरी नाव० ॥ २ ॥ भव जल अथाही में मेरा तुम बिन नहीं है दूसरा, मेरी बांह को गहले प्रभु चितधार, अब सुन लीजिये । मेरी नाव० ॥ ३ ॥ सब कारज अब मेरे भये घट राम रत्न खुशाल है, दिन रैन जिनवर नाम का आधार, अब सुन लीजिये । मेरी नाव भवदधि में पड़ी० ॥ ४ ॥

२०

(ठुमरी झंझोटी)

नेम प्रभू की श्याम वरन छवि नयनन छाय रही, मणिमय तीन पीठ पर अम्बुजता पर अधर ठही ॥ टेक ॥ मार मार तपधार जार विधि केवल रिद्ध लई । चार

तीस अतिशय गुण नव दृग दोष नहीं ॥ नेम० ॥ १ ॥ जाहि सुरासुर नमत सतत मस्तक तें परस मही । सुरगुरु वर अम्बुजप्रफुलावन अद्भुत भान सही । नेम प्रभु० ॥२॥ धरि अनुराग विलोकत जाको, दुरित नशैं सब ही दौलत महिमा अतुल जा सकी कापैं जात कही नेम प्रभु० ॥४॥

२१

(गजल कव्वाली)

तुम्हारे दरश बिन स्वामी, मुझे नहीं चैन पड़ती है। छवी वैराग तेरी सामने आंखों के फिरती है ॥ टेक ॥ निराभूषण विगत दूषण पद्म आसन मधुर भाषन, नजर नैनों की नासा की अनी परसैं गुजरती है । तुम्हारे० ॥ १ ॥ नहीं कर्मों का डर हम को, कि जब लग ध्यान चरनन में, तेरे दर्शन से सुनते हैं कर्म रेखा बदलती है। तुम्हारे० ॥ २ ॥ मिले गर स्वर्ग की सम्पति अचम्भा कौन सा इस में, तुम्हें जो नयन भर देखें गति दुरगति की टलती है। तुम्हारे० ॥ ३ ॥ हजारों मूरतें हमने बहुत सी गौर कर देखीं, शान्ति सूरत तुम्हारी सी नहीं नजरों में चढती है। तुम्हारे० ॥ ४ ॥ जगत सिरताज हो जिनराज न्यामत को दरश दीजे, तुम्हारा क्या बिगड़ता है मेरी बिगड़ी सुधरती है। तुम्हारे० ॥ ५ ॥

२२

(चाल प्रभु तार २ भव०)

आईं इन्द्र नार कर कर सिंगार, ठाडीं समुद्र द्वार, शिव देवी माय चरनन मंझार मस्तक धरि दीनों ॥टेक॥ लखि भजोरीएम, सुत भयोरी नेम, तन आकृत यमचल मोर जेम, उर आर्त प्रमोद धर कर कर लीनो । आईं इन्द्र० ॥ १ ॥ दृग जोर जिन प्रभु मुख निहार, कर नमस्कार हर गोद धार, पुलकंत गात गज चढ़ दीनों । आईं इन्द्रनार० ॥ २ ॥ गिर शीशधार कर नट तवार, नाटिक त्रियार वलि वलि जुवार, ऐरावत पै भयो हरिय नवीनों । आई० ॥ ३ ॥

२३

(पार्शनाथ स्तुति)

भुजंग प्रयातछंद—नरेन्द्रं फनेन्द्रं सुरेन्द्रं अधीशं, शतेन्द्रं सुपूजे भजै नायशीशं, मुनेन्द्रं गनेन्द्रं नमै जोड़ हाथं नमों देव देवं सदा पार्श्वनाथं ॥ १ ॥ गजेन्द्रं मृगेन्द्रं गह्यौ तू छुड़ावै, महा आगतें नागतें तू बचावे, महावीर तें युद्ध में तू जितावे । महा रोग ते बंध ते तू खुलावे ॥२॥ दुखी दुख हर्त्ता सुखी सुख कर्त्ता, सदा सेवकों को

महानंद भरता, हरेयक्ष राक्षस भूतं पिशाचं, विषमडाकनी विघ्न के भय अवाचं ॥ ३ ॥ दरिद्रीन को द्रव्य के दान दीने, अपुत्री को तें भले पुत्र कीने, महा संकटों से निकाले विधाता । सबै संपदा सर्व को देहि दाता ॥४॥ महा चोर को वज्र को भय निवारैं, महा पौन के पुंजतें तू उवारे, महा क्रोध की आग को मेघ धारा । महा लोभ शैले सको वज्र भारा ॥ ५ ॥ महा मोह अंधेर को ज्ञान भानं, महा कर्म्म कान्तारकों दो प्रधानं, किये नाग नागिन अधो लोक स्वामी, हरो मान को तू दैत्य को हो अकामी ॥ ६ ॥ तुम्ही कल्पवृक्षं, तुम्ही कामधेनू तुम्ही द्रव्य चिन्तामणीनाग एनं, पशू नर्क के दुख संती छुड़ावे । महा स्वर्ग में मुक्ति में तू वसावे ॥ ७ ॥ करे लोह को हेम पाषाण नामी, रटै नाम सो क्यों न हो मोक्ष गामी, करें सेव ताकी करें देव सेवा । सुनै वैन सोही लहै ज्ञान भेवा ॥ ८ ॥ जपै जाप ताको नहीं पाप लागे, धरैं ध्यान ताके सबै दोष भाजैं, विना तोहि जाने धरे भव घनेरे, तिहारी कृपा से सरे काज मेरे ॥ ९ ॥ दोहा—गनधर इन्द्र न कर सके तुम विनती भगवान । द्यानत प्रीति निहार के, कीने आप समान ॥ १० ॥

२४

(संकट हरन वीनती)

हो दीन वंधु श्रीपती करुणानिधान जी, अव मेरी विथा क्यों न हरो वार क्या लगी ॥टेक॥ मालिक हो दो जिहान के जिनराज आप ही। एवो हुनर हमारा तुमसे छिपा नहीं। वेजान में गुनाह जो मुझ से वन गया सही, कंकरी के चोर को कटार मारिये नहीं। हो दीन ०॥१॥ दुख दर्द दिलका आपसे जिसने कहा सही। मुश्किल को हर वहर से लई है भुजा गही॥ सव वेद और पुरान में परमान है यही, आनंद कंद श्री जिनंद देव है तुही। हो दीन० ॥२॥ हाथी पै चढी जाती थी सुलोचना सती, गंगा में ग्राह ने गही गजराज की गती॥ उस वक्त में पुकार किया था तुम्हें सती, भय टारके उभार लिया हे कृपापती। हो दीन० ॥३॥ पावक प्रचंड कुन्ड में उमंड जव रहा, सीता से सत्य लेने को जव राम ने कहा, तुम ध्यान धार जानकी पग धारती तहां, तत्काल ही सरस्वच्छ हुआ कमल लहलहा। हो दीन० ॥४॥ जव चीर द्रोपदी का दुःश्शासन था गहा, सव ही सभा के लोग कहते थे अहा अहा, उस वक्त भीर पीर में तुमने करी सहा, परदा ढका सती का सो यश जगत में रहा। हो दीन० ॥५॥ सम्यक्त शुद्ध

शील व्रती चंदना सती, जिसके नजीक लगती थी जाहिर रती रती, बेड़ी में पड़ी थी तुम्हें जब ध्यावती हुती, तब वीर धीर ने हरी दुख दंद की गती. हो दीन० ॥६॥ श्री पाल को सागर विषें जब सेठ गिराया, उसकी रमना से रमने को आया वो बेहया, उस वक्त के संकट में सती तुम को जो ध्याया, दुख दंद फंद मेटके आनंद बढाया। हो दीन० ॥७॥ हरि खेन की माता जहां सौत सताया, रथ जैन का तेरा चले पीछे यों बताया, उसवक्त के अनशन में सती तुमको जो ध्याया, चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया। हो दीन० ॥८॥ जब अंजना सती को हुआ गर्भ उजारा, तब सासने कलंक लगा घर से निकारा, वन वर्ग के उपसर्ग में सती तुमको चितारा प्रभु भक्त व्यक्त जान के भय देव निवारा। हो दीन० ॥ ९ ॥ सोमा से कहा जो तू सती शील विशाला, तो कुम्भ मेंसे काढ भला नाग जो काला, उस वक्त तुम्हें ध्याय के सती हाथ जो डाला, तत्काल ही वह नाग हुआ फूल की माला। हो दीन० ॥१०॥ जब राज रोग था हुआ श्रीपाल राज को, मैना सती तब आपको पूजा इलाज को, तत्काल ही सुंदर किया श्रीपाल राज को, वह राज भोग भोग गया मुक्त राज को। हो दीन० ॥ ११ ॥ जब सेठ सुदर्शन को मृषा दोष लगाया, राणी के कहे भूप ने सूली पै चढाया,

उस वक्त तुम्हें सेठने निज ध्यान में ध्याया, सूली से उतार उसको सिंघासन पै विठाया। हो दीन० ॥१२॥ जब सेठ सुधन्ना जी को वापी में गिराया, ऊपर से दुष्ट था उसे वह मारने आया उस वक्त तुम्हें सेठ ने दिल अपने में ध्याया, तत्काल ही जंजाल से तब उनको बचाया। हो दीन० ॥ १३ ॥ एक सेठ के घर में किया दारिद्र ने डेरा, भोजन का ठिकाना था नहीं सांझ सवेरा, उसवक्त तुम्हें सेठ ने जब ध्यानमें घेरा, घर उसके में झट करदिया लक्ष्मी का बसेरा। हो दीन बंध० ॥१४॥ वलिवाद में मुनि राज सो जब पार न पाया, तब रात को तलवार ले सठ मारने आया, मुनि राज ने निज ध्यान में मन लीन लगाया उस वक्त हो प्रत्यक्ष जहां जक्ष बचाया। हो दीन बंध ॥ १५॥ जब राम ने हनुमंत को गढ लंक पठाया, सीता की खबर लेन को फिलफौर सिधाया, मग बीच दो मुनि राज की लखि आग में काया, झट वार मूसल धार सों उपसर्ग बुझाया। हो दीन बं० ॥१६॥ जिन नाथ ही को माथ निवाता था उदारा, घेरे में पड़ा था सो कुलिश करन विचारा, रघुवीर ने सब पीर तहां तुर्त निकारा। हो दीन बं० ॥१७॥ रनपाल कुंवर के पड़ी थी पांव में वेड़ी उस वक्त तुम्हें ध्यान में ध्याया था सवेरी, तत्काल ही सुकुमार की सब झड़ पड़ी वेड़ी, तुम राज कुंवर की

सभी दुख द्वंद निवेरी । हो दीन० ॥ १८ ॥ जब सेठ के नंदन को डसा नाग जो कारा, उस वक्त तुम्हें पीर में धरि धीर पुकारा, तत्काल ही उस बालक का विप भूर उतारा, यह जाग उठा सो के मानो सेज सकारा । हो दीन० ॥१६ ॥ मुनि मान तुंग को दई जब भूपने पीड़ा, ताले में किया बंद भरी लोह जंजीरा, मुनिईश ने आदीश की स्तुति की है गम्भीरा, चक्रेश्वरी तब आन के झट दूर की पीड़ा । हो दीन० ॥२०॥ शिव कोट ने हठ था किया समन्त भद्रसों, शिवपिंड की वंदन करो शंको अभद्र सों, उस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सों, जिन चंद्र की प्रतिमा तहां प्रगटी अनंद सो । हो दीन० ॥२१ ॥ सूवे ने तुम्हें आन के फल आम चढाया, मेंडक ले चला फूल भरा भक्ति का भाया, तुम दोनों को अभिराम स्वर्ग धाम बसाया, हम आप से दातार को लखि आज ही पाया । हो दीन बं० ॥२२ ॥ कपि स्वान सिंह नवल अज बैल विचारे, तिर्यंच जिन्हे रंच न था बोध चितारे, इत्यादि को सुर धाम दे शिव धाम में धारे, हम आप से दातार को प्रभु आज निहारे । हो दीन बं० ॥२३ ॥ तुम ही अनंत जन्तु को भय भीर निवारा, वेदो पुरान में गुरु गनधर ने उचारा, हम आपकी शरणागत में आके पुकारा, तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छित कारा । हो दीन बं० ॥२४॥

प्रभु भक्त व्यक्त जगत भगत मुक्त के दानी, आनंद कंद वृंद को हो मुक्ति के दानी, मोह दीन जान दीन बंधु-पातक भानी, संसार विषम पार तार अन्तरजामी। हो दीन० ॥ २५ ॥ करुणा निधान वान को अब क्यों न निहारो, दानी अनंतदान के दाता हो संभारो, वृषचंद नंद वृंद का उपसर्ग निवारो, संसार विष मखार से प्रभू पार उतारो। हो दीन० ॥ २६ ॥

२५

(गजल)

मुझे आधार है तेरा तुही जिनराज है मेरा, पड़ा भवदधि अथाही में शरण तेरा ही हेरा है॥ टेक॥ करम जल चर भरै तामें दुखी करते हैं जानो हो, अनादि काल से जिन जी इन्हों ने मुझको घेरा है। रोष मद लोभ माया की तरंगें उठ रही ऐसी, किनारे पर से लेजा कर बीच मंझधार गेरा है। मुझे आधार० ॥ १ ॥ लोकत्रय छूटके भाई जगह ऐसी नहीं कोई, उरध पाताल मध्यन्तर काल का जान फेरा है। करमसंयोग अपनेसे मिली जिन नाम की नौका, सेवक अब बैठके उतरो भला यह दाव तेरा है। मुझे आ० ॥२॥

२६

(मल्हार)

रुम झुम रुम झुम वरपै वदरवा, मुनि जन ठाढे तर त्रर तलवा ॥ टेक ॥ काली घटा तें सवही डगावे वे न डिगे मानो काठपुतलवा । रुम झुम० ॥ १ ॥ वाहर को निकसे ऐसे में ठाड़े रहैं गिरवर गिरवा । रुम झूम० ॥२॥ झंझा वायु वहैं अति सियरी वेल हिले जिन वल के धरौवा रुम झुम० ॥३॥ देख सुनें जो आप सुनावे ताकी तो करहू नौंकरवा । रुम झुम० ॥४॥ सुफल होय शिर पांव परस वे वुध जनके सब काज सरौंवा । रुमझुम ॥ ५ ॥

२७

(गजल)

मंगल नायक भक्ति सहायक स्वामी करुना धारी, प्रभु मंगल मूर्ति सुनामी चहुं घातिया चूर अकामी, शीश नमाऊं तव गुन गाऊं तुम पर जाऊं वारी ॥ टेक॥(शेर) लगा के ध्यान आतम चिदानंद रूप दिखलाया, जराके कर्म रिपु आठों अमर पद आपने पाया, विना कुछ गर्ज के तुमने हिताहित ज्ञान वतलाया, गया जो गर्ज ले तुम पै वह खुद वेगर्ज हो आया । प्रभु राग द्वेष सव त्यागे घट ज्ञान अनन्ता जागे, विघन विनाशक ज्ञान प्रकाशक भवि

जन आनंदकारी। मंगल नायक० ॥ १ ॥ तुम्हारा देश भारत में नहीं जब से हुआ आना, तभी से भेद निज पर का प्रभु हमने नहीं जाना, पड़े हैं घोर दुखों में सभी क्या रंक क्या राजा, हुई भारत की यह हालत नहीं है आब अरु दाना। जहां मक्खन दूध मलाई वहां अन्न पै बाजी आई, यह पाप हमारा नशै हत्यारा पुण्यकी हो बढबारी। मंगल नायक भक्ति० ॥२॥ नहीं है ज्ञान की बातें न तत्वों की रही चर्चा, नहीं उपयोग रुपये का बढ़ा है व्यर्थ का खर्चा, उठा व्यापार का धंधा गुलामी का लिया दरजा, छुड़ा के शिल्प शिक्षा को किया है देश का हरजा, सब नौकर होना चाहते, नहीं शिल्प कला सिखलाते, सब नौकर होके पेशा खोके, निशदिन सहते ख्वारी। मंगल नायक भक्त० ॥ ३ ॥ धरम के नाम से झगड़े यहां पै खूब होते हैं, बढाके फूट आपस की दुखों का बीज बोते हैं, निरुद्यमी आलसी हो द्रव्य अपने आप खोते हैं, हुआ है भोर उन्नति का यह भारत वासी सोते हैं, हम मेल मिलाप बढावें, कर उद्यम धन घर लावें, भारत जागे सब दुख भाजै यह ही विनती हमारी। मंगल नायक०॥४॥

२८

(सोरठ)

प्रभु हरो मेरा प्रमाद मुझे परमाद सताता है ॥टेक॥

भोर भये पूजा की वेला सो टल जाता है। सांझ समय सामायक करना याद न आता है। प्रभू हरो मेरा प्रमाद०॥१॥ गुरु भक्ति अरु शास्त्र स्वाध्याय वन नहीं आता है तप संजम अरु दान का देना मन नहीं भाता है। प्रभू हरो० ॥ २॥ यह पट कर्म श्रावक जिन शासन दरसाता है। एक नहीं पूरा होता दिन वीता जाता है। प्रभू हरो मेरा परमाद० ॥३॥ पाता है वृष अर्थ काम शिव जो शरणाता है। दो शक्ती दीना नाथ सदा न्यामत गुन गाता है। प्रभू हरो० ॥४॥

२९

(लावनी देश तुम पर वार)

जाऊं जाऊं जाऊं जी आदीश्वर तुम पर वारना जी टेक ॥ प्रभु तुम गर्भ विषै जब आये पट नवमास रतन वरषाये सची सची प्रतिहाये मंगलचारना जी । जाऊं जाऊं० ॥ १ ॥ न्हवन हेत ले इन्द्र गये, आकर पांडुकशिला मेर गिर जाकर, सहस अठोतर कलश तुम सिर ढारना जी । जाऊं जाऊं० ॥२ ॥ रतन जड़ित भूषण पहिरा कर, धारे तीन छत्र माथे पर, लाये पुष्प सो माल वना कर, तुम गल डारना जी । जाऊं जाऊं० ॥ ३॥ इन्द्र नृत्य को तुमरे आये, अष्ट द्रव्य पूजन को लाये, सारे

तुमरे चरन नवावे तुम पर वारना जी। जाऊं जाऊं ॥४॥ कुन्दन शरण तुम्हारी आयो, दर्शन पाय परम सुख पायो, स्वामी मुझको पार लगाओ, तुम जग तारना जी। जाऊं जाऊं जी आदीश्वर तुम पर वारना जी ॥ ५ ॥

३०

(लावनी तुम पर वारना०)

जाऊं जाऊं जी वामा सुत तुम पर वारना जी तुम पर वारना जी तुम पर वारना जी जाऊं जाऊंजी वामा० टेक॥विश्वसैन घर जन्म लहायो, वामा देवी सुत कहलायो, भव्यजीव मन हरप मनायो तुम पद निरखन कारनाजी। जाऊं जाऊं०॥१॥ शचि पति सुरगन संग झुलायो शिशु माया मय जननी घ्यायो सहस अठोतर कलशा लायो सुर गिर पर सिर ढारना जी। जाऊं जाऊं० ॥ २ ॥ सम रस विकसन मुद्रा सोहैं देखत सुर नर मुनि मन मोहैं भुजगराज तव सिर पर जोहैं कमठस्मय के टारने जी जाऊंजाऊं॥३॥तन आभाशोभा जलधर की पैडी दरसावत शिव धर की सुर गिर भासित घटा जल धर की छटा जो शोभा कारना जी। जाऊं जाऊं जीसाँवरिया०॥४॥

३१

(स्तुति व सुख आशीर्वाद)

हे प्रभु अशरण शरण तुम दीन रक्षक देव हो, काल तीनों हस्त रेखावत लखो स्वयमेव हो ॥ टेक ॥ दुख सिंधु ते तुम पार करते प्राणियों के वास्ते, तुम पंथ खोटे को छुड़ा कर लावते शुभ रास्ते ॥ १ ॥ हे ईश तव जो ध्यान धरता शर्म वह पाता सदा, भक्त तेरा जो रहे नहीं दुख उसको हो कदा । हे प्रभु० ॥ २ ॥ डूबते को तुम सहारा अन्य कोई है नहीं, तुम सा दयाल देव भी कोई नहीं देखा कहीं । हे प्रभु अशरण० ॥ ३ ॥ स्वामी तुम्हारी कीर्ति को मैं किस तरह वरनन करूं, वरनन नहीं मैं कर सकूंगा सहस रसना भी धरूं । हे प्रभु अशरन० ॥ ४ ॥ हे विभो मम भावना है राज वोही नित रहै, साम्राज्य जिस के में सदा न्याय की धारा बहै । हे प्रभु अश० ॥ ५ ॥ न्याय होवे ज्ञान करके राज्य जिसके में अहो, दुख न हो जिस राज में वह ही सुशासन नित रहो, । हे प्रभु० ॥ ६ ॥ दीन दुखियों के लिये बिल्कुल सताता जो न हो, साम्राज्य जिसके में कभी अन्याय भी होता न हो । हे प्रभु० ॥ ७ ॥ दोषी पुरुष ही जहां दंड पावे नीति का जहां राज हो श्रेष्ठ नर ही श्रेष्ठ हो सम्यक वही साम्राज्य हो । हे प्रभु० ॥ ८ ॥ जिस राज्य में निवसे सदा सब मग्न हों नारी व नर, आनंद की ध्वनि हो तथा चारों तरफ वा हर नगर । हे प्रभु० ॥ ९ ॥

३२

(मेरी समाधि)

इतना तो करदे स्वामी जब प्राण तन से निकले, होवे समाधि पूरी जब प्राण तन से निकले ॥ टेक ॥ माता पितादि जितने हैं ये कुटम्ब सारे, उनसे ममत्व छूटे जब प्राण तन से निकले । इतना० ॥ १ ॥ वैरी मेरे बहुत से होवेंगे इस जगत में, उनसे क्षमा करालूं जब प्राण तन से निकले । इतना० ॥ २ ॥ परिग्रह का जाल मुझ पर फैला बहुत सा स्वामी, उससे ममत्व छूटे जब प्राण तन से निकले । इतना तो करदे० ॥ ३ ॥ दुष्कर्म दुख दिखावें या रोग मुझको घेरे, प्रभू का ध्यान छूटे जब प्राण तन से निकले । इतना० ॥४॥ इच्छा क्षुधा तृषा की होवे जो उस घड़ी में उनको भी त्याग करदूं जब प्राण तनसे निकले । इतना० ॥ ५ ॥ अय नाथ अर्ज करता विनती ये ध्यान दीजे होवे सफल मनोरथ जब प्राण तन से निकले । इतना तो० ॥ ६ ॥

३३

(यह कैसे बाल बिखरे०)

तुम्हारा चंदमुख निरखै स्वपद रुचि मुझको आई है, ज्ञान चमका परापर की मुझे पहिचान आई है ॥ टेक ॥

कला बढ़ाती है दिन दिन आप रजनी विलाई है अपून आनंद शासन ने शोक तृष्णा बुझाई है। तुम्हारा०॥१॥ जो इष्टानिष्ट में मेरी कल्पना थी नशाई है मैंने निज साध्य को साधा उपाधी सब मिटाई है। तुम्हारा० ॥ २ ॥ धन्य दिन आज का न्यामत छवी जिन देख पाई है, सुधर गई सब बिगड़ी अचल सिद्धि हाथ आई है। तुम्हारा०॥३॥

३४

(तर्ज—इलाजे दर्दे दिल से मसीहा०)

अपूरव है तेरी महिमा कही हम से नहीं जाती, तुम्हीं सच्चे हितू सबके तुम्ही हरएक के साथी ॥ टेक ॥ पाप जब जग में फैला था गरम बाजार हिंसा का, बिचारे दीन जीवों को कभी नहीं चैन थी आती। अपूरव० ॥ १ ॥ हजारों यज्ञ में लाखों हवन में जीव मरते थे, कि जिसको देख कर भर आती थी हर एक की छाती। अपूरव०॥२॥ जगत कल्यान करने को लिया औतार जब तुमने, सुरासुर चर अचर सबको तेरी बानी थी मन भाती। अपूरव० ॥ ३ ॥ दया का आपने उपदेश दुनियां में दिया आके वरने जालिमों के हाथ से दुनियां थी दुख पाती। अपूरव०॥ ४ ॥ जो था पाखंड दुनियां में हुआ सब दूर इक दम में, धुजा हरस नजर आने लगी जिनमत की

लहराती। अपूरव०॥ ५॥ जगत कर्ता के और हिंसा के जो झूठे मसायल थे, न्याय परमाण से तुमने किया रद्द सब को इक साथी। अपूरव०॥ ६॥ हटा हिंसा किया तुमने दया मय धर्म को जारी, न्यामत जात बलिहारी है दुनियां यश तेरा गाती। अपूरव० ॥७॥

३५

(स्तुति चाल लावनी)

हे करुणा सागर त्रिजगत के हितकारी, लखि निज शरणागत हरो विपत्ति हमारी ॥ टेक॥ जो एक ग्राम पति जन की विपता टारे, मनोवांछित जन के कार्य्य क्षण में सारे, तो तुम त्रिभुवन के ईश्वर विश्व पुकारे, विश्वास भक्त ताही विधि उर में धारे, फिर भूल गये क्यों ईश हमारी बारी, लखि निज शरणागत हरो विपति हमारी॥ १॥ मैं निज दुख बरनन करों कहा जग स्वामी, तुम तो सब जानत घट २ अन्तर्यामी, तुम सम दर्शी सर्वज्ञ यशस्वी नामी, मम हरो अविद्या प्रगटे सुख आगामी, बर भक्ति तुम्हारी लगै हृदय को प्यारी। लखि निज शरणागत हरो विपत्ति हमारी० ॥ २॥ तुम अधमोद्धारक विरद जगत में छाया, मैं सुना सन्त शारद गनेश जो गाया, यासे आश्रय तक शरण तुम्हारी आया, सब हरो हमारा संकट

करके दाया तुमको कुछभी नहीं अशक्य विपुल बलधारी, लखि निज शरणागत हरो विपती हमारी ॥३॥ ज्यों मात पिता नही शिशुके दोष निहारे, पाले सप्रेम अरु सर्व आपदा टाले, तुम विश्व पिता ज्योंही हम निश्चय धारे, या से शरणागत हो के विनय उचारे, जन नाथुराम यह जाचत वारम्वारी। लखि निजशरणन हरो विपती हमारी ॥४॥

३६

(आरती)

जय जिनवर देवा प्रभु जय जिन वर देवा, आरती तुमरी तारों दीजे प्रभु नित सेवा ॐ जय ॐ जय जिन वर देवा ॥ टेक ॥ कनक सिंहासन मनिमय ऊपर राजें, चौंसठ चमर ढुरैं सित शोभा अती छाजै ॐ जय ० ॥ १ ॥ तीन छत्र सिर ऊपर सोहै झल्लर में मोती दिपै महाभा-मंडल कोटिक रवि जोती ॐ जय ॐ जय० ॥ २ ॥ फूल पत्र फल संजुत तरु अशोक छाया पाञ्च वरण पुष्पांजलि वरषा झड़ लाया ॐ जय० ॥ ३ ॥ दिव्य वचन सब भाषा गर्भित, शिव मग संकेत दुन्दुभि ध्वनी नभ वाजत मोदन मन हेतु ॐ जय० ॥४॥ इन अष्टप्रातिहारज संयुत प्रभु जी अति सोहैं सुर नर मुनी भविजन का निरखत ॐ जय ० ॥ ५ ॥ सहस एक अठ लक्षण संजुत शोभित

तन प्रभू का, सासोश्वास सुगंधित पद्मासन नीका। ओं जय० ॥ ६ ॥ चौंतीस अतिशय शोभित पैंतिस गुणवानी निज निज भाषा मांही समझत सब प्राणी ओंजय०॥७॥ ज्ञान अनन्ता दर्शन सुख वीर-जनंता लोकालोक यथारथ जानत भगवंता ओं जय० ॥ ८ ॥ चौंसठि इन्द्र सहित इन्द्राणी देवी अरु देवा नाचै गावै अद्भुत सुर सारे सेवा ओं जय० ॥९ ॥ नाटक निरख भविक जन मनमें हम भावैं ये जड़ पुद्गल तन रचना तज आतम ध्यावे। ओं जय० ॥१०॥ या महिमा को देख भविक जन जनम सुफल माने, धन सुर धन सुरललना जिन भक्ति ठाने॥ ओं० जय० ॥ ११ ॥ वीतराग जिनवर की आरति रुचि सों जो गावै, अमरदास मनवाञ्छित निश्चै फल पावै। ओं जय० १२॥

३७

(आरती दूसरी)

जय जय जिन देवा जय श्री जिन देवा खेवा पार लगादो करूं चरन सेवा ॥ टेक ॥ वंदो श्री अरहन्त परम गुरु परम दयाधारी प्रभु परम दयाधारी, परमात्म पुरुषोतम जग जन हितकारी जय। जय०॥१॥ प्रभू भव जल पतित उधारन चरण शरण थारी प्रभु चरण शरण थारी सद्भक्ता-

निरलोभी करम भरम हारी । जय जय० ॥ २ ॥ श्रागे ध्यान करत अरविंद मातंगज लखि समताधारी प्रभु लखि समताधारी, तीर्थंकर पद पारस पाय भयो भवधारी । जय जय० ॥३॥ क्षिहिताथर मुनि मारन आयो मृगपति वल धारी, प्रभु मृगपति वलधारी, भयो वीर तीर्थंकर सुनि शिक्षा धारी । जय जय० ॥४॥ स्वामी दोप कुशील दियो सीता को, दुर्जन अविचारी प्रभु दुर्जन अविचारी, कूद पड़ी अग्नी में लेय शरण थारी । जय जय० ॥५॥ खिल गये कमल अगन में स्वामी चढ़गये जल भारी, प्रभु चढ़गये जल भारी, अच्युतेन्द्र तुम कीनो फिर न होय नारी । जय जय० ॥ ६ ॥ वलि ने यज्ञ रचाय दुखी किये मुनि जन ब्रह्मचारी प्रभु मुनि जन ब्रह्मचारी, विष्णुकुमार मुनीश्वर कियो तव उपगारी । जय जय० ॥ ७ ॥ सर्प किये फूलन के गजरे जिन सेवा धारी, प्रभु जिन सेवा धारी, विदित कथा सतियन की जानत नर नारी । जय जय० ॥८॥

३८

(आरती तीसरी)

सांझ समय जिन वंदो भवि तुम सांझ समय जिन वंदो ॥ टेक ॥ लेकर दीपक आगे वालो, कटत पाप के फंदो । भवि तुम० ॥ १ ॥ प्रथम तीर्थंकर आदि जिनेश्वर

भेंटत होय आनंदो । भवि तु० ॥२॥ पुष्प माल धरि ध्यान लगाऊं खेऊं धूप सुगंधो । भवि तुम० ॥३॥ रतन जड़ित की करूं जी आरती बाजत ताल मृदंगो । भवि तुम० ॥४॥ कह जिन दास सुमरि जिय अपने सुमरत होय अनंदो । भवि तुम० ॥ ५ ॥

३९

(गजल)

प्रभू मैं शरण हूं तेरी विपत को तुम हरो मेरी ॥टेक॥
मुझे कर्म्मों ने घेरा है चहुं गती मांह पेरथा है, ये हैं दिग्गज मेरे वैरी विपत को तुम हरो मेरी । प्रभु० ॥ १ ॥
विषय विषरस में फूला हूं जगत माया में भूला हूं, कुमति मति आन मोहि घेरी, विपत को तुम हरो मेरी । प्रभु०॥२॥
समय थोड़ा रहा बाकी, अवधि इस देह की पाकी, करूं क्या आय जम फेरी विपत को तुम हरो मेरी। प्रभू०॥३॥
पतित मुझसा न है कोई, पतित तारक हो तुम सोई लगाते क्यों हो अब देरी विपत को तुम हरो मेरी। प्रभू० ॥ ४॥
त्रिलोकीनाथ कृपासिंधु दया करिये जगत बंधू, कुगति हरिये दास केरी, विपति को तुम हरो । मेरी प्रभू० ॥५॥

४०

(उपदेशी)

सब स्वारथ का संसार है तू किस पै प्यार करता

है ॥ टेक ॥ जब तक प्यारे करे कमाई, तब तक सारे करें बड़ाई, चचा भतीजे सुसर जमाई, कुनबा ताबेदार है दिल भरीका दिल भरता है । तू किस पै प्यार करता है० ॥१॥ जब तू शक्ति हीन होजावे, अपनी हाजत कुछ फरमावे यार दोस्त कोई निकट न आवे करत न कोई सतकार है, कमबख्त नाम पड़ता है । तू किस पै प्यार करता है० ॥२॥ जिसके प्यार में प्रभू हि बिसारा, धर्म्मा-धर्म्म न तनिक विचारा, उस कुनबे ने किया किनारा अब नहीं कोई गमख्वार है, कहिर के यही मरता है । तू किस पै प्यार करता है० ॥ ३ ॥ मत बन जान बूझ कर भोला, है खुद गर्ज यार मिचोला यह 'वसुधा' मानुप का चोला फिर मिलना दुश्वार है, जप उसे जो दुख हरता है । तू किस पै० ॥ ४ ॥

४१

(भजन उपदेशी)

सुनियो भारत के सरदार, म्हारी धीर बंधानेवाले ॥ टेक ॥ देखो इस भारत के बीच किरिया कैसी होगई नीच, बैठे हाथ दान कर खींच लाखों द्रव्य रखानेवाले । सुनि० ॥ १ ॥ भूखों की नहीं सुनते टेर, उनको लालच ने लिया घेर, करते दया धर्म में देर धन को व्यर्थ लुटाने

वाले। सुनियो० ॥ ३ ॥ वन गये मुसलमान ईसाई लाखों ने है जान गवाई होते कोई नहीं सहाई, म्हारे प्राण बचाने वाले। सुनियो०॥४॥ आये अब तुमरे दरबार, न्यामत दिल में दया विचार, करो अनाथों का उद्धार दया का भाव दिखाने वाले। सुनियो० ॥५ ॥

४२

(गजल)

देख कर हालत वतन की अब रहा जाता नहीं विन कहे मन की विथा यह धीर मन आता नहीं ॥ टेक॥ ऐशो अशरत के वो सामां हाय भारत क्या हुये, क्या हुई पहली वो हालत कुछ कहा जाता नहीं। देख कर हालत० ॥ १॥ प्रेम की खेती है सूखी फूट का है बाग सबज क्या, तुझे भारत वतन अब प्रेम कुछ भाता नहीं। देख कर० ॥२॥ सब हैं अपनी अपनी उन्नति सीढ़ियों पर चढ़ रहे तूने दी क्यों हार हिम्मत क्या चढ़ा जाता नहीं। देख कर० ॥ ३ ॥ जुल्म क्या क्या कर चुका है बस कर चरखे कुहन नीम जां हम हो चुके हैं गम सहा जाता नहीं॥४ ॥ याद बरबादी जब अपनी आती है हम को कभी, बसुधा रोदेती है पर कुछ बस बसाता नहीं। देख कर हालत वत०॥५ ॥

४२

(लावनी)

अबला तन लखि अल्प धीर जो मोही मानुष फंसते हैं सो दुर्बुद्धी छोड़ नर्क में पड़ते हैं ॥ टेक ॥ मृगनयनी के नयन रसीले श्याम श्वेत छवि अरुनाई, चंचलताई निरख कर नर की न रहे थिरथाई, मुख सरोज अरु उर सरोज लखि मूरख मन अति उलझाई, परवस-ताई महा दुख आप आप को प्रगटाई, मनके चलते लाज तजै फिर चलते खोटे रस्ते हैं। अबला तन० ॥ १ ॥ लज्जा रहित कुधी पर त्रिय को निरख निरख बहु बात करें, परिचय राखें वक्र पर हो निरशंक वृपघात करें कर विश्वास निसंक अंक भर नर त्रिय शीतल गात करें, अधम काज यह न होवे जाहर यह विचार दिनरात करें, शंका तज गुरु तात मात की पर नारी से हंसते हैं। अबला० ॥ २ ॥ लज्जावान पुरुष भी क्रम क्रम शंका तज विश्वास करे फिर क्रम क्रम से प्रिय वचन सुनत उर आस करे प्रीत बढ़ै आशक्त होय अति दोनों वचनालाप करें, मिल कर रहना विरह में दोनों उर सन्ताप करें, क्षोभित मन पापी नर कुल की मर्य्यादा सो खोते हैं। अबला० ॥ ३ ॥ एकाकी कामिन से नर को कभी न बतलाना चाहिये अंधकार में लाज तज कभी न ढिग जाना चाहिये शील

रहित नर नारी की सोहब्बत में नहीं आना चाहिये, जो हित चाहो 'जिनेश्वर' वचन हृदय लाना चाहिये विषय फंसे नर को विधि विषधर समय२ प्रति डसते हैं। अवला तन० ॥ ४ ॥

४४

(घड़ी क्या कहती है)

टिक टिक करती घड़ी रात दिन हम को यही सिखाती है, जल्दी करो काम मत चूको घड़ी वीतती जाती है। महा शक्ति शाली क्षण क्षण की यदि सहायता पाओगे, तो भी शीघ्र नहीं कुछ दिन में तुम मनुष्य वन जाओगे टिक०॥१॥ पूरी करनी है जीवन बड़ी २ जिम्मेदारी, जिसके बिना न होसकते हो मनुष्यता के अधिकारी इससे जग प्रसिद्ध उद्योगी महाजनों की गैल गहो, उठो और आलस्य छोड़ कर प्रतिक्षण के सन्निकट रहो। टिक २ करती० ॥ २ ॥ क्षण को नहीं तुम्हारी चिन्ता तुम्हें छोड़ भग जाता है, सावधान! वह गया हुआ फिर कभी न वापिस आता है इस कारण से तुम सचेत हो करो रात दिन रखवाली, करते रहो काम कुछ भरसक कभी नहीं वैठो ठाली। टिक टिक करती०॥३॥ सदा सामने से वह प्रति क्षण सुख दुख के साधन सारे, साथ लिये भागा जाताहै रुका

न रोक रोक हारे। विघ्न तुम्हारे कर्म्मों से जब उसकी गति में आवेगा, तब वह खुश होकर सुख संपति शान्ति तुम्हें दे जावेगा। टिक टिक करती०॥४॥ क्षण का है आलस्य शत्रु यदि उसके मित्र कहाओगे, तो क्षण दुख दे दे मारेगा तुम अधीर होजाओगे, जो क्षण बीत चुके हैं उस में तुमने क्या क्या काम किये, या मानुष्य कहलाने के शुभ साधन कितने जान लिये। टिक टिक क० ॥५॥ शोक शोक तुमने किया कुछ तुम्हें न लज्जा आती है, उठो देर मत करो जवानो घड़ी बीतती जाती है। टिक टिक करती घड़ी रात दिन हमको यही सुनाती है, रामनरेश सुनो यह स्वर से क्षण क्षण के गुण गाती है॥ ६ ॥

४५

(स्वारथ महिमा)

समझ मन स्वारथ का संसार ॥ टेक ॥ हरे वृक्ष पक्षी बैठा, गावै राग मल्हार। सूखा वृक्ष, गयो उड़ पक्षी तजकर दम में प्यार। समझ मन० ॥१॥ बैल वहां मालिक घर आवत तावत बांधो द्वार, वृद्ध भये तब नेह न कीनो दीनो तुरत विसार, समझ मन० ॥ २॥ पुत्र कमाऊ सब घर चाहैं पानी पीवैं वार, भयो निखट्टू दुर दुर पर २ होवत बारम्बार। समझ मन० ॥ ३॥ ताल पाल पै डेरा

कौना सारस नीर निहार, सूखा नीर ताल को तज गये उड़ गये पंख पसार। समझ मन स्वारथ० ॥ ४ ॥ जब तक स्वारथ सधै तभी तक अपना सब परिवार, नातर वात न बूझै कोई सब बिछड़े संग छार। समझ मन० ॥५॥ स्वारथ तज जिन गह परमारथ किया जगत उपकार, ज्योती ऐसे अमर देव के गुण चिन्ते हरबार। समझ मन० ॥ ६ ॥

४६

(दशलक्षण धर्म्म)

धरम के हैं दश लक्षण जान ॥टेक॥ क्षमा, मार्दव, और आर्जव, सत्य शौच गुण खान। संजम, तप, और त्याग अकिंचन ब्रह्मचर्य्य महान। धर्म के हैं दश लक्ष० ॥ १ ॥ क्रोध नशाओ, मान मिटाओ, छल छोड़ो बुधवान, झूठ वचन कबहू मत बोलो जांय भले ही प्रान धर्म्म के दश० ॥ २ ॥ त्यागो लोभ करो वश इन्द्रिय निज आतम का ध्यान, धन सम्पति दो दया धर्म्म और जाति देश हित दान। धर्म्म के० ॥३॥ तजो परिग्रह लेश न राखो इच्छा दुख की खान, राखो वल और वीर्य्य सुरक्षित होय ब्रह्म का ज्ञान। धरम के हैं०॥४॥ या सैं दुख दारिद्र नसैं सब हो पापों की हान, जोती धार धरम दश लक्षण जो चाहै कल्याण। धर्म्म के हैं दश लक्षण० ॥ ५ ॥

न रोक रोक हारे। विघ्न तुम्हारे कर्म्मों से जब उसकी गति में आवेगा, तब वह खुश होकर सुख संपति शान्ति तुम्हें दे जावेगा। टिक टिक करती०॥४॥ क्षण का है आलस्य शत्रु यदि उसके मित्र कहाओगे, तो क्षण दुख दे दे मारेगा तुम अधीर होजाओगे, जो क्षण बीत चुके हैं उस में तुमने क्या क्या काम किये, या मानुष्य कहलाने के शुभ साधन कितने जान लिये। टिक टिक क० ॥५॥ शोक शोक तुमने किया कुछ तुम्हें न लज्जा आती है, उठो देर मत करो जवानो घड़ी बीतती जाती है। टिक टिक करती घड़ी रात दिन हमको यही सुनाती है, रामनरेश सुनो यह स्वर से क्षण क्षण के गुण गाती है॥ ६ ॥

४५

(स्वारथ महिमा)

समझ मन स्वारथ का संसार ॥ टेक ॥ हरे वृक्ष पक्षी बैठा, गावै राग मल्हार। सूखा वृक्ष, गयो उड़ पक्षी तजकर दम में प्यार। समझ मन०॥१॥ बैल बहो मालिक घर आवत तावत बांधो द्वार, वृद्ध भयो तब नेह न कीनो दीनो तुरत बिसार, समझ मन० ॥ २॥ पुत्र कमाऊ सब घर चाहैं पानी पीवै वार, भयो निखट्टू दुर दुर पर २ होवत बारम्बार। समझ मन० ॥ ३॥ ताल पाल पै डेरा

कीना सारस नीर निहार, सूखा नीर ताल को तज गये उड़ गये पंख पसार। समझ मन स्वारथ० ॥ ४ ॥ जब तक स्वारथ सधै तभी तक अपना सब परिवार, नातर बात न बूझै कोई सब बिछड़े संग छार। समझ मन०॥५॥ स्वारथ तज जिन गह परमारथ किया जगत उपकार, ज्योती ऐसे अमर देव के गुण चिन्ते हरबार। समझ मन० ॥ ६ ॥

४६

(दशलक्षण धर्म्म)

धरम के हैं दश लक्षण जान ॥टेक॥ क्षमा, मार्दव, और आर्जव, सत्य शौच गुण खान। संजम, तप, और त्याग अकिंचन ब्रह्मचर्य्य महान। धर्म के हैं दश लक्ष० ॥ १ ॥ क्रोध नशाओ, मान मिटाओ, छल छोड़ो बुधवान, झूठ वचन कबहू मत बोलो जांय भले ही प्रान धर्म्म के दश० ॥ २ ॥ त्यागो लोभ करो वश इन्द्रिय निज आतम का ध्यान, धन सम्पति दो दया धर्म्म और जाति देश हित दान। धर्म्म के० ॥३॥ तजो परिग्रह लेश न राखो इच्छा दुख की खान, राखो बल और वीर्य्य सुरक्षित होय ब्रह्म का ज्ञान। धरम के हैं०॥४ ॥ या सै दुख दारिद्र नसैं सब हो पापों की हान, जोती धार धरम दश लक्षण जो चाहै कल्याण। धर्म्म के हैं दश लक्षण० ॥ ५ ॥

४७

(हंस नामा)

अजब तमाशा देखा हमने कहै गुरु सुन चेरा रे ॥ टेक ॥ एक वृक्ष पर एक हंस ने कीना रैन बसेरा रे। सुन्दर पक्षी देख उसे सब पक्षियों ने आ घेरा रे। अजब० ॥१॥ सब ने कहा हंस से यहां पर कोई दिन कीजे डेरा रे। ठहरा हंस वहीं उन सबसे उपजा प्रेम घनेरा रे। अजब तमा० ॥२॥ एक दिवस यह कहा हंस ने हम कल जांय सवेरा। यह सुन पक्षी दुख माना हम संग तजैं न तेरा रे अजब तमाशा० ॥३॥ सुबह हंस ने लई उडेरी पक्षिन लिया उडेरा रे। कोई कोस दो कोस पै हारा, सबही ने दम गेरा रे। अजब० ॥४॥ सब पक्षी रह गये यहां पर उड़ गया हंस अकेला रे। या विधि जोति जाय अकेला ना संगी कोई मेरा रे अजब० ॥५॥

४८

(उपदेशी)

मुसाफिर क्यों पड़ा सोता भरोसा है न इक पलका, दमा दम बज रहा डंका तमाशा है चला चलका ॥टेक॥ सुबह जो तख्त शाही पर बड़ी सज धज से बैठे थे। दुपहरे वक्त में उनका हुआ है बास जंगल का। मुसाफिर०

॥१॥ कहां हैं राम अरु लक्ष्मण कहां रावन से बलधारी, कहां हनुमन्त से योधा पता जिनके न था बल का। मुसाफिर०॥२॥ उन्हीं को काल ने खाया तुझे भी काल खावेगा, सफर सामान उठकर तू बनाले बोझको हलका। मुसाफिर० ॥३॥ जरासी जिंदगानी पर, न इतना मान कर मूरख। यह बीते जिंदगी पल में कि जैसे बुद बुदा जलका। मुसाफिर० ॥ ४ ॥ नसीहत मान ले जोती, उमर पल पल में कम होती। जो करना आज ही करले, भरोसा कर न कुछ कल का। मुसाफिर० ॥ ५ ॥

४६

(कव्वाली)

जैन मत जब से घटा मूरख ज़माना होगया, यानी सच्चा ज्ञान इकदम रवाना होगया ॥टेक॥ गल्तफ़हमी झूठ ला-इल्मी गई हदसे गुज़र, सच अगर पूछो तो सब उलटा ज़माना होगया ॥ जैनमत० ॥१॥ जाते पाक ईश्वर को करता हरता दुनिया का कहें, हाय भारत आजकल बिल्कुल दिवाना होगया॥ जैनमत०॥२॥ कर्म्मफल दाता भी कोई और है कहने लगे, कैसी उलटी बात का दिलमें ठिकाना होगया ॥ जैनमत० ॥३॥ कोई कोई जीव की हस्ती से भी मुनकिर हुए, कैसा यह अज्ञान का दिल पै

निशाना होगया । जैनमत० ॥४॥ जैनमत प्रचार इतने का नतीजा देखलो, रहम उल्फ़त छोड़कर हिंसक ज़माना होगया । जैनमत० ॥५॥ झूठ चोरी और दग़ाबाज़ी कहां तक बढ़ गई, पाप करते आप कलजुग का बहाना होगया । जैनमत० ॥६॥ बुग्ज़ कीना फूट घर २ में नज़र आने लगी, वातसल्य जाता रहा अपना बिगाना होगया । जैनमत० ॥७॥ न्यायमत जैनमत की अब तो इशाअत कीजिये, सोते २ मोह निद्रामें ज़माना होगया । जैनमत० ॥८॥

५०

(जुए का ड्रामा)

जुआरी—आओ खेलें जुआ आओ खेलें जुआ, पलमें फकीर अमीर हुआ, आओ खेलें जुआ०॥

विरोधी—मत खेलो जुआ, मत खेलो जुआ, पल में अमीर फकीर हुआ, मत खेलो जुआ० ॥

जुएबाज़ की सुनो कहानी, मन चित लाके भाई । द्रोपदी नारी पांडव हारे, ज़रा शर्म्म नहीं आई ॥ मत खेलो जुआ० ॥१॥

जुआरी—जुआ खेला जो दुर्योधन ने, जीती पांडव नार । एक घड़ी में बनगये यारो परनारी भरतार ॥ आओ खेलें जुआ, आओ खेलें जुआ० ॥२॥

विरोधी—जुएबाज़ और चोर डाकू का कौन करे इतवार।
जिधर जावे धक्के पावे, मिले न पाई उधार॥ मत
खेलो जुआ० ॥३॥

जुआरी—जुएबाज़ और चोर डाकू से कोई न करते तक-
रार। जिधर जावे दौलत पावे, मिलें एक के चार।
आओ खेलें जुआ, आओ खेलें जुआ० ॥४॥

विरोधी—जुएबाज़ के पास जो होता, एकदम देत लगाय।
बाल बच्चे चाहें भूखे मरजांय, करे नहीं परवाय॥
मत खेलो जुआ मत खेलो जुआ पलमें, अमीर० ॥५॥

जुआरी—जुएबाज़ के पास जो होता, करता मौजबहार।
ऐश उड़ावे घर में नारी, मजे करे परवार॥ आओ
खेलें जुआ आओ खेलें जुआ, पलमें फकीर ०॥६॥

विरोधी—अगर वो जावे हार जुएमें, फिर चोरीवो करते।
हरदम नानक राज द्वारे, दंड भोगने पड़ते॥ मत
खेलो जुआ मत खेलो जुआ, पलमें अमीर० ॥७॥

जुआरी—बेशक जावें हार जुए में, फिक्र नहीं वो करते।
अगले दिन जब जीत के आवे, मोटर गाड़ी चढ़ते॥
आओ खेलें जुआ आओ खेलें जुआ० ॥८॥

विरोधी—सब विषयों में विषय यह खोटा, समझो मेरे
भाई। नर्क बीच लेजाने वाला समझो मेरे भाई॥
मत खेलो जुआ मत खेलो जुआ, पलमें० ॥९॥

जुआरी—सुनी नसीहत तेरी भाई, दिलमें किया खयाल। इस पापी चण्डाल जुए ने, कर दीना कंगाल। नहीं खेलूं जुआ, नहिं खेलूं जुआ ॥१०॥

विरोधी—विद्यानन्द भव भव निरना प्यारे, सबसे नियम कराओ। एस. आर. कहं लानत भेजो, खाक इस के सर डालो। मत खेलो० ॥११॥

जुआरी—जुआ बड़ा जंजाल है भाइयो इसका मत लो नाम। पैसे मारो फेंक जमीं से दूरसे करो प्रणाम। नहीं खेलूं जुआ, नहीं खेलूं जुआ, आज से मैंने नियम लिया ॥१२॥

५१

(सट्टे का ड्रामा)

सट्टेबाज–जरा सट्टा लगा, जरा सट्टा लगा, घर बैठे तू मौज उड़ा।

विरोधी–मत सट्टा लगा, मत सट्टा लगा, कर देगा यह तुझको तबाह ॥ मत सट्टा० ॥ सट्टेबाज की कहूं कहानी, सुनलो मेरे भाई। धन तो सारा दिया लुटा फिर होश ज़रा नहीं आई, मत सट्टा लगा, मत सट्टा लगा० ॥१॥

सट्टेबाज़-सट्टे की कुछ कहूं हकीक़त सुनलो करके कान।
एक अंक जो निकले बस फिर होजावे धनवान।
जरा सट्टा लगा, जरा सट्टा लगा० ॥२॥

विरोधी-एक अंक की आशा करते, हो ज़ाते कंगाल।
जगह जगह पर मारे फिरते, वुरा होय अहवाल।
मत सट्टा लगा, मत सट्टा लगा० ॥३॥

सट्टेबाज-एक दाव जो आजावे बस फिर हो मौज बहार।
एक के बदले मिलें कईसौ, क्या अच्छा व्यौपार।
जरा सट्टा लगा० ॥४॥

विरोधी-सट्टेबाज कोई धनी न होता, देखे सब कंगाल।
वुरा शौक सट्टे का भाई, कर देता पामाल। मत
सट्टा लगा० ॥५॥

सट्टेबाज-सट्टे में जो जीत के आवे, पावे ऐश आराम।
मज़ा करे परवार जोसारा, क्या अच्छा यह काम।
जरा सट्टा लगा० ॥६॥

विरोधी- सट्टे के शौकीन जो भाई, ढूंढैं साधु फकीर।
सौ २ गाली सुनकर आवें, क्या उलटी तकदीर।
मत सट्टा लगा० ॥७॥

सट्टेबाज-साधू सन्त जो गाली देवें, तू क्या जाने यार।
सट्टेबाज ही अर्थ निकालें, दिल में सोच विचार।
जरा सट्टा लगा० ॥८॥

विरोधी-सट्टे में कुछ नहीं भलाई, इसको छोड़ तू भाई।
सी. एच. लाल कहे तुमसों, ये आखिर में दुखदाई।
मत सट्टा लगा० ॥९॥

सट्टेबाज-सुनी नसीहत तेरी भाई, दिल में किया ख़याल।
इस पापी चण्डाल सट्टे ने, कर दीना कंगाल। नहीं
सट्टा लगाऊं नहीं सट्टा लगाऊं, आज से लो मैं
हलफ़ उठाऊं ॥१०॥

५२

(मांस निषेध)

मतना मारो यार, पशु जुबां के कारण ॥टेक॥ गर तुम्हें
कोई आ मारे, हो कैसा दुःख तुम्हारे, जरा तो करो
विचार। पशू जुबां के कारण मतना मारो यार ॥१॥
ऐसा ही दुख वो पावें, तुम्हें तरस जरा ना आवे, पड़े
सौ २ धिक्कार। पशू जुबांके कारण मतना मारो यार ॥२॥
दुनिया के जीव ना थारे, फिर क्यों तू उनको मारे, तेरा
है क्या अधिकार। पशू जुबांके कारण० ॥३॥ नहीं मनुष्य
की खास ग़िज़ा है, खावे जो बड़ी सज़ा है, कहे जैनी
ललकार। पशु जुबां के कारण मतना मारो यार ०॥४॥

५३

(शराब का ड्रामा)

शरावी-भरजाम भरजाम भरजाम पियूं गुल लाला, बनूं जैंटिलमैंन मैं आला। जिसपै हो उसकी रहमत, उसे मिलती ऐसी नेअमत। भरजाम० ॥१॥

विरोधी-जो पिये बनादे वहशी, यह जान की दुश्मन ऐसी लख लानत मुंह पै थू, अमल ऐसे की ऐसी तैसी। ख्वाह कितना हो ख्वांदा, झटपट कर देती अन्धा, बे अक्ल पिलावें ज़िन्दा, दयानन्द फेल ये गन्दा। लख लानत मुंह पै० ॥२॥

शरावी-रम विस्की बरांडी देशी, पीलो दिल चाहे जैसी।

विरोधी-लख लानत मुंह पै थू, अमल ऐसेकी ऐसी तैसी।

शरावी-भरजाम भरजाम भरजाम पियूं गुल लाला, बनूं जन्टिलमैंन में आला, हो जिसपै उसकी रहमत, मिले उसको ऐसी नेमत।

विरोधी—दे त्याग नशा ये भाई, ज़र दरकी करै सफाई जिसने ये मुंह से लगाई, ना पास रही इक पाई।

शरावी—ये बातें बनाते कैसी, करते दीवाने जैसी।

विरोधी—लख लानत मुंहपै थू, अमल ऐसेकी ऐसी तैसी।

शरावी—क्या मजेदार यह प्याला, पीकर होजा मतवाला, जिस्को यह मिला निवाला, उसे समझो किस्मत वाला।

विरोधी—वाह मजेदार यह प्याला, मोरीमें गिरानेवाला
जूतों से पिटाने वाला, इज्जत को घटाने वाला ।
शराबी—यह मस्त बनावे ऐसा, बस बादशाह है जैसा ।
विरोधी—(शेर) अय अहले हिंद तुमको खोया शराब ने,
जाहो जलाल मरतबा खोया शराब ने । बेसुध पड़े
हो ऐसे कि अपनी खबर नहीं, उल्लू बना दिया
तुम्हें गोया शराब ने ॥ अब मंजिले तरक्की पर
पहुंचोगे किस तरह, कांटों का बीज राह में बोया
शराब ने ॥ गैरत नहीं तुम्हें जरा देखो तो हालको,
फिहरिस्त नंगों के नाम में लिखाया शराब ने ॥

(चलत)

यह हालत देखो कैसी, बिल्कुल है मुर्दा जैसी,
अब होश में आओ छोड़ नशेको इसकी ऐसी तैसी ।
शराबी—क्या अजब हाल हुआ मेरा, किस बदमस्ती ने घेरा,
यह कैसा छाया अन्धेरा, दिखता नहीं शाम सबेरा ।
विरोधी—तू हटको छोड़दे भाई, नहीं इसमें कोई बड़ाई,
यह नशा बड़ा दुखदाई, कहता हूं सुन चितलाई ।
शराबी—तेरी मान नसीहत छोडूं, बोतल को जमींमें तोडूं
ना पियूं कभी यह प्याला, बे इज्जत करने वाला ।
ना पियो कोई यह प्याला, लानत २ यह प्याला ॥

५४

(भजन—शराब निषेध)

राम नाम रस के एवज़ में, शराब का अब है प्याला, पिलादे साक़ी, रहै न बाकी, कुछ बोतल में गुललाला ॥ पी पी शराब बनकर नवाब, गलियों में टक्कर खाते हैं। अड़ंग बड़ंग मुंह से बकते हैं, टेढ़ी चाल दिखाते हैं। नशे का चक्कर जिस दम आया, नाली में गिर जाते हैं। कम करनेको नशा महरबान, कुत्ते उन्हें न्हलाते हैं। नंबर बन की मुंह में बरांडी, छोड़ रहा कुत्ता काला। पिलादे साक़ी रहै न बाकी, कुछ बोतल में गुललाला ॥ १ ॥ भंगी और भिस्ती ने जब यह आकर देखा नज्जारा। नाली में से उठ ओ भड़वे, कहां से आया हत्यारा। कौन कहै सोओ न पलंग पै, यह तो उल्लू घर मारा। टांग पकड़ भंगी ने खींची, जोर से एक पंजर मारा। ऐसा केस एक दिन हमने आंखों देखा भाला। पिलादे साकी रहै न बाकी, कुछ बोतल में गुल लाला ॥ २ ॥ आते जाते लोग देखकर कहने लगे मयख्वार पड़ा, कोई कहै भले घरोंका नालायक बदकार पड़ा। कोई कहै मोहताज है भूखा, पैसेसे लाचार पड़ा। कोई कहै हैजे लेग का ताजा ही बीमार पड़ा। सिविल पुलिस में खबर करादो, पिलादे साकी रहैन बाकी

कुछ० ॥ ३ ॥ घर जमीन वरबाद करी, घर पै औरत बीबी रोती। बेच दिये मेरे हंसले कठले, बचे नथली के मोती। एक रोज जब मिली न पाई, कलाल को जा दी धोती। बेहद पीने वालों की अकसर, हालत ऐसी होती। रामचंद सतसंग रंगका, पिया करो भिओ प्याला। पिलादे साकी रहै न बाकी कुछ बोतल में गुललाला ॥ ४ ॥

५५

(भजन—शराब निषेध)

मयकशी में देखलो, यारो मजा कुछ भी नहीं, खुदबखुद बेखुद बने, लेकिन मजा कुछ भी नहीं ॥ टेक ॥ सारे घर का मालोज़र, बोतल के रस्ते खोदिया। मुफ्त में इज्जत गई, पाया मज़ा कुछ भी नहीं ॥ मय कशी० ॥१॥ जब नशा उतरा तो हालत, और बदतर होगई। खाली बोतल देखकर बोले मज़ा कुछ भी नहीं ॥मयकशी०॥२॥ रात दिन नारी बिचारी, जान को रोया करे। ऐसी मय-ख्वारी पै लानत है मज़ा कुछभी नहीं ॥ मयकशी० ॥३॥ न्यामत इस मय की उलफत का, नतीजा देख लो। बस खराबी के सिवा इसमें मजा कुछभी नहीं ॥ मयकशी में देखलो यारो मजा कुछ भी नहीं० ॥ ४ ॥

५६

(भंग का ड्रामा)

पीने वाला—चलो भंगिया पियें, चलो भंगिया पियें, इस बिन मूरख योंही जियें ॥ कून्डी सोटा बजे दमादम, छने छनाछन भंग । मजा जिंदगी का जब यारो, हो चुल्लू में दंग । चलो भंगिया पियें चलो भंगिया पियें॥ १॥

विरोधी—मत भंगिया पियो मत भंगिया पियो, इस से अच्छे योंही जियो ॥ खुश्की लावे अकल नशावे, वेसुध करके डारे । होश रहे नहीं दीन दुनी का, बिना मौत ही मारे ॥ मत भंगिया पियो मत भंगिया पयिो इस बिना० ॥ २ ॥

पीने वाला—तू क्या जाने स्वाद भंग का, है यह रस अनमोल । मगन करे आनंद बढ़ावे, दे घट के पट खोल ॥ चलो भंगिया पियें० ॥ ३ ॥

विरोधी—सिर घूमे और नथने सूखें, नींद घनेरी आवे, कल की बात रही कल ऊपर, भूल अभी की जावे । मत भंगिया पियो मत भंगिया पियो० ॥४॥

पीने वाला—भंग नहीं यह शिव की बूटी, अजर अमर है करती । जनम जनम के पाप नशाकर, सब रोगोंको हरती ॥ चलो भंगिया पियें चलो भंगिया पियें ॥५॥

विरोधी—भंग नहीं यह विष की पत्तियां, करे मनुष को ख्वार। जीते जी अंधा कर देती, फिर नरकों दे डार ॥ मत भंगिया पिये मत भंगिया पिये ॥ ६॥

पीने वाला—कूंडीमें खुद बसै कन्हैया, अर सोटेमें श्याम। विजिया में भगवान बसे हैं, रगड़ रगड़ में राम ॥ चलो भंगिया पियें चलो भंगिया पियें ॥ ७ ॥

विरोधी—अरे भंग के पीने वालो, भंग बुद्धि हर लेत। होशियार और चतुर मर्द को, खरा गधा कर देत॥ मत भंगिया पियो मत भंगिया पियो० ॥ ८ ॥

पीनेवाला—झूंठी बातें फिरे बनाता, ले पी थोड़ी भंग। एक पहर के बाद देखना, कैसा आवे रंग ॥ चलो भंगिया पीयें चलो भंगिया पियें ॥ ९ ॥

विरोधी—लानत इसपर लानत तुझ पर, चल चल होजा दूर। भंग पिये भंगी कहलावे, अरे पातकी क्रूर ॥ मत भंगिया पिये, मत भंगिया पिये ॥ १० ॥

पीनेवाला—(शेर) भंगके अद्भुत मजे को तूने कुछ जाना नहीं। रंग को इसके जरा भी मूढ़ पहिचाना नहीं ॥ आंख में सुरखी का डोरा, मन में मौजों की लहर। शान्ती आनंद इसके बिना, कभी पाना नहीं॥११॥
(चलत) साधू संत भंग सब पीते क्या कंगाल अमीर,

ईश्वर से लीलीन करावे, यह इसकी तासीर ॥
चलो भंगिया पियें चलो भंगिया पियें० ॥ ११॥

विरोधी-(शेर) है नहीं यह भंग, क़ातिल अक़्ल को तलवार है
करती है यह बेहोश, जानो यह मुरदार है ॥
खौफ जिनको है नरक का, वो इसे छूते नहीं ।
बात सच मानो पियारे, यह नरक का द्वार है ॥

(चलत) यह सब सच्ची बातें भाइयो, भंग नरक डारै ।
आंखें खोल जगत में देखो, लाखों काम बिगारै॥

पीनेवाला-सुनकर यह उपदेश तुम्हारा, मुझे हुआ आनंद ।
लो मैं छोड़ी भंग आज से, ईश्वर की सौगन्द ॥
मत भंगिया पियो, मत भंगिया पियो० ॥ १२ ॥

विरोधी—भला किया यह काम आपने, दई भंग जो छोड़ ।
और भी सबसे नियम कराओ, कूंडी सोटा तोड़ ॥
मत भंगिया पियो, मत भंगिया पियो० ॥

पीनेवाला—कूंडी तोडूं सोटा तोडूं, भंग सड़क पर डारूं ।
कोई मत पीना भंग भाइयो, बारम्बार पुकारूं ॥
मत भंगिया पियो मत भंगिया पियो० ॥ १३ ॥

पीते हैं अदना आला, यह घर में करे उजाला।
विरोधी—क्या खाक बनाये आला, दिल जिगर सब करे काला, अच्छा नशा यह निकाला, दोज़ख में गिरानेवाला
हुक्केबाज—यह महफ़िलका सरदार, क्या जाने मूढ़ गंवार।
विरोधी—(शेर) कब तक कि हुक्का नोशो मुहल्ला जगाओगे, वंसी बजाके नाग को कब तक खिलाओगे। मारे आस्तीं डसेगा बस तुम्हें, पंजे से ऐसे देव के बचने न पाओगे। गर ज़िंदगी चाहते हो तो इसको तर्क करो, खुद अपना वरना खिरमनेहस्ती जलाओगे। (चलत) जिस इससे प्रीत लगाई, आखिर में हुई दुखदाई। मान कहा क्यों पागल बनता कहांगई चतुराई।
हुक्केबाज—तेरी मान नसीहत छोड़ूं, ले अभी चिलम को तोड़ूं। नहचे को तोड़ मरोड़ूं हुक्केको ज़मींसे फोड़ूं। ना पिऊं कभी यह हुक्का, लानत २ यह हुक्का, ना पियो यह हुक्का, बेशक लानत यह हुक्का॥

५८

(सिगरेट का ड्रामा)

पीनेवाला—यारो मुझे सिगरेट या बीड़ी दिलाना यारो मुझे सिगरेट या बीड़ी दिलाना, बीड़ी दिलाना माचिस लगाना कैसा यह फैशन बना।

५९

(नशा निषेध)

जो चाहते हो खुशी से जीना, नशा न पीना नशा न पीना
बुरी बला है यह जानो पीना, नशा न पीना नशा न पीना ॥ टेक ॥

शराबो अफयूनो चरसगांजा, है एक से एक कहर सोला, पुकार कर कह रहा है बंदा, नशा न पीना नशा न पीना० ॥ १ ॥

शराबियों की जो देखी हालत, किसी के कपड़े हैं कैसे लतपत, कोई है कहता बचश्मे इबरत, नशा न पीना नशा न पीना० ॥ २ ॥

कोई बदरों में पड़ रहा है, किसी का मुंह कुत्ता चाटता है, कोई यह चिल्ला के कह रहा है, नशा न पीना नशा न पीना० ॥ ३ ॥

अगर तुम्हारी है चश्मे बीना, न खाना अफयून न भंग पीना। डबोएंगे यह तेरा सफीना, नशा न पीना नशा न पीना० ॥ ४ ॥

६०

(रंडी निषेध ड्रामा)

(रंडी नचानेवाला)—ज़रा रंडी नचा ज़रा रंडी नचा, दौलत

का दुनिया में यह है मज़ा ।

३(विरोधी)—मत रंडी नचा मत रंडी नचा, नरकोंमें तुझको
यह देगी पौंचा ।
फिजूल करो बरबाद रुपैया ज़रा तो सोचो भाई ।
देख देख सन्तान तुम्हारी बिगड़ जाय अन्याई ।
मत रंडी नचा मत रंडी नचा० ॥ १ ॥

(नचाने०) तालीम सीखने रंडी घर औलाद हमारी जावे,
सभी बात में ताक़ बने फिर कहीं खता ना खावे ।

(विरोधी) रंडी की खातिर जो देखे सो नारी ललचावे,
मन में उनके उठें उमंगें रंडी फैशन बनावे । मत
रंडी नचा मत० ॥ ३ ॥

(नचाने०) समधी के दरवाजे सीठने रंडी आय सुनावें ।
दे जबाब समधन जब उसको बाग बाग होजावे ॥
जरा रंडी नचा० ॥ ४ ॥

(विरोधी) नाच देखने के शौक़ीनो ज़रा सुनो दे कान ।
रुपया तुम्हारेसे क़ुरबानी होवे बेपरमान ॥ मत रंडी
नचा मत रंडी नचा० ॥ ५ ॥

(नचाने०) हम रुपया रंडी को देते ना कुछ कहते भाई ।
गान सुनै सो आनंद पावै खूब शान्ती छाई ॥ जरा
रंडी नचा० ॥ ६ ॥

(विरोधी) रातों जगने से महफिल में होते हो बीमार।
वहुत जगह बुनियाद इसी पर चलते खूब पैजार ॥
मत रंडी नचा मत रंडी नचा० ॥ ७ ॥
(नचाने०) महफिलमें रंडीकी शोहरत सुनकर सब आजावें
रौनक बढे, विवाह की भारी रुपया सभी चढ़ावें।
ज़रा रंडी नचा जरा रंडी नचा० ॥ ८ ॥
(विरोधी) रंडी का सुन नाम सभासे धार्मिकजन उठ जावें
नंगों के बैठे रहने से मजा नहीं कुछ आवे ॥ मत
रंडी नचा मत रंडी नचा० ॥ ९ ॥
(नचाने०) बिन इसके रौनक नहीं आवै सूनी लगे बरात
दिन तो जैसे तैसे बितावें कटै न खाली रात ॥
जरा रंडी नचा जरा रंडी नचा० ॥ १० ॥
(विरोधी) धर्मोपदेशक बुलवा करके, कीजे धर्म प्रचार।
रंडी भड़वे तुम्हें बनावे करदें खाने खराब ॥ मत
रंडी नचा मत रंडी नचा० ॥ ११ ॥
(नचाने०) नित्य नहीं हम नाच करावें कभी २ करवावें।
नेग टेहले को साधे है, नहीं खता हम पावें ॥ जरा
रंडी नचा जरा रंडी नचा० ॥ १२ ॥
(विरोधी) एक दफै का लगा ये चस्का, कर देता है ख्वार।
धन दौलत सब खोकर प्यारे, होजायगा बेज़ार ॥
मत रंडी नचा मत रंडी नचा० ॥ १३ ॥

(नचाने०) सुनी नसीहत तेरी भाई मन में हुआ विचार ।
रुपया तवा होके क्या, जाना होगा नर्क मंझार ॥
जरा सच्ची बता जरा सच्ची बता० ॥ १४ ॥
(विरोधी) सत्य कहूं मैं नर्क पड़ोगे सुनलो रंडी वालो ।
कहे जवाहर जैनी तुम से कसम धर्म की खालो ॥
मत रंडी नचा मत रंडी नचा० ॥ १४ ॥
(नचाने०) सुनकर शिक्षा तेरी भाई कसम धर्म की खाऊं
नाच देखने और करवाने का मैं हलफ़ उठाऊं ॥
नहीं रंडी नचाऊँ नहीं रंडी नचाऊँ आज से तो मैं
हलफ़ उठाऊँ ॥ १६ ॥

६१

(वेश्या निषेध)

रंडी बाज़ी में ग़र्क़ ज़माना हुआ, बड़े अपनों को दाग़
लगाना हुआ ॥ टेक ॥
जिनके धन थे अपार, फंदे इसके पड़े यार, खोया ज़रमाल
सार, हुई इज्जत ख़्वार, खाली दौलत का सारा खजाना
हुआ । रंडी बाज़ी में० ॥ १ ॥
एक पाई का यार, नहीं मिलता उधार, कहे आदम बदकार
मुंह से थूके संसार, फल वेश्याकी प्रीती का पाना हुआ ।
रंडीबाजी में ग़र्क़ जमाना० ॥ २ ॥

गरचे रंडीके यार, गर्भ तेरा रहजाय, कन्या जन्मे जो आय, जग से मैथुन कराय, वेशुमार जमाई बनाना हुआ। रंडी वाज़ी मं० ॥ ३ ॥

यदि गर्मी होजाय, फिरो टहनी हिलाय, कहीं जावो चलाय, देख तुम को घिनाय, कहैं उठजावो, खूब याराना हुआ। रंडी वाज़ी मं० ॥ ४ ॥

जबलों पैसा है पास, रंडी रहती है दास, नहीं पैसा रहा पास, देवे बाहर निकास, घरसे मुवे निकल क्या दिवाना हुवा। रंडी वाजी मं० ॥ ५ ॥

जाओ फिर कर जो यार, मारे जूते हजार, दौड़ लावे पुकार, मुश्क बांधै सरकार, पुलिस आगई इज़हार लिखाना हुआ। रंडी वाजी में गर्क जमाना हुआ ॥ ६ ॥

फौरन थाने में आन किया तेरा चालान, हुक्म डिप्टी ने तान, दिया ऐसा लो जान, छह की सजा, दस जुर्माना हुआ। रंडी वाजी मं० ॥॥ ७ ॥

कहता जैनी ललकार, कर इससे न प्यार, जाओ नरकों मंझार, नहीं हरगिज जिनहार, प्रीति इससे न कर, क्यों दिवाना हुआ। रंडीवाज़ी में गर्क ज़माना हुआ ॥ ८ ॥

६६

(रंडी निषेध)

हया और शर्म तज रंडी सरे महफिल नचाई है, न समझो

इसमें कुछ इज्जत सरासर वेहयाई है ॥ टेक ॥
निगाहे बद से देखें वाप वेटा और भाई सब, कहो यह मा
हुई भाभी बहन अथवा लुगाई है। हया और० ॥ १ ॥
दिखा कर नाच और रुपया उनसे दिला कर के, अरे
अन्याइयो बच्चों को क्या शिक्षा दिखाई है। हया० ॥२॥
लखें कोठे झरोखों से तुम्हारे घर की सब नारी, असर
क्या नेक दिलमें पेदा होता भाई है। हया और० ॥ ३ ॥
यह खातिर देख उसकी सबके दिल में आग लगती है,
हैं आपस में यह कहती वाह क्या उमदा कमाई है। हया
और शर्म० ॥ ४ ॥
कभी बिछुवे न नथ वाली हमें स्वामी ने बनवाई, मगर
इस वेवफा औरत को दी सारी कमाई है। हया० ॥५॥
हुई खातिर कभी ऐसी न जैसी इसकी होती है, बनी बेगम
पड़ी दिन रात तोड़े चारपाई है। हया और शर्म० ॥६॥

६३

(वेश्या निषेध)

मत वेश्या से प्रीति लगाओ जी ॥ टेक ॥
लाखो हजारों घर ग़ारत हुए हैं नालिश करादी, कुरकी
फैलादी नीलामों की होय मनादी। हा। मत वेश्या० ॥१॥
लाखों हजारों प्राणी भूखे मरे हैं धनको खोकर, निर्धन

होकर, फिरें भटकते हैं दर दर। हा। मत वेश्या से० ॥२॥
लाखों करोड़ों की जानें गई हैं वीरज खोकर, निर्बल होकर हों बीमार मरें सड़ सड़ कर। हा। मत० ॥ ३ ॥
हजारों गरमी से सड़ रहे हैं नीम की टहनी पड़ेगी लेनी, होय मुसीबत भारी सहनी, हा मत वेश्या से प्रीति० ॥४॥
लाखों प्रमेह रोग भुगत रहे हैं, तेल खटाई मिरच मिठाई, खावें तो कमबख्ती आई। हा। मत वेश्या से ॥ ५ ॥
होवे जो रंडी के पुत्री तुम्हारी, करती कमाई दुनिया से भाई गिनो तो कितने भये जमाई। हा। मत वेश्या० ॥ ६॥
कहता जैनी अब कुछ चेतो, माल बचाओ इज्जत कमाओ, भूल कभी वेश्या के न जाओ। हा। मत वेश्या से प्रीति लगाओ जी ॥ ७ ॥

६४

(एक बूढे के दिल में शादी की उमंग) गद्य

भाई बूढो! मेरी बडी उमर के दोस्तो! कुछ तुम्हें अपनी भी खबर है, न तो तुम्हारे घर है न दर है। भाई तुमको कुछ ख्याल हो या न हो लेकिन मैं अपनी क्या कहूं, जब से घर की औरत का साथ छूटा तब से मेरा तो बिलकुल ही भाग फूटा है। उसके मरने के बाद न कुछ खाना है न पीना है। न मरना है न जीना है। क्या

कहूं जब मैं अपने बेटों और पोतों की जोरुओं के बिछुओं की झंकार सुनता हूं तब हाथ मलता हूं और सिर को धुनता हूं। न दिन को चैन है और न रात को आराम है। सच पूछो तो बिला जोरु के यह जिंदगी हराम है। भाइयो! जिंदगी के दिन तो बुरी भली तरह से गुजर ही जायेंगे और मरने को वह क्या मरी हम भी एक न एक दिन मर ही जायंगे लेकिन सब से ज्यादा फिकर तो यह है कि बाद मरनेके चूड़िया कौन तोड़ेगी, करवा कौन फोड़ेगी बिछुवे कौन उतारेगी, चूनड़ी कौन फाड़ेगी। हाय! जब इस बात का ख्याल आता है तो छाती पर को सांप सा चला जाता है। भाइयो! मत सुनो इन नौजवानोंकी, मत सुनो इन आलिम और विद्वानों की। यह तो अपने मतलब की कहते हैं, खुद मजे में रहते हैं। इनको हमलोगों की क्या खबर है। मुरदा बहिश्त में जाय या दोजख में। इनको तो अपने दाल मांडे से काम है।

बस बस, आओ! भाइयो शादी करावें। कोई सात आठ वर्ष की नन्ही सी दुल्हन व्याह कर लावें। लेकिन ख्याल रखना अगर कोई बड़ी दुल्हन आवेगी तो वह कमबख्त हमको ही नोंच नोंच कर खाजावेगी। इस लिये खूब सोच समझ कर काम करना चाहिये मेरी तो यह राय है कि बिला जोरू के रंडवेपन की हालत में हरगिज न मरना

चाहिये वाह ! वाह ! वाह ! आहा ! आहा ! भाई खूब मैं तो जरूर ही शादी कराऊंगा। (बूढे का गाना)

बूढ़ा—मैं तो शादी करूं मैं तो शादी करूं, शादी से खाना आबादी करूं ॥ टेक ॥

नई नवीली छैलछबीली इक जोरू ब्याह लाऊं,
बूढा होकर दुल्हा कहाऊं, सरपर मौड़ धराऊं।
मैं तो शादी करूं॥१॥

रिफार्मर—मत शादी करे, मत शादी करे, भारत की क्यों बरबादी करे ॥ टेक ॥

साठ बरस का बूढा खूसट, मुंह में रहा न दांत।
गड़ गड़ हाले गर्दन तेरी, थर थर कांपे गात।
मत शादी करे मत शादी करे ॥ भारत० ॥ २॥
चेहरा तेरा है मुर्झाया, पोले पड़ गये गाल।
बातें करते हुए टपकती मुंह से टप टप राल ॥
मत शादी करे मत शादी० ॥ ३ ॥

बूढा—हाथ पैर से हूं मैं चंगा, बदन गठीला मेरा।
जो इक थप्पड़ कसकर मारूं तो मुंह फिरजावे तेरा ॥
मैं तो शादी करूं० ॥ ४ ॥

रिफार्मर—बस बस रहो बढो मत आगे, बड़े न बोलो बोल। आंखों के अन्धे हो, फिर भी देखो आंखें खोल ॥ मत शादी करो मत शादी०॥ ५ ॥

बूढ़ा—देख मेरा आंखों का सुरमा, कैसा लगे पियारा।
हाथों कंगन पहन लगूं मैं, जैसे राज दुलारा॥
मैं तो शादी करूं॥ ६॥
रिफार्मर—बेटे पोते अर पड़पोते, कुटुंब तेरे घर बारी।
तुझे लगी शादी की, बिलकुल गई तेरी मत मारी॥
मत शादी०॥ ७॥
बूढ़ा—बेटे पोते अपने घर के, मेरा तो घर खाली।
घर की लाली जभी रहे जब हो घर में घरवाली॥
मैं तो शादी करूं मैं तो शादी०॥ ८॥
रिफार्मर—घर वाली क्या तेरी जानको रोवेगी नादान।
आज कराता है तू शादी, कल चढ़ चले बिमान॥
मत शादी करे मत शादी०॥ ९॥

शेर

बैठ कर अरथी पै तू, कल जायगा स्मशान में।
करके जायगा दुल्हन को, रांड तू इक आन में॥
क्या भरोसा ज़िंदगी का और फिर बूढा है तू।
पैर तेरे गोर में; और हाथ कब्रिस्तान में॥
क्यों करे ज़ालिम किसी की ज़िंदगी बरबाद तू।
क्या धरा अब ब्याह में और ब्याह के अरमान में॥
गर तू जोती चाहता है आक़बत में हो भला।
मन लगा भगवान में और धन लगा पुन्य दान में॥

(चलत)

मत कर शादी, घर बरबादी, तुझे सलाहदी सुखकारी।
सोच समझ कर देख ज़रा तू इसमें निकलेगी ख्वारी॥
बूढा—कुछ परवा की बात नहीं जो हूं कल रथी सवार।
करवा फोड़े चुड़ियां तोड़े नई नवीली नार॥
मैं तो शादी०॥ १०॥

(शेर)

क्या भला यह कम नफा है जो हो घरमें स्त्री।
तोड़े चुड़ियां फोड़े करवा सर की फाड़े चुनरी॥
और घर के सब करेंगे शोक लोकालाज को।
पर वह सच्चे दिल से मेरा शोक माने गम भरी॥
एक तो वैसे मरना है बुरा संसार में।
और फिर रंडवे का मरना बात है कितनी बुरी॥
यह समझ कर मैंने इरादा ब्याह करने का किया।
अब नहीं मानूंगा ज्योती इसी में है बेहतरी॥

(चलत)

होवे शादी घर आबादी, मनकी मुरादी बर आवे।
हट्टा कट्टा हूं मैं पट्ठा, तू क्यों रोड़ा अटकावे॥
रिफार्मर—मैं कहता हूं तेरे भले की समझ २ नादान।
बन्ना बने मत ब्याह करे मत, बात मेरी ले मान॥
मत शादी०॥ ११॥

बूढा—नहीं भले की बात कही तैं बुरे की सारी।
जा घर अपने बैठ छोकरे अकल गई तेरी मारी॥
मैं तो शादी० ॥ १२ ॥
हाय हाय बूढों के ब्याह ने किया देश का नाश।
तीस लाख भारत की विधवा भोग रही हैं त्रास॥
मत शादी करे मत शादी करे ॥ १३ ॥
बूढा—फिर क्या भारत की रांडों का मैं हूं जिम्मेदार।
उन कमबख्तों के सिर आकर पड़ी कर्म्म की मार॥
मैं तो शादी करुं० ॥ १४ ॥
रिफार्मर—नहीं कर्म की मार पड़ी है तुझ जैसों ने कीना
खुशी खुशी से शादी करके महापाप सिर लीना॥
मत शादी करे मत शादी० ॥ १५ ॥
बूढा—बात कही तें सच्ची प्यारे आंख खुली अब मेरी।
मैं नहीं हरगिज़ ब्याह करूंगा, सुनी नसीहत तेरी॥
नहीं शादी करुं नहीं शादी करुं आज से लो मैं
नियम करुं, नहीं शादी करुं नहीं शादी करुं॥

(बूढे के ब्याह का ड्रामा)

बुड्ढा छोटीसी छोकरीको ब्याह लिये जाय। शेम शेम॥ टेक
गोदी खिलायगा; बेटी बनायगा। नन्हीसी बाला को ब्याह
लिये जाय, बूढा छोटीसी छोकरी०॥ शेम शेम॥ १॥

हिये का फूटा, दांतों का टूटा । वोकेसे मुंह का यह ब्याह
लिये जाय ।। बूढा छोटी० ।। शेम शेम ।। २ ।।
डाढी मुंडाई, मूछें कटाई । चहरे पै उवटन मलाय
लिये जाय । बूढा छोटी० ।। शेम० शेम० ।। ३ ।।
सिर को रंगाया, सुरमा लगाया । मुखपै तो पौडर लगाय
लिये जाय । बूढा छोटी० ।। शेम शेम० ।। ४ ।।
गर्दन है हिलती, आंखें हैं मिलती, हाथों में कंगना वंधाय
लिये जाय । बूढा छोटी० । शेम शेम० ।। ५ ।।
मिस्सी लगाई, महंदी रचाई । सिर पै तो सेहरा वंधाय
लिये जाय । बुड्ढा० ।। शेम शेम ।। ६ ।।
पोती सी दुल्हन, वावा सा दुल्हा । रोती रोती छोकरी
उडाय लिये जाय । बुड्ढा० ।। शेम शेम० ।। ७ ।।
ग्यारह की वन्नी, अस्सी का वन्ना । रुपयों की थैली
झुकाय लिये जाय । बुड्ढा छोटी० ।। शेम शेम ।। ८ ।।
देखो यह बूढा बुद्धि का कूढा, करने को विधवा ये व्याह
लिये जाय । बुड्ढा छोटी सी० ।। शेम शेम ।। ६ ।।

६५

(चोरी का ड्रामा)

(चोर) चलो चोरी करें चलो चोरी करें, जाकर किसीका
धन हम हरैं ।। टेक ।।

चोरी करने वाले यारो मन माना धन पाते, मजे करें हैं अपने घर में बैठे ऐश उडाते । चलो चोरी० ॥१

(विरोधी) मत चोरी करो मत चोरी करो, नाहक किसी का धन क्यों हरो ॥ टेक ॥

इस दुनियां में धन है भाइयो, प्राणों से भी प्यारा ।
जो कोई चोरी करके लावे वो होवे हत्यारा ॥ मत चोरी करो मत० ॥ २ ॥

(चोर) चोरी करने वाला यारो कभी न हो कंगाल ।
सारा कुनवा ऐश उडावे मिलै मुफ्त का माल ॥
चलो चोरी० ॥ ३ ॥

(विरोधी) चोर उचक्के डाकू का, कोई न करे इतबार ।
घर बाहर नहीं इज्जत पावे, बुरा कहे संसार ॥
मत चोरी० ॥ ४ ॥

(चोर) चोर उचक्के डाकू जगमें, जवांमर्द कहलाते ।
नाम हमारा सुनके भाई, सभी लोग थर्राते ॥
चलो चोरी० ॥ ५ ॥

(विरोधी) बुरा काम चोरी है भाइयो, मतलो इसका नाम ।
पड़ै जेलखाने में जाकर, नाहक हों बदनाम ॥
मत चोरी करो मत चोरी करो० ॥ ६ ॥

(चोर) चोरी करने वाले यारो, जरा फिक्र नहीं करते ।
चाहे कैद होजांय वहां भी, पेट मजे से भरते ॥

चलो चोरी करें चलो चोरी करें। ७ ॥

(विरोधी) क्या करता तारीफ कैद की, सुनकर दिल थर्रावे

चक्की पीसे बुने बोरिये, मार रात दिन खावे ॥

मत चोरी करो मत चोरी करो० ॥ ८ ॥

(चोर) जो असली हैं चोर, कैद में नहीं मार को खाते।

करके काम मजे से सारा, मुफ्त रोटियां खाते ॥

चलो चोरी करें चलो चोरी करें ॥ ६ ॥

(विरोधी) नहीं चैन दिन रात कैद में, भरते रहैं तबाई।

महा कष्ट से प्राण छोड़कर सहैं नरक दुख भाई ॥

मत चोरी करो मत चोरी करो० ॥ १० ॥

(चोर) नरकों के कुछ दुखका भाइयो, मतना करो विचार।

देखे भाले नहीं किसी ने, योंही कहै संसार ॥

चलो चोरी करें० ॥ ११ ॥

(विरोधी) शेर

नरकों के दुख की कुछ तुम्हें यारो खबर नहीं।

दूसरों का धन हरो हो, फिर भी मनमें डर नहीं ॥

मारें छेदें चीर फारैं नर्क गति में नारकी।

याद रक्खो चोर का इसके सिवा कोई घर नहीं ॥

गर तुम्हें मंजूर होवे बहतरी अपनी सदा।

मत हरो धन और का इसका समर अच्छा नहीं ॥

(चलत) जो चोरी से नहीं डरते वो दुख नरकों का भरते,

मान कहा मूरख अज्ञानी चोरी कभी न करना।
(चोरी) अब मेरी समझमें आई, बेशक है बहुत बुराई,
त्याग किया चोरीका मैंने आजसे मैंतो नियम करूं॥

६६

(हिन्दी भाषा की प्रशंसा)

सकल भाषाओं में रे उत्तम देवनागरी भाषा ॥ टेक ॥
देवनागरी है वो भाषा, जो लिक्खो सो पढ़लो।
और किसी में सिफत नहीं है चाहे परीक्षा करलो॥
सकल भाषाओं में रे देव० ॥ १ ॥
अक्षर केवल चार नागरी शब्द बना हरिद्वार।
सात हरफ उरदू के मिल कर बनता हरी दिवार॥
सकल भाषाओं में रे उत्तम० ॥ २ ॥
एच. ए. आर. डी. डब्ल्यू. ए. आर. (HARDWAR)
अंग्रेजी में यार, इतनी दूर में लिखा जावे फिरभी हरी
डुआर ॥ सकल भाषाओं में रे० ॥ ३ ॥
किसी ने उर्दू में खत लिखकर मंगवाये थे आलू।
पढ़ने वाले ने क्या भेजा इक पिंजरे में उल्लू॥
सकल भाषा० ॥ ४ ॥
शुड,SHOULD) में एल लिखा जाता है पढने में नही आवे
कौन खता के बगैर मतलब विरथा पकड़ा जावे॥
सकल भाषा० ॥ ५ ॥

सुन्दर नाम नागरी लिक्खो प्रियवर मोतीदत्त। अंग्रेजी में लिक्खा जावे डीयर मोटीडट्ट॥ सकल भाषाओं० ॥ ६ ॥
इंगलिश के स्पेलिंग देखकर क्यों ना हांसी आवे। बी यू टी तो बट हो किन्तु पी यू टी पुट होजावे॥ सकल भाषाओं में रे० ॥ ७ ॥

मुद्दत से यह संस्कृत भाषा मुरदा हुई थी सारी।
पुनः जीवित कर गये इसको अकलंकदेव निस्तारी॥
सकल भाषाओं में रे० ॥ ८ ॥

६७

(ड्रामा बाल विवाह)

कर्ता—मेरे भाई का व्याह मेरे भाई का व्याह, चलकर खुशी मनाऊंगा आज, मेरे भाई का व्याह ॥ टेक ॥
(दोहा) मामी मौसी मिल सभी, करत सुमंगल गान
गीत नृत्य के रंग में, सब घर है इक तान ॥
मेरे भाई० ॥

विरोधी—मुख तेरा खुश दीखता, अरु प्रमुदित सब गात।
भ्रात बता दे क्या हुई, आज खुशी की बात ॥
तेरे भाई का व्याह तेरे भाई का व्याह चलकर खुशी मनायेगा आह ॥ २ ॥

कर्ता—हां भ्राता जी सत्य है, आनंद कारण आज।
मेरे प्यारे भ्रातका, हुआ व्याहका साज ॥ मेरे०॥३

सुन्दर नाम नागरी लिक्खो प्रियवर मोतीदत्त। अंग्रेजी में लिक्खा जावे डीयर मोटीडट्ट॥ सकल भाषाओं० ॥ ६ ॥
इंगलिश के स्पेलिंग देखकर क्यों ना हांसी आवे। बी यू टी तो बट हो किन्तु पी यू टी पुट होजावे॥ सकल भाषाओं में रे० ॥ ७॥
मुद्दत से यह संस्कृत भाषा मुरदा हुई थी सारी।
पुनः जीवित कर गये इसको अकलंकदेव निस्तारी॥
सकल भाषाओं में रे० ॥ ८ ॥

६७

(ड्रामा वाला विवाह)

कर्ता—मेरे भाई का व्याह मेरे भाई का व्याह, चलकर
खुशी मनाऊंगा आज, मेरे भाई का व्याह ॥ टेक॥
(दोहा) मामी मौसी मिल सभी, करत सुमंगल गान
गीत नृत्य के रंग में, सब घर है इक तान॥
मेरे भाई० ॥

विरोधी—मुख तेरा खुश दीखता, अरु प्रमुदित सब गात।
भ्रात बता दे क्या हुई, आज खुशी की बात॥
तेरे भाई का व्याह तेरे भाई का व्याह चलकर खुशी
मनायेगा आह ॥ २ ॥

कर्ता—हां भ्राता जी सत्य है, आनंद कारण आज।
मेरे प्यारे भ्रातका, हुआ व्याहका साज॥ मेरे०॥३

विरोधी—वुरी भारत की राह वुरी भारत की राह, मत
कर छोटे मे भाई का व्याह वुरी भारत की राह० ॥
(दोहा) क्या कहते हो भ्रातजी, भाई अति ही वाल,
आठ वर्ष की उमर में, क्या व्याहन का काल ॥
वुरी भारत की राह० ॥ ४ ॥
कर्ता—क्यों होगा आनंद नहीं, भाई का है व्याह ।
वात खुशी की है बड़ी, सवको होगी चाह ॥
मेरे भाई का व्याह० ॥ ५ ॥
विरोधी—धूम मचाई अटपटी, खुशी मनाई भूर ।
तुम सव कुछ नहीं समझते, गलती है भरपूर ॥
वुरी भारत की राह० ॥ ६ ॥
कर्ता—मेरी भावज को अभी, लगा वारहवां वर्ष ।
जोड़ी अच्छी देखके, सवने माना हर्ष ॥
मेरे भाई० ॥ ७ ॥
विरोधी—भावज भाई से वड़ी, लगा वारहवां वर्ष ।
लानत ऐसे व्याह पर, क्यों माना है हर्ष ॥
वुरी भारत की० ॥ ८ ॥
कर्ता—लड़की भी है वो वड़ी, रक्खें कैसे लोग ।
पढ़ने से क्या होयगा, कहते हैं सव लोग ॥
मेरे भाई का व्याह० ॥ ९ ॥

विरोधी—अरे अरे अफसोस है, दुख भरा संसार।
जिस्में रोने आदि की, शिक्षा का प्रचार॥
बुरी भारत की० ॥ १० ॥
कर्ता—पढ़ने से क्या होयगा, करना क्या व्यापार।
इतना ही बस बहुत है, करना शिष्टाचार॥
मेरे भाई का० ॥ ११ ॥
विरोधी—भ्राता लड़की एक है, देवी अति ही बाल।
छोटे पन में लेगया, उसके पति को काल॥
बुरी भारत० ॥ १२ ॥
कर्ता—बड़े भाग के योगतें, आवे यह संयोग।
लाड़ लड़ाकर बहू का, धनका हो उपयोग॥
मेरे भाई० ॥ १३ ॥
विरोधी—नहीं बुद्धि विद्या कछू, नहीं जाने कुछ राह।
पढ़ता पहिली क्लास में, क्या जानें वह ब्याह॥
बुरी भारत० ॥ १४ ॥
कर्ता—नाई ब्राह्मण मिल सभी, घर पर आये आज।
खुशी मनाते हैं सभी, सुनकर साज समाज॥
मेरे भाई० ॥ १५ ॥
विरोधी—पढ़ी लिखी भी हैं नहीं, जाने न कुछ भी राह।
जल्दी इतनी क्यों करी, पीछे होता ब्याह।
बुरी भारत० ॥ १६ ॥

कर्ता—माता इसकी अनपढ़ी, करे कौन जब गौर।
रोना धोना आगया, अब क्या करना और ॥
मेरे भाई० ॥ १७ ॥

विरोधी—स्वार्थ बुद्धि हैं ये पिता, माता उनकी क्रूर।
जिससे भाई होगये, धन के नशे में चूर ॥
बुरी भारत० ॥ १८ ॥

बहुत कहूं क्या मेरे भाई, बाल विवाह अनीत।
यह कुरीत निखार कर, फैलाओ जग कीर्ति ॥
बुरी भारत की राह० ॥ १९ ॥

कर्ता—भाई बात यह सत्य है, हम सब धरें जु ध्यान।
तो होजावे जल्द ही, भारत का उत्थान ॥
बुरी भारत की राह० ॥ २० ॥

भगवत से हम प्रार्थना, करते हैं धरि ध्यान।
भारत की सुख शान्त का, हो जावे उत्थान ॥
बुरी भारत की० ॥ २१ ॥

६८

(भजन उपदेशी)

फिरे अरसे से होता तू ख्वार दिला, देखा तुझसा तो मैंने बशर ही नहीं। जिसे नादां तू समझे है अपना मकां, यह तू करले यकीं तेरा घरही नहीं ॥ टेक ॥ जैसे

गैर की लेकर कोई ज़मीं बना झोपड़ी अपनी को लेवे सजा, जब मालिक आनके करदे जुदा चलै उस दम कोई उज़र ही नहीं ॥ फिरे अरसे से० ॥ १ ॥ पी मोह शराब खराब हुआ, पड़ा गाफिल खोकर होश को तू, बड़ा बेडर होके बैठ रहा, यहां के तो बराबर डर ही नहीं ॥ फिरे अरसे०॥२॥ कहे मेरा मेरा सब माल व ज़र, परवार मेरा अरु बाग़ो चमन । तेरा यार नहीं परवार नहीं, तेरा माल नहीं तेरा ज़रही नहीं ॥ फिरे अरसे से० ॥ ३ ॥ करै ग़ैर की चीज़ पै दावा दिला, अरु चीज को अपनी तू भूल गया । तू ने जुल्म पै बांधी है कस के कमर, इन्साफ पै तेरी नज़र ही नहीं ॥ फिरे अरसे० ॥ ४ ॥ तू तो जाल में दुनियां के ऐसा फंसा, तुझे आगे का ख्याल ज़रा भी नहीं । तुझे अपने वतन का न सोच दिला, तुझे अपने तो घर का फिकर ही नहीं ॥ फिरे अरसे से० ॥ ५ ॥ चलो जोतीस्वरूप वतन को दिला, परदेश से दिल को अपने हटा । कर हिम्मत कस कर बांधो कमर, फिर हटके जो आओ इधर ही नहीं ॥ फिरे अरसे से० ॥ ६ ॥

६९

(चार मत खंडन)

भज अरहन्तं भज अरहन्तं भज अरहन्तं भयहरणं॥ टेक॥

अब भूखों मर रहे हैं, दाना नहीं मुयस्सर । इक दिन कि देश था ये, गौहर फिसां हमारा ॥ इस फूट ने० ॥ ३ ॥
सातों विलायतों में, मशहूर होरहे थे । अब कौन जानता है नामो निशान हमारा ॥ इस फूट ने० ॥ ४ ॥
इल्मो हुनर में यक्ता, यह देश हो रहा था । चरचा था जा बजा ये, हर दो जुबां हमारा ॥ इस फूट ने० ॥ ५ ॥
अब पास क्या रहा है, हुए हैं तीन तेरह । वो लद गया खजाना, वो कारवां हमारा ॥ इस फूट ने० ॥ ६ ॥
भूलेंगे याद तेरी, हरगिज न फूट दिलसे । बरबाद कर दिया है, सब खानुमां हमारा ॥ इस फूट ने० ॥ ७ ॥
पन्ना तू बक रहा है, जाने जुनू में क्या क्या । आसान सब करेगा, वो महरवां हमारा ॥ इस फूट ने० ॥ ८ ॥

७३

(संसार की अनित्यता)

जरा तो सोच अय गाफिल, कि दमका क्या ठिकाना है।
निकल तन से गया चेतन, तो सब अपना बिगाना है ॥टेक॥
मुसाफिर तू है और दुनियां, सराय है भूल मत गाफिल।
सफर परलोक का आखिर, तुझे परदेश जाना है ॥
जरा तो सोच० ॥ १ ॥ लगाता है अबस दौलत पै, क्यों तू दिल को अब नाहक । न जावे संग कुछ हरगिज,

यहीं सब छोड़ जाना है ॥ जरा तो सोच० ॥ २ ॥
न भाई बंधु है कोई, न कोई आशना अपना ।
बखूबी गौर कर देखा, तो मतलब का जमाना है ॥
जरा तो सोच० ॥ ३ ॥
रहो नित याद में प्रभुकी, अगर अपनी शफा चाहो ।
अबस दुनियां के धंधों से, हुआ क्यों तू दिवाना है ॥
जरा तो सोच० ॥ ४ ॥

७४

(भजन वैरागी)

काल अचानक ले जायगा, गाफिल होकर रहना क्यारे॥टेक॥
छिनहू तोकूं नाहि बचावे, तो सुभटन का रखना क्यारे ।
काल अचानक० ॥ १ ॥ रंच सवाद करन के काजे,
नरकन में दुख भरना क्यारे ॥ कुलजन पथिकन के हित
काजे, जगत जालमें परना क्यारे । काल अचानक० ॥२॥
इन्द्रादि कोऊ नाहि बचावे, और लोकका शरना क्यारे ।
निश्चय हुआ जगत में मरना, कष्ट परे तो डरना क्यारे॥
काल अचानक० ॥ ३ ॥ अपना ध्यान करता खिरजावे,
तो करमन का हरना क्यारे । अब हित कर आलस तज बुध
जन, जन्म जन्म में जरना क्यारे॥ काल अचानक० ॥४॥

७५

(मारवाड़ी पञ्चायत का उपदेशक को जवाब)

फुरसत नहीं म्हनें ले हम एकरी, थे रस्ते लागो ॥ टेक ॥ थाका सिरसा ज्ञान सुणावा, अठै मोकला आवे । म्हाने नहीं फुरसत मरने की, आकर पाछे जावो जी ॥ थे रस्ते० ॥ १ ॥ म्हाने नहीं सुहावे थांकी वातां तुसज्यो रीती, किन वातांका करो सुधारा म्हें नही करां अनीती ॥ जी थे रस्ते लागो० ॥२॥ खाली वैठा थां लोगो ने निवरी वातां सूझे, जगह २ थे फिरो रचड़ता, पण नहीं कोई पूछे ॥ जी थे रस्ते लागो० ॥ ३ ॥ हुआ अनोखा मंडल वाला, नई चलावे चालां । म्हें नहीं त्यागी रीत वड़ांकी, चाल पुरानी चालां ॥ जी थे रस्ते लागो० ॥ ४ ॥ रुक्को थारो बांच लियो है, थे पाछे लेजावो । फेर अठै आवन के ताईं मत तकलीफ उठावो ॥ जी थे रस्ते लागो० ॥ ५ ॥

७६

(भजन उपदेशी)

प्यारो ज़रा विचारो, कहता जमाना क्या है ।
गफलत की नींद त्यागो, देखो जमाना क्या है ॥ टेक ॥
विद्या की धूम छाई, चहुं ओर मेरे भाई । विद्या विना तुम्हारा, जीना जिलाना क्या है ॥ प्यारे जरा विचारो० ॥ १ ॥

काले गंवार तुमको, विद्या बिना बताते । डूबी तुम्हारी इज्जत, तुमको ठिकाना क्या है ॥ प्यारो जरा० ॥ २ ॥ सन्तान किसकी तुमहो, पुरखा तुम्हारे कैसे । इतिहास कह रहा है, मेरा बताना क्या है ॥ प्यारे जरा० ॥ ३ ॥ शिक्षा अगर न दोगे, मूरख यों ही रहोगे । संतान होगी दुखिया, मेरा जताना क्या है ॥ प्यारे० ॥ ४ ॥ विद्या के जो हितेच्छू उनके बनो सहाई । नुक्तों में द्रव्य प्यारो, विरथा लगाना क्या है ॥ प्यारो जरा विचारो० ॥ ५ ॥ उठके कमर कसो अब, विद्या का चौक बांधो, भारत चमन खिले तब । सोना सुलाना क्या है ॥ प्यारे जरा विचारो० ॥ ६ ॥

७७

(भजन उपदेशी)

उठाके आंख अब देखो, ज़माना कैसा आया है । संभालो देशकी हालत, अंधेरा कैसा छाया है ॥ टेक ॥ मेरे प्यारो अब विचारो, अब दरिद्री होगया भारत । गई विद्या कला कौशल, धर्म भी सब भुलाया है ॥ उठाके आंख० ॥ १ ॥ ज़माना एक था यहां पर, मिले था अन्न भरका । तुम्हीं देखो अकालों ने, हमें आ आ सताया है ॥ उठाके० ॥ २ ॥ शरीरों से गई ताक़त, परिश्रम है नहीं हममें । गई हिम्मत की सब बातें, पड़ा रहना सुहाया है ॥

उठा के० ॥ ३ ॥ कहूं कबतक विपत कहानी, मेरे प्यारे तुम्हीं देखो। जगादे जोती विद्या की भला इसमें समाया है ॥ उठाके० ॥ ४ ॥

७८

(भजन उपदेशी)

दुनिया में देखो सैंकड़ों आये चले गये, सब अपनी करामात दिखाये चले गये ॥ टेक ॥

अर्जुन रहा न भीम, न रावन महाबली। इस काल बली से सभी हारे चले गये ॥ दुनिया में० ॥ १ ॥

क्या निर्धनो गुणवन्त व मूर्खो धनवन्त। सब अन्त समय हाथ पसारे चले गये ॥ दुनिया में देखो० ॥ २ ॥

सब जन्त्र मन्त्र रह गये कोई बचा नहीं। इक वह बचे जो कर्म को मारे चले गये ॥ दुनिया में देखो० ॥ ३ ॥

सम्यक्त धार न्यामत, नहीं दिलमें समझले। पछतायगा जो प्राण तुम्हारे चले गये ॥ दुनिया में देखो० ॥ ४ ॥

७९

(विनती पं० भूधरदास कृत)

पुलकन्त नयन चकोर पक्षी हसत उर इन्दीवरो, दुर्बुद्धी चकवी विछुर विलखे निबड़ मिथ्यातम हरो। आनन्द अम्बुज उमंगि उछरयो अखिल आतम निरदले, जिन-

वदन पूरनचन्द्र निरखे सकल मनवांछित फलं ॥ १ ॥
मुझ आज आतम भयो पावन आज विघ्न विनाशिया,
संसार सागर नीर निवऱ्यो अखिल तत्व प्रकाशिया।
अब भई कमला किंकरी मुझ उभय भव निर्मल ठये, दुख
जरो दुर्गति वास निवऱ्यो आज नव मंगल भये ॥ २ ॥
मन हरण मूरति हेर प्रभु की कौन उपमा लाइये, मम
सकल तन के रोम हुलसे हर्ष और न पाइये। कल्याण
काल प्रत्यक्ष प्रभु लखि कौन उपमा लाइये, मम सकल
तन में भये आनंद हर्ष उर न समाइये ॥ ३ ॥
भर नयन निरखैं नाथ तुमको और वांछा ना रही, मम
सब मनोरथ भये पूरन रंक मानो निधि लई। अब होउ
भव भव भक्ति तेरी कृपा ऐसी कीजिये, कर जोड़ भूधर-
दास विनवै यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥

८०

(विनती पं भागचंदजी कृत)

दोहा—सिद्धारथ प्रियकारणी, नंदन वीर जिनेश।
शिव कर वंदूं अमित गति, कर्ता वृष उपदेश॥१॥

(पञ्चपरमेष्टी की स्तुति) गीताछंद

मनुज नाग सुरेन्द्र जाके ऊपरि छत्र त्रय धरें, कल्याण
पञ्चकमोद माला पाय भव भ्रम तम हरे। दर्शन अनंत

अनंत ज्ञान अनंत सुख वीरज भरे, जयवंत ते अरहन्त शिवतिय कन्त मो उर संचरे ॥ १ ॥ जिन परम ध्यान कृशाऽनुवान सुतान तुरत जला दये, युतमान जन्म जरा-मरण मय त्रिपुर फेर नहीं भये । अविचल शिवालय धाम पायो स्वगुणतें न चलें कदा, ते सिद्ध प्रभु अविरुद्ध मेरे शुद्ध ज्ञान करो सदा ॥ २ ॥ जे पञ्च विधि आचार निर्मल, पञ्च अग्नि सुसाधते । पुनि द्वादशांग समुद्र अव-गाहत सकल भ्रम बाधते, वरसूर सन्त महन्त विधिगण हरण को अति दक्ष है । ते मोक्ष लक्ष्मी देहु हमको जहां नाहि विपक्ष है ॥ ३ ॥ जो घोर भव कानन कुअटवी पाप पञ्चानन जहां, तीक्षण सकल जन दुखकारी जासको नखगण महा, तहां भ्रमत भूले जीवकों शिव मग बतावें जे सदां, तिन उपाध्याय मुनिंद्र के चरणारविन्द नमूं सदां ॥ ४ ॥ जिन संग उग्र अभंग तपतें अंगमें अति खीन हैं, नहिं हीन ज्ञानानंद ध्यावत धर्म शुक्ल प्रवीन हैं, अति तपो कमला कलित भासुर सिद्ध पद साधन करें, ते साधु जयवन्तो सदां जे जगत के पातिक हरें ॥ ५ ॥

८२

(वीनती सकल)

दोहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानंद रसलीन ॥१॥
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरिरज रहस विहीन ॥

पद्धरी छंद—जय वीत राग विज्ञान पूर, जय मोह तिमिर को हरन सूर । जय ज्ञान अनंतानंत धार, दृग सुख वीरज मंडित अपार ॥ २ ॥ जय परम शान्त मुद्रा समेत, भविजन को निज अनुभूत हेत । भवि भागन वच जोगे वशाय, तुम धुनि सुनि विभ्रम नशाया ॥ ३ ॥ तुम गुण चिन्तत निज पर विवेक, प्रगटैं विघटैं आपद अनेक । तुम जग भूषण दूषण वियुक्त, सब महिमा युक्त विकल्प मुक्त ॥ ४ ॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप, परमात्मा परम पावन अनूप । शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परणतिमय अछीन ॥ ५ ॥ अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्वचतुष्टय मय राजत गम्भीर । मुनि गनधरादि सेवत महन्त, नव केवल लब्धि रमा धरन्त ॥ ६ ॥ तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जांहि जैहैं सदीव । भवसागर में दुख छार वार, तारन को और न आप टार ॥७॥ यह लखि निज दुख गद हरण काज, तुमही निमित्त कारण इलाज । जाने ताते मैं शरण आय, उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥ ८ ॥ मैं भ्रम्यो अपन पो विसरि आप, अपनाये विधि फल पुन्य पाप । निज को पर को करता पिछान, परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥ ९ ॥ आकुलित भयो अज्ञान धार, ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वार । तन परणति में आपो चितार, कबहूं न अनुभयो स्वपद

सार ॥ १० ॥ तुमको विन जाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश । पशु नारक नर सुरगति मंझार, भव धरि धरि मरयो अनंत वार ॥ ११ ॥ अब काल लब्धि बलतें दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल । मन शान्त भयो मिट सकल द्वंद, चाख्यो स्वातम रस दुख निकंद ॥ १२ ॥ तातें अब ऐसी करो नाथ, विछुरैं न कभी तुम चरण साथ । तम गुण गणको नहीं छेवदेव, जग तारन को तुम विरद एव ॥ १३ ॥ आतम के अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परणति न जाय । मैं रहों आप में आप लीन, शिव करों होंउ ज्यों निजाधीन ॥ १४ ॥ मेरे न चाह कुछ और ईश, रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश । मुझ कारज के कारण जु आप, शिव करो हरो मम मोह ताप ॥ १५ ॥ शशि शान्त करण तप हरन हेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत । पीवत पीयूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभव तें भव नशाय ॥ १८ ॥ त्रिभुवन तिहुं-काल मझार कोय, नहिं तुम विन निज सुखदाय होय । मो उर निश्चै यह भयो आज, दुख जलधि उतारन तुम जिहाज ॥ १९ ॥

दोहा—तुम गुण गण मणि गणपती, गणत न पावे पार ।
दौल स्वल्प मति किम कहैं, नमूं त्रियोग समार ॥२०

८३

(वीनती)

प्रभु पतित पावन मैं अपावन चरण आयो शरण जी,
यह विरद आप निहार स्वामी मेटो जामन मरन जी।
तुम ना पिछाना आन मान्या देव विविध प्रकार जी,
या बुद्धि सेती निज न जाना भ्रम गिना हितकारजी ॥१॥
भव विकट वनमें कर्म वैरी ज्ञान धन मेरा हर्यो,
तव इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय अनिष्ट गति धरतो फिर्यो।
धन घड़ी यो धन दिवस योही धन जन्म मेरो भयो,
अब भाग मेरो उदय आयो दरश प्रभुको लखि लियो ॥२॥
छवि वीतरागी नगन मुद्रा दृष्टि नासा पै धर्यो,
वसु प्रातिहार्य्य अनंतगुण जुत कोटि रवि छविको हरैं।
मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो उदय रवि आतम भयो,
मो उर हरष ऐसो भयो मानो रंक चिन्तामणि लयो ॥३॥
मैं हाथ जोड़ नमाय मस्तक वीनऊं तुम चरण जी,
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोक पति जिन सुनो तारन तरन जी।
जाचूं नहीं सुखास पुनि नरराज परिजन साथ जी,
बुध जाचहूं तुम भक्ति भव भव दीजिये शिवनाथ जी ॥४॥

८४

(अर्हन्त देव से पुकार)

नाथ सुधि लीजै जी म्हारी, मोहि भव भव दुखिया जान के सुधि लीजो जी म्हारी ॥ टेक ॥ तीन लोक के स्वामी नामी तुम त्रिभुवन दुखहारी । गनधरादि तुम शरन लई, लखि लीनी शरन तुम्हारी ॥ नाथ सुधि लीजो० ॥१॥ जो विधि अरी करी हमरी गति सो तुम जानत सारी, याद किये दुख होत हिये बिच लागत कोट कटारी ॥ नाथ सु० ॥ २ ॥ लब्धि अपर्यापत निगोद में, एकहि स्वास मंझारी । जनम मरन नव दुगुन विथा की कथा न जात उचारी ॥ नाथ सुधि० ॥ ३ ॥ भूजल ज्वलन पवन प्रत्येक तरु, विकल त्रय दुख भारी । पञ्चेंद्री पशू नारक नर सुर विपति भरी भयकारी ॥ नाथ सुधि० ॥४॥ मोह महारिपु नें न सुखमई हौंन दई सुधि थारी । ते दुठ मंद होत भागन ते पाये तुम जगतारी ॥ नाथ सुधि० ॥५॥ यदपि विराग तदपि तुम शिव मग सहज प्रगट करतारी, ज्यों रवि किरन सहज मग दर्शक, यह निमित अनिवारी ॥ नाथ सुधि० ॥ ६ ॥ नाग छाग गज वाघ भील दुठ तारे अधम उधारी, शीश निवाय पुकारत अबके दौल अधम की वारी ॥ नाथ सुधि० ॥ ७ ॥

८५

(२४ भगवान स्तुति)

करो मिल वंदे वीरम् गान ॥ टेक ॥ आदि अजित संभव अभिनंदन, सुमति नाथ भगवान । पद्म सुपार्श्वचंदा प्रभु स्वामी, चमकत चन्द्र समान ॥ करो मिल० ॥ १ ॥ पुष्पदन्त शीतल जग नायक, तारक सकल जहान । श्री श्रेयांस प्रभु श्रेय करें नित, देय हमें शुभ ज्ञान ॥ करो मिल वंदे० ॥ २ ॥ वास पूज्य प्रभु विमल अनंतः, धर्म्म शान्ति की खान । कुंथ कंथ हो शिव रमणी के, पाया शुभ निर्वाण ॥ करो मिल० ॥ ३ ॥ अरह माहेव स्वामी मुनि सुव्रत, व्रत तप जपकी खान, नमि नेम प्रभु पार्श्वनाथ जी, महावीर गुणवान ॥ करो मिल० ॥ ४ ॥ ये चौवीसों वीर जिनेश्वर, इनका नित प्रति गान । सुख दायक शुभ शान्त प्रदायक, मेटत दुख अज्ञान ॥ करो मिल वंदे वीरम गान ॥ ५ ॥

॥ इति भजन रत्नाकर समाप्त ॥

श्री पद्म
जिनवाणी संग्रह

संग्रहकर्ता

मा० गोपीचन्द जैन
जयपुरवाला

प्रकाशकः—
मा० गोपीचन्द
जयपुर वाला

प्रथम संस्करण
१९४६,

मूल्य
एक रुपया

मुद्रकः—
कपूरचन्द जैन
दी सरस्वती प्रिन्टर्स लिमिटेड
जयपुर।

श्री

पद्म जिनवाणी संग्रह
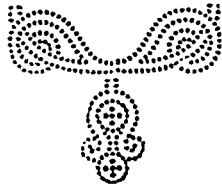
संग्रहकर्ता: —

मा० गोपीचन्द जैन

जयपुर निवासी

प्रथम वार २००० | वि० सम्वत् २४७१, | मूल्य १)

अपनी बात

श्री पद्मप्रभु के प्रगट होने से जैन समाज में कुछ भक्ति का रस भर गया है। लोग पूजन के लिये इच्छुक होते जा रहे हैं, लेकिन अब तक ऐसी कोई पुस्तक आपके समक्ष प्रकाशित नहीं हुई है जिससे कि मनुष्य को एक ही पुस्तक में सब सामग्री मिल सके। उसीकी पूर्ति के लिये श्री पद्म जिनवाणी संग्रह प्रकाशित किया गया है। इसमें नवीन रागों पर भजन, नित्यनियम पूजा, विनती, मेरी भावना, आरती भक्तामर, स्तोत्र आदि संग्रह किये गए हैं। साधारण से आदमी के लिये भी यह एक सरल, सुविधा जनक चीज़ सिद्ध होगी। यदि भक्तों ने इसे प्रेम की दृष्टि से अपनाया तो मैं अपना अहोभाग्य समझूँगा।

मास्टर गोपीचन्द जैन,

जयपुर वाला।

विषय सूची

पद्म

जिनवाणी संग्रह

पहिला अध्याय।

णमोकार मंत्र।

णमो अर्हंतताणं, णमोसिद्धाणं णमो आइरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥
अर्हंतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः।

दर्शनपाठ ।

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो सरन जी। यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरनजी । तुम नापिछान्या आन मान्या, देव विविधप्रकारजी । या बुद्धिसेती निज न जाण्यो, भ्रम गिण्यो हितकारजी ॥१॥ भवविकटवनमें करम वैरी, ज्ञानधन मेरो हरचो । तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्टगति धरतो फिरचो ॥ धन घड़ी यो धन दिन यो ही, धन जनम मेरो भयो। अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लखलयो ॥२॥ छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासापै धरैं। वसु प्रातिहार्य अनंत गुण जुत, कोटि रवि छविको हरैं ॥ मिटगयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदयरवि आतम भयो । मो हरप उर ऐसो भयो, मनु रंक चिंतामणि लयो ॥३॥ मैं हाथ जोड नवाय मस्तक, वीनऊँ

तुव चरन जी । सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन तरनजी ॥ जाचूँ नहीं सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथ जी । बुध जाचहूँ तुव भक्ति भव भव दीजिये शिवनाथजी ॥इति॥

आलोचना पाठ ।

यह आलोचना पाठ सामायिक कालमें प्रथमकर्म प्रतिक्रमण कर्म है इस कर्मके आदि वा अन्तमें बोलना चाहिए ।

दोहा—वंदों पांचो परमगुरु, चौवीसों जिनराज ।
करूँ शुद्ध आलोचना, शुद्धिकरनके काज ॥१॥

सखी छंद चौदह मात्रा ।

सुनिये जिन अरज हमारी । हम दोष किये अति भारी ॥ तिनकी अब निर्वृत्ति काज । तुम सरन लही जिनराज ॥२॥ इक वे ते चउ इंद्री वा । मनरहित सहित जे जीवा ॥ तिनकी नहिं करुणा धारी । निरदई ह्वै घात विचारी ॥३॥ समरंभ समारंभ आरंभ । मन-

वचतन कीने प्रारंभ । कृत कारित मोदन
करिकैं । क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं ॥४॥ शत
आठ जु इमि भेदनतैं ॥ अघ कीने
परछेदनतैं तिनकी कहुं कोलों कहानी ।
तुम जानत केवल ज्ञानी ।५॥ विपरीत
एकांत विनयके । संशय अज्ञान कुनयके ॥
वश होय घोर अघ कीने । वचतें नहिं जाय
कहीने ॥६॥ कुगुरनकी सेवा कीनी । केवल
अदयाकरि भीनी । याविधि मिथ्यात भ्रमायो ।
चहुँगति मधि दोष उपायो ।७॥ हिंसा पुनि
झूठ जु चोरी । परवनितासो दृग जोरी ॥
आरंभपरिग्रह भीनो । पनपाप जु या विधि
कीनो ।८। सपरस रसना घ्राननको । चखु
कान विषयसेवनको ॥ बहु करम किये मन-
मानी । कछु न्याय अन्याय न जानी ॥६॥
फल पंच उदंवर खाये । मधु मांस मद्य चित-
चाहे ॥ नहिं अष्टमूलगुणधारी । विसन न सेये

दुखकारी ॥१०॥ दुइवीस अभख जिनगाये। सो भी निसदिन भुंजाये॥ कछु भेदाभेद न पायो। ज्यों त्योंकरि उदर भरायो ॥११॥ अनंतानु जु बंधी जानो। प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो॥ संज्वालन चौकरी गुनिये। सब भेद जु षोडश मुनिये ॥१२॥ परिहास अरतिरति शोग। भय ग्लानि तिवेद संजोग॥ पनवीस जु भेद भये इम। इनके वश पाप किये हम ॥१३॥ निद्रावश शयन कराई। सुपनेमधिदोष लगाई। फिर जागि विषयवन धायो। नानाविध विषफल खायो ॥१४॥ कियेऽहार निहार विहारा। इनमें नहिं जतन विचारा॥ विन देखी धरी उठाई। विन शोधी वस्तु जु खाई ॥१५॥ तब ही परमाद सतायो। वहुविधि विकलप उपजायो॥ कछु सुधिबुधि नाहिं रही है। मिथ्यामतिछाय गयी है ॥१६॥ मरजादा तुमढिंग लीनी। ताहूमें

दोष जु कीनी॥ भिन भिन अब कैसें कहिये। तुम ज्ञानविषै सब पइये ॥१७॥ हा हा! मैं दुष्ट अपराधी। त्रसजीवनराशि विराधी॥ थावर की जतन न कीनी। उरमें करुना नहिं लीनी ॥१८॥ पृथिवी बहु खोद कराई। महलादिक जागां चिनाई॥ पुनि विनगाल्यो जल ढोल्यो। पंखा तैं पवन विलोल्यो ॥१९॥ हा हा! मैं अदयाचारी। बहु हरितकाय जु विदारी॥ तामधि जीवन के खंदा। हम खाये धरि अनंदा ॥२०॥ हा हा! परमाद बसाई। विन देखे अगनि जलाई॥ तामधि जे जीव जु आये। ते परलोक सिधाये ॥२१॥ बींध्यो अनराति पिसायो। ईंधन विन सोधि जलायो॥ झाड़ूले जागां बुहारी। चिंवटी आदिक जीव विदारी ॥२२॥ जल छानि जिवानी कीनी। सोहू पुनि डारि जु दीनी॥ नहिं जलथानक पहुंचाई। किरिया विन पाप उपाई ॥२३॥ जल

मत्त मोरिन गिरवायो। कृमिकुल बहु घात करायो॥ नदियन बिच चीर धुवाये। कोसन के जीव मराये॥२४॥ अन्नादिक शोध कराई। तामैं जु जीव निसराई॥ तिनका नहिं जतन कराया। गरियालैं धूप डराया॥२५॥ पुनि द्रव्य कमावन काज। बहु आरंभ हिंसा साज कीये तिसनावश भारी। करुना नहिं रंच विचारी॥२६॥ ताको जु उदय अब आयो। नानाविध मोहि सतायो॥ फल भुञ्जत जिय-दुख पावै। वचतैं कैसें करि गावै॥२७॥ तुमजानत केवलज्ञानी। दुख दूर करो शिव-थानी॥ हम तो तुम शरण लही है। जिन तारनविरद सही है॥२८॥ जो गावपती इक होवै। सो भी दुखिया दुख खोवै॥ तुम तीन-भुवन के स्वामी। दुख मेटहु अंतरजामी॥२९॥ द्रोपदिको चीर बढाया। सीताप्रति कमल रचायो॥ अञ्जनसे किये अकामी। दुख मेट्यो

अंतरजामी ॥३०॥ मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो सम्हारो ॥ सब दोषरहित करि स्वामी। दुख मेटहु अंतरजामी ॥३१॥ इंद्रादिक पदवी न चाहूँ। विषयनिमें नाहिं लुभाऊँ ॥ रागादिक दोष हरीजै, परमातम निजपद दीजै ॥३०॥

दोहा—दोषरहित जिन देवजी, निजपद दीज्यो मोय।
सब जीवनके सुख बढ़ै, आनंद मंगल होय ॥
अनुभव माणिक पारखी, 'जौंहरी' आप जिनंद।
ये ही वर मोहि दीजिये, चरनशरन आनंद ॥इति॥

स्वरूप स्तुति।

श्रीपति जिनवर करुणायतनं. दुख हरन तुमारा बाना है। मत मेरी बार अबार करो, मोहि देहु विमल कल्याना है ॥टेक॥ त्रैकालिक वस्तु प्रत्यक्ष लखो, तुमसौं कछु बात न छाना है। मेरे उर आरत जो वरतैं, निहचै सब सौ तुम जाना है ॥ अवलोक विथा मत मौन गहो, नहिं मेरा कहीं ठिकाना है। हो राजिवलोचन सोचविमोचन, मैं तुमसौं हित ठाना है ॥ श्री० ॥ सब ग्रन्थनिमें

निरग्रन्थनिते, निरधार यही गणधार कही। जिननायक ही सब लायक हैं, सुखदायक छायक ज्ञानमही॥ यह बात हमारे कान परी तब आन तुमारी सरन गही। क्यों मेरी बार विलंब करो, जिननाथ कहो वह बात सही॥ श्री०॥ २॥ काहूको भोग मनोग करो, काहूको स्वर्गविमाना है। काहूको नागनरेशपती, काहूको ऋद्धि निधाना है। अब मोपर क्यों न कृपा करते, यह क्या अन्धेर जमाना है। इनसाफ करो मत देर करो, सुख वृन्दभरो भगवाना है॥ श्री०॥ ३॥ खल कर्म मुझे हैरान किया, तब तुमसों आन पुकारा है। तुम ही समरत्थ न न्याव करो, तब बन्देका क्या चारा है। खल घालक पालक बालकका नृपनीति यही जगसारा है। तुम नीतिनिपुन त्रैलोकपती, तुमही लगि दौर हमारा है॥ श्री०॥ ४॥ जबसे तुमसे पहिचान भई, तबसे तुमहीको माना है। तुमरे ही शासनका स्वामी, हमको शरना सरधाना है॥ जिनको तुमरी शरनागत है, तिनसों जमराज डराना है। यह सुजस तुम्हारे सांचेका सब गावत वेद पुराना है॥ श्री०॥ ५॥ जिसने तुमसे दिलदर्द कहा तिसका तुमने दुख हाना है। अघ छोटा मोटा नाशि तुरत सुख दिया तिन्हें मनमाना है॥ पावकसों शीतल नीर किया औ चीर चढ़ा असमाना है।

भोजन था जिसके पास नहीं सो किया कुबेर समाना है ॥ श्री० ॥ ६ ॥ चिंतामन पारस कल्पतरू सुखदायक ये परधाना है। तव दासनके सब दास यही हमरे मनमें ठहराना हैं ॥ तुम भक्तनको सुरइंदपदी फिर चक्रवतीपद पाना हैं। क्या बात कहौं विस्तार बड़ी वे पावैं मुक्ति ठिकाना है ॥ श्री० ॥ ७ ॥ गति चार चुरासी लाखविषैं चिन्मूरत मेरा भटका है। हो दीनबन्धु करुणानिधान अबलों न मिटा वह खटका है। जब जोग मिला शिव-साधनका तब विघन कर्मने हटका है। तुम विघन हमारे दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है ॥ श्री० ॥ ८ ॥ गजग्राहग्रसित उद्धार लिया, ज्यों अञ्जन तस्कर तारा है। ज्यों सागर गोपदरूप किया। मैनाका संकट टारा है ॥ ज्यों शूलीतें सिंहासन औ बेडीको काट विडारा है। त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोकूं आस तुम्हारा है ॥श्री०॥ ९ ॥ ज्यों फाटक टेकत पांय खुला औ सांप सुमन कर डारा है। ज्यों खड्ग कुसुमका माल किया। बालकका जहर उतारा है ॥ ज्यों सेठ विपत चकचूर पूर घर लक्ष्मीसुख विस्तारा हैं। त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोकूं आस तुम्हारा है ॥ श्री० ॥ १० ॥ यद्यपि तुमको रागादि नहीं यह सत्य सर्वथा जाना है। चिन्मूरति आप अनंतगुनी नित शुद्धदशा शिवथाना है यद्यपि भक्तनकी

भीड हरो सुखदेत तिन्हे जु शुहाना है । यह शक्ति अचिंत तुम्हारीका क्या पावै पार सयाना है ॥श्री०॥११॥ दुख-खंडन श्रीसुखमंडनका तुमरा प्रन परम प्रमाना है। वरदान दया जस कीरतका तिहुं लोकधुजा फहराना है ॥ कमलाधरजी ! कमलाकरजी, करिये कमला अमलाना है। अब मेरी विथा अवलोकि रमापति रंच न बार लगाना है ॥श्री०॥१२॥ हो दीनानाथ अनाथ हितू, जन दीन अनाथ पुकारी है। उदयागत कर्मविपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है ॥ ज्यों आप और भवि जीवनकी, ततकाल विथा निरवारी है। त्यों 'वृन्दावन' यह अर्ज करै, प्रभु आज हमारी बारी है ॥ १३ ॥

भक्तामर स्तोत्र ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं दलित-तपापतमोवितानं । सम्यक् प्रणम्य जिनपाद-युगंयुगादा-वालंबनं भवजले पततां जनानां ॥१॥ यः संस्तुतःसकलवाङ्मय तत्त्वबोधादुद्भूत बुद्धिपटुभिःसुरलोकनाथैः । स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-

र्विगतहरैरुदारैः, स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेंद्रं ॥२॥ बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपाद-पीठस्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहं । बालं विहाय जलसंस्थित मिंदुबिंबमन्यः क इच्छति जन सहसा गृहीतुं ॥३॥ वक्तुं गुणान्गुणसमुद्र शशांककांतान् कस्ते क्षमः सुर गुरुप्रतिमोऽपिबुद्ध्या । कल्पांतकालपवनोद्धतनक्रचक्रं को वा तरीतुमलमंबुनिधिं भुजाभ्यां ॥४॥ सोहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश, कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः । प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगी मृगेंद्रं, नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थं ॥५॥ अल्प श्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम, त्वद्भक्ति रेव मुखरीकुरुते बलान्मां । यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति, तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतु ॥६॥ त्वत्संस्तवेन भवसंततिसन्निबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजां । आक्रांतलोकमलिनीलमशेषमाशु,

सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वमंधकारं ॥७॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेदमारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् । चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु, मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिंदुः ॥८॥ आस्तां तवस्तवनमस्तसमस्तदोषं, त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हंति । दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव, पद्माकरेषु जलजानि विकास-भांजि ॥९॥ नात्यद्भुतं भुवनभूषण भूतनाथ ! भूतैर्गुणैर्भुवि भवंतमभिष्टुवंतः । तुल्या भवति भवता ननु तेन किंवा, भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥ दृष्ट्वा भवंतमनिमेष-विलोकनीयं, नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिंधोः क्षारं जलं जलनिधे रसितुं क इच्छेत् ॥११॥ यैः शांतरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं निर्मापितः स्त्रिभुवनैक ललामभूत । तावंत एव खलु तेप्यणवः पृथिव्यां यत्ते समानमपरं न हि

रूपमस्ति ॥१२॥ वक्त्रंक्वते सुरनरोरगनेत्रहारि, निश्शेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानं । विंबं कलंकमलिनं क निशाकरस्य, यद्वासरे भवतिपांडुपलाशकल्पं ॥१३॥ संपूर्ण मंडलशशांककलाकलाप-शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लंघयंति । ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं । कस्तान्निवारयति संचतरो यथेष्टं ॥१४॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभिर्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गं। कल्पांतकालमरुता चलिताचलेन, किं मंदराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥ नधूंम वर्तिरपवर्जिततैलपूरः, कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रगटीकरोषि । गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलाना दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥१६॥ नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगंति। नांभोधरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः सूर्यातिशायि महिमासि मुनींद्र लोके ॥१७॥ नित्योदयं

दलितमोहमहांधकारं, गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानां। विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकांति, विद्योतयज्जगदपूर्वशशांकबिंबं ॥१८॥
किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा, युष्मन्मुखेंदुदलितेषु तमस्सु नाथ। निष्पन्न शालिवनशालिनि जीवलोके, कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं, नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु। तेजःस्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं, नैवं तु काचशकले किरणाकुलेपि ॥२०॥
मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति। किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति नाथ भवांतरेपि ॥२१॥ स्त्रीणां शतानि शतसो जनयंति पुत्रान्, नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता। सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं, प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालं ॥ २२ ॥

त्वामामनंति मुनयः परमं पुमांसमादित्यवर्ण-
ममलं तमसः पुरस्तात् । त्वामेव सम्यगुपलभ्य
जयंति मृत्युं, नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनींद्र
पंथाः ॥२३॥ त्वामव्ययं विभुमचिंत्यमसंख्य-
माद्यं, ब्रमाणमीश्वरमनंतमनंगकेतुं । योगी-
श्वरं विदितयोगमनेकमेकं, ज्ञानस्वरूपममलं
प्रवदंति संतः ॥२४॥ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-
बुद्धिबोधात्, त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकर-
त्वात् । धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोसि ॥२५॥ तुभ्यं
नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ, तुभ्यं नमः क्षिति-
तलामलभूषणाय । तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमे-
श्वराय, तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशोषणाय ॥२६॥
को विस्मयोत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो
निरवकाशतया मुनीश । दोषैरुपात्तविविधा-
श्रयजातगर्वैः स्वप्नांतरेपि न कदाचिदपीक्षि-
तोसि ॥२७॥ उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूख-

माभाति रूपममलं भवतो नितांतं। स्पष्टोल्ल-
सत्किरणमस्ततमोवितानं, विंबं रवेरिवपयो-
धरपार्श्ववर्ति ॥२८॥ सिंहासने मणिमयूख-
शिखाविचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकाव-
दातं। विंबं वियद्विलसदंशुलतावितानं तुंगो-
दयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥ कुंदाव-
दातचलचामरचारुशोभं, विभ्राजते तव वपुः
कलधौतकांतं। उद्यच्छशांकशुचिनिर्झरवारि-
धारमुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौंभं ॥३०॥
छत्रत्रयं तव विभाति शशांककांतमुच्चैस्थितं
स्थगितभानुकरप्रतापं। मुक्ताफलप्रकरजाल-
विवृद्धशोभं, प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वं
॥ ३१ ॥ गंभीरताररवपूरितदिग्विभागस्त्रैलो-
क्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः। सद्धर्मराजजय-
घोषणघोषकः सन्, खे दुंदुभिर्ध्वनति ते
यशसः प्रवादी ३२ ॥ मंदारसुंदरनमेरुसु-
पारिजातसंतानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा। ग-

न्धोदबिंदुशुभमंदमरुत्प्रयाता, दिव्यादिवः पतति ते वयसां ततिर्वा ॥ ३३ ॥ शुंभत्प्रभावलय-भूरिविभा विभोस्ते, लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपंती । प्रोद्यद्दिवाकरनिरंतरभूरि-संख्या, दीप्त्याजयत्यपि निशामपि सोमसौम्यां ॥३४॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः, सद्धर्म-तत्त्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्याः । दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थ सर्व भाषास्वभावपरिणामगुणैः प्रयोज्यः ॥ ३५ ॥ उन्निद्रहेमनवपंकजपुंज-कांती, पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ । पादौ पदानि तव यत्र जिनेंद्र ! धत्तः पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयंति ॥३६॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेंद्र, धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य । यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतां-धकारा तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोपि ॥३७॥ श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूल-मत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपं । ऐरावताभमि-

भमुद्धतमापतंतं, दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानां ॥३८॥ भिन्नेभकुंभगलदुज्ज्वलशोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः । बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि, नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥ ३९ ॥ कल्पांतकालपवनोद्धतवह्निकल्पं, दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंगं । विश्वं जिघित्सुमिव संमुखमापतंतं, त्वन्नामकीर्त्तनजलं शमयत्यशेषं ॥४०॥ रक्तेक्षणं समदकोकिलकंठनीलं, क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतंतं । आक्रामति क्रमयुगेण निरस्तशंकस्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥ ४१ ॥ वल्गत्तुरंगगजगर्जितभीमनादमाजौ बलं बलवतामपि भूपतीनां । उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं, त्वत्कीर्त्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥ ४२ ॥ कुंताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाहवेगावतारतरणातुरयोधभीमे । युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्, त्वत्पादपंकजवनाश्रयिणो लभंते ॥ ४३ ॥ अंभोनिधौ

क्षुभितभीषणनक्रचक्र पाठीनपीठभयदोल्ब-
णवाडवाग्नौ । रंगत्तरंगशिखरस्थितयानपा-
त्रास् त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजंति
॥ ४४ ॥ उद्भूत भीषणजलोदरभारभुग्नाः
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ।
त्वत्पादपंकजरजोमृतदिग्धदेहा, मर्त्या भवंति
मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४५ ॥ आपादकंठमुरु-
शृंखल वेष्टितांगा, गाढं बृहन्निगडकोटिनि-
घृष्टजंघाः त्वन्नाममंत्रमनिशं मनुजाः स्मरंतः
सद्यः स्वयं विगतबंधभया भवंति ॥ ४६ ॥
मत्तद्विपेंद्रमृगराजदवानलाहिसंग्रामवारिधिमहो-
दरबंधनोत्थं । तस्याशु नाशमुपयाति भयं
भियेव, यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४७
स्तोत्रस्रजं तव जिनेंद्र गुणैर्निबद्धां, भक्त्या
मया विविधवर्णविचित्रपुष्पां । धत्ते जनो य
इह कंठगतामजस्रं तं मानतुंगमवशा समु-
पैति लक्ष्मीः ॥ ४८ ॥

इति श्रीमानतुंगाचार्य विरचितमादिनाथस्तोत्रं समाप्तम् ॥

मेरी भावना

जिसने रागद्वेष कामादिक जीते,
सब जग जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का,
निस्पृह हो उपदेश दिया ॥१॥
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा,
या उसको स्वाधीन कहो ।
भक्तिभाव से प्रेरित हो,
यह चित्त उसी में लीन रहो ॥२॥
विषयों की आशा नहिं जिनके,
साम्यभाव धन रखते हैं ।
निजपर के हित साधन में जो,
निशदिन तत्पर रहते हैं ॥३॥
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या,
बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के,
दुख: समूह को हरते हैं ॥४॥
रहे सदा सत्संग उन्हीं का,
ध्यान उन्हीं का नित्य रहे ।
उन्हीं जैसी चर्या में,

यह चित्त सदा अनुरक्त रहे ॥५॥

नहीं सताऊँ किसी जीव को,

झूठ कभी नहिं कहा करूँ।

परधन वनिता पर न लुभाऊँ,

संतोषामृत पिया करूँ ॥६॥

अहंकार का भाव न रक्खूं,

नहीं किसी पर क्रोध करूँ।

देख दूसरों की बढ़ती को,

कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ ॥७॥

रहे भावना ऐसी मेरी,

सरल सत्य व्यवहार करूँ।

बने जहाँ तक इस जीवन में,

औरों का उपकार करूँ ॥८॥

मैत्री भाव जगत में मेरा,

सब जीवों से नित्य रहे।

दीन दुःखी जीवों पर मेरे,

उर से करुणा स्रोत बहे ॥९॥

दुर्जन क्रूर कुमार्गरतों पर,

क्षोभ नहीं मुझको आवे।

साम्यभाव रक्खूं मैं उन पर,

ऐसी परणति हो जावे ॥१०॥

गुणी जनों को देख हृदय में,

मेरे प्रेम उमड़ आवे
बने जहाँ तक उनकी सेवा,
करके यह मन सुख पावे ॥११॥
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं,
द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित,
दृष्टि न दोषों पर जावे ॥१२॥
कोई बुरा कहो या अच्छा,
लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखों वर्षों तक जीऊँ,
या मृत्यु आज ही आजावे ॥१३॥
अथवा कोई कैसा ही भय,
या लालच देने आवे ।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा,
कभी न पद डिगने पावे ॥१४॥
होकर सुख में मग्न न फूले,
दुःख में कभी न घबरावे ।
पर्वत नदी श्मशान भयानक,
अटवी से नहीं भय खावे ॥१५॥
रहे अडोल अकंप निरंतर,
यह मन दृढ़तर बन जावे ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में,
सहनशीलता दिखलावे ॥१६॥
सुखी रहें सब जीव जगत के,
कोई कभी न घबरावे ।

बैर पाप अभिमान छोड़,
जग नित्य नये मङ्गल गावे ॥१७॥
घर घर चर्चा रहे धर्म की,
दुष्कृत दुष्कर हो जावें ।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना,
मनुज जन्म फल सब पावें ॥१८॥
ईति भीति व्यापे नहीं जग में,
वृष्टि समय पर हुआ करे ।
धर्मनिष्ट होकर राजा भी,
न्याय प्रजा का किया करे ॥१९॥
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले,
प्रजा शान्ति से जिया करे ।
परम अहिंसा धर्म जगत् में,
फैल सर्वहित किया करे ॥२०॥
फैले प्रेम परस्पर जग में,
मोह दूर पर रहा करे ।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं,
कोई मुख से कहा करे ॥२१॥
बन कर सब युग वीर हृदय से,
धर्मोन्नति रत रहा करें ।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से,
सब दुख संकट सहा करें ॥२२॥

(तथास्तु)

दूसरा अध्याय

पूजन की सामग्री तैयार करके पूजन की थाली में या थापना में साथिया बनावें और पुस्तक के माफिक पूजन शुरू करे पूजन करते समय अपना भाव पूजन में लगावे ।

नित्यनियम पूजा ।

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु । णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं । णमो उवज्झायाणं, णमो लोएसव्वसाहूणं ॥

ॐ अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः

(यहाँ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिये)

चत्तारि मंगलं—अरहन्त मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिप-

गणत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पव्व-ज्जामि—अरहंत सरण पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

ओं मनो ऽर्हते स्वाहा।
नमो

(यहाँ पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितोदुःस्थितोऽपि वा
ध्यायेत्पंचनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥
अपवित्रः पवित्रोवा सर्वावस्थां गतोऽपि वा
यः स्मरेत्परमात्मानं स वाह्याभ्यन्तरे शुचिः॥२॥
अपराजितमन्त्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मङ्गलं मतः ॥३॥
एसो पचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो।
मङ्गलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मगलं ॥४॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् !
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

(यदि समय हो तो यहाँपर सहस्रनाम पढ़कर दश अर्घ चढ़ा देना चाहिये, नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढ़कर एक अर्घ चढ़ाना चाहिये ।)

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥७॥

ॐ श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा

अडिल्ल छंद ।

प्रथम देवअरहंतसुश्रुतसिद्धान्त जू ।
गुरु निरग्रन्थ महंत मुकतिपुरपंथ जू ॥
तीन रतन जगमांहिं सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

पूजौं पद अरहंतके, पूजौं गुरुपद सार ।
पूजौं देवी सरसुती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥१॥

ओं ह्रीं देव शास्त्र गुरु समूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट्।
ओं ह्रीं देव शास्त्र गुरु समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं देव शास्त्र गुरु समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

गीताछंद

सुरपति उरग नरनाथ तिनकर, वंदनीक सुपदप्रभा । अति शोभनीक सुवरण उज्वल, देख छवि मोहित सभा ॥ वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि अग्र तसु वहुविधि नचूं । अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥१॥
मलिनवस्तु हर लेत सब जलस्वभाव मलछीन
जासौं पूजौं परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥१॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जे त्रिजग उदरमंझार प्राणी तपत अतिदुद्धर खरे । तिन अहितहरन सुवचन जिनके परम

शीतलता अरे ॥ तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन, सरस चंदन घसि सचूं । अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥२॥

चंदन शीतलता करै, तपतवस्तुपरवीन ।
जासौं पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाये चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

यह भव समुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि ठई । अतिदृढ़ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥ उज्ज्वल अखंडित सालि तंदुल, पंज धरि त्रयगुण जचूँ । अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ ३ ॥

तंदुल सालि सुगंध अति परम अखंडित बीन ।
जासौं पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥३॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

(यहांपर अक्षतोंके चढ़ानेमें तीन पुञ्ज करने चाहिये अधिक नहीं)

जे विनयवंत सुभव्य उर-अंबुज-प्रकासन भान हैं। जे एकमुखचारित्र भाखहिं, त्रिजगमाहिं, प्रधान हैं॥ लहिकुंद कमलादिक पहुप भव-भव कुवेदनसौं बचूं। अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥ ४॥

विविध भांति परिमल सुमन, भ्रमरजासआधीन।
जासौं पूजौं परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन॥४॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

अति सवल मदकंदर्प जाको, सुधा उरग अमान है। दुस्सह भयानक तास नाशनकौं सु गरुड समान है॥ उत्तम छहों रसयुक्त नित नैवेद्यकरि घृतमें पचूं। अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरुनिरग्रन्थ नितपूजा रचूं॥५॥

नानाविध संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन।
जासौं पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥५॥

ओंह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा।

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोहतिमिर महा-बली तिहिं कर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशजोति प्रभावली ॥ इहभांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूँ । अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनि-रग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥ ६ ॥

स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि-हीन, जासौं पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व-पामीति स्वाहा ।

जो कर्म ईंधनदहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै वर धूप तासु सुगन्धताकरि सकल परिमलता हंसै ॥ इहभांति धूप चढ़ाय नित, भवज्वलन मांहि नहीं पचूं । अरहंत श्रुत-सिद्धांतगुरुनिरग्रन्थ नितपूजा रचूँ ॥ ७ ॥

अग्निमांहिं परमल दहन, चन्दनादि गुणलीन । जासौं पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ओंह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लोचन सुरसना घ्रान उर, उत्साहके करतार हैं। मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुण सार हैं। सो फल चढ़ावत अर्थ पूरन, सकल अमृत रस सचूं॥ अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥ ८॥

जे प्रधान फल फलविषैं, पंचकरण रसलीन।
जासौं पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥८॥

ओंह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल परम उज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरुदीपक धरूं। वर धूप निरमल फलविविध, वहु जनमके पातक हरूं॥ इहभांति अर्घ चढ़ाय नित भवि, करत शिव पंकति मचूं। अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥ ९॥

वसुविधि अर्घ सँजोयकैं, अति उछाह मनकीन।
जासौं पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ ९

ओंह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

अथ जयमाला।

देवशास्त्रगुरुरतन शुभ, तीनरतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण निस्तार॥१॥

पद्धिड़ि छंद।

चउकर्मकि त्रेसठ प्रकृति नाशि। जीते अष्टादशदोषराशि॥ जे परमसुगुण हैं अनंत धीर। कहवतके छयालीस गुण गंभीर॥२॥ शुभ समवशरणशोभा अपार। शत इन्द्र नमत कर शीस धार॥ देवाधिदेव अरहंतदेव। वंदौं मनवच तनकरि सु सेव॥३॥ जिनकी धुनि है ओंकाररूप। निर अक्षरमय महिमा अनूप॥ दश अष्ट महाभाषा समेत। लघुभाषा सातशतक सुचेत॥४॥ सो स्याद्वादमय सप्तभंग। गणधर गूंथे बारह सु अङ्ग॥ रवि शशि न हरै सो तम हराय। सो शास्त्र नमौं बहु प्रीति ल्याय॥५॥ गुरु आचारज उवझाय साध। तन

नगन रतनत्रयनिधि अगाध ॥ संसारदेह वैरा-
ग्यधार। निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥६॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस। भवतारनतरन-
जिहांज ईस। गुरुकी महिमा वरनी न जाय।
गुरुनाम जपौं मनवचनकाय।

कीजै शक्ति प्रमाण, शक्ति विना सरधा धरै।
'द्यानत' सरधावान, अजर अमरपद भोगवै॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति देवशास्त्रगुरुकी पूजा

—:~~~~०※०~~~~:—
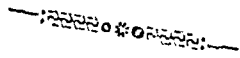
सिद्ध पूजा

अडिल्ल छंद।

अष्टकरमकरि नष्ट अष्ट गुण पायकैं।
अष्टमवसुधामाहिं विराजे जायकैं॥
ऐसे सिद्ध अनंत महंत मनायकैं।
संवौषट् आह्वान करूं हरषायकैं॥१॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट्।

छंद त्रिभंगी।

हिमवनगतगंगा आदि अभंगा, तीर्थ उतंगा सरवंगा। आनिय सुरसंगा सलिल सुरंगा, करि मनचंगा भरि भृंगा ॥ त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवननामी, अंतरजामी अभिरामी। शिवपुरविश्रामी निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी सिरनामी।

ओं ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

हरिचंदन लायो कपूर मिलायो, बहुमहकायो मनभायो। जलसंगघसायो रंगसुहायो, चरनचढ़ायो हरषायो ॥ त्रिभु० ॥२॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

तंदुल उजियारे शशिदुतिहारे, कोमल प्यारे अनियारे। तुषखंडनिकारे जलसु पखारे, पुंज तुमारे ढिग धारे ॥ त्रिभु० ॥३॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सुरतरुकी बारी प्रीतिविहारी, किरिया प्यारी गुलजारी। भरि कंचन थारी फूल सँवारी, तुम पदधारी अति भारी ॥ त्रिभु० ॥४॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

पकवान निवाजे, स्वाद विराजे, अमृत लाजे क्षुत भाजे। बहु मोदक छाजे, घेवर खाजे, पूजन काजे करि ताजे ॥ त्रिभु० ॥५॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

आपापरभासै ज्ञानप्रकाशै, चित्तविकासै तम नासै। ऐसे विध खासे दीप उजासे, धरि तुम पासे उल्लासे ॥ त्रिभु० ॥६॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चुंबक अलिमाला गंधविशाला, चंदनकाला

गुरु वाला । तस चूर्ण रसाला करि ततकाला अग्निज्वालामें डाला ॥ त्रिभु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्व कर्म विनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल अति भारा, पिस्ता प्यारा, दाख छुहारा सहकारा । ऋतु ऋतुका न्यारा सत्फलसारा, अपरंपारा लैधारा ॥ त्रिभु० ॥८॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल फल वसुवृंदा अरघ अमंदा, जजत अनंदा के कंदा । मेटो भवफंदा सब दुखदंदा, 'हीराचंदा' तुम वंदा ॥ त्रि० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहत पराक्रमाय सर्वकर्म विनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—ध्यानदहनविधिदारुदहि पायो पद निरवान । पंचभावजुतथिर थये, नमों सिद्ध भगवान ॥१॥

त्रोटकछंद—सुख सम्यक्दर्शन ज्ञान लहा ।

अगुरु-लघु सूक्ष्मवीर्य महा । अवगाह अबाध
अघायक हो । सब सिद्ध नमों सुखदायक
हो ॥ २ ॥ असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजें ।
भुवनेन्द्र खगेन्द्र गणेन्द्र भजें ॥ जर जामन-
मर्ण मिटायक हो । सब० ॥ ३ ॥ अमलं
अचलं अकलं अकुलं । अछलं असलं अरलं
अतुलं ॥ अरलं सरलं शिवनायक हो ।
सब० ॥ ४ ॥ अजरं अमरं अधरं सुधरं ।
अडरं अहरं अमरं अधरं ॥ अपरं असरं सब
लायक हो । सब० ॥ ५ ॥ वृषवृंद अमंद न
निंद लहै । निरदंद अफंद सुछंद रहै ॥ नित
आनँदवृंद विधायक हो । सब० ॥६॥ भगवंत
सुसंत अनंत गुणी । जयवंत महंत नमंत
मुनी ॥ जगजंतु तणे अघघायक हो । सब०
॥ ७ ॥ अकलंक अटंक शुभंकर हो । निर
डंक निशंक शिवंकर हो ॥ अभयंकर शंकर
क्षायक हो । सब० ॥ ८ ॥ अतरंग अरंग

असंग सदा । भवभंग अभंग उतंग सदा ॥ सरवंग अनंग नसायक हो । सब० ॥ ६ ॥ बह मंड जु मंडलमंडन हो । तिहुँदंडप्रचंड विहंडन हो । चिद पिंड अखंड अकायक हो । सब० ॥ १० ॥ निरभोग सुभोग वियोग हरे । निरजोग अरोग अशोग धरे ॥ भ्रम भंजन तीक्षण सायक हो । सब० ॥ ११ ॥ जय लक्ष अलक्ष सुलक्ष्यक हो । जय दक्षक पक्षक रक्षक हो ॥ पण अक्ष प्रतक्ष खपायक हो । सब० ॥ १२ ॥ निरभेद अखेद अछेद सही । निरवेद अवेदन वेद नहीं ॥ सब लोक अलोकहि ज्ञायक हो । सब० ॥ १३ ॥ अम लीन अदीन अरीन हने । निजलीन अधीन अछीन बने ॥ जमको घनघात बचायक हो । सब० ॥१४॥ न अहार निहार विहार कबै । अविकार अपार उदार सबै ॥ जगजीवन के मन भायक हो । सब० ॥ १५ ॥ असमंध अधंद अरंध

भये। निरबंध अबध अगंध ठये। अमलं अतलं निरवायक हो। सव० ॥ १६ ॥ अविरुद्ध अनुद्ध अजुद्ध प्रभू। अति शुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध विभू॥ परमातम पूरन पायक हो। सव० ॥ १७ ॥ वर इष्ट अभीष्ट विशीष्ट हितू। उत कृष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू॥ शिवतिष्टत सर्व सहायक हो। सव० ॥ १८ ॥ जय श्रीधर श्रीवर श्रीधर हो। जय श्रीकर श्रीभर श्रीभर हो॥ जय रिद्धि सुसिद्धि-बढ़ायक हो। सव० ॥ १९ ॥

दोहा-सिद्ध सुगुण को कहि सकै, ज्यों विस्तृत नभमान। 'हिराचंद' तातैं जजैं, करहु सकल कल्यान ॥ २० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(यहां पर विसर्जन भी करना चाहिये)

अडिल्ल-सिद्ध जजैं तिनको नहिं आवै आपदा

अथ शेष अर्घ ।

विद्यमान तीर्थंकरोंका अर्घ ।

उदकचन्दन नत तंदुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूप फलार्घकैः धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे

ओंह्रीं सीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुसजातस्वयंप्रभवृषभानन अनन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्ति वज्रधरचंद्राननचन्द्रबाहुभुजङ्गमईश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येतिविंशतिविद्यमानतिर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

अकृत्रिमचैत्यालयों का अर्घ ।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नीत्यं त्रिलोकीगतान्वंदे भावनव्यंतरान्द्युतिवरान्कल्पामरान्सर्वगान् । सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैर्दीपैश्च धूपैः फलैर्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शांतये ॥२॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसंबंधिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि०

सिद्धों का अर्घ

गन्धाढ्यसुपयो मधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दनं पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकं । धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वांछितं ॥

ओंह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलहकारणका अर्घ।

उदकचन्दनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं यजे

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घं निर्व०।

दशलक्षणधर्म का अर्घ

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे

ओं ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्य- संयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्य दशलाक्षणिकधर्मेभ्यो निर्व०

रत्नत्रयका अर्घ॥

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनरत्नमहं यजे

॥ ६॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा। ७।

।समुच्चयचौबीसी पूजा।

वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पद्म सुपास जिनराय। चंद पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपूज्य पूजितसुरराय॥ विमल अनंत धर्मजसउज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय। मुनिसुव्रत नमि नेमि पासप्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढाय॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिन-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

मुनिमनसम उज्वल नीर, प्रासुक गंध भरा।
भरि कनककटोरी धीर दीनों धार धरा॥
चौबीसों श्रीजिनचंद, आनँदकंद सही।
पद जजत हरत भवफंद पावत मोक्षमही॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी। जिन चरनन देत चढाय, भवआताप हरी चौबीसों०

ओं श्रीं ह्रीं वृषभादिवीरांतेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं नि०।२।

तन्दुल सित सोमसमान सुंदर अनियारे। मुक्ताफलकी उनमान, पुंज धरों प्यारे॥ चौबीसों०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥३॥

वरकंज कदंब कुरंड सुमन सुगंध भरे। जिनअग्र धरों गुनमंड, कामकलंक हरे। चौबीसों०।

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०

मनमोदनमोदक आदि, सुंदर सद्य बने। रस पूरित प्रासुक स्वाद, जजत छुधादि हने। चौं०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥५॥

तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगैं। सब तिमिर मोहक्षयजाय, ज्ञानकला जागै॥ चौबी०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि०॥६

दशगंध हुताशनमांहि. हे प्रभु खेवत हों। मिस धूमकरम जरिजांहि तुमपद सेवत हों। चौबी०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥७॥

शुचि पक्व सुरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायो। देखत दृगमनको प्यार, पूजत सुख पायो। चौबी०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥८॥

जलफल आठोंशुचिसार, ताको अर्घ करों तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों ॥चौबी०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

जयमाला । दोहा—

श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाय हित हेत।
गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमरपददेत ॥१॥

घत्ता ।

जय भवतमभंजन जनमनकंजन रंजन दिनमनिस्वच्छ करा। शिवमगपरकाशक अरिगननाशक, चौबीसों जिनराज वरा ।२॥

पद्धरि छन्द ।

जय ऋषभदेव रिषिगन नमंत । जय अजित जीत वसुअरि तुरंत । जय संभव भवभय करत चूर। जय अभिनंदन आनंदपूर ।३॥ जय सुमतिदायक दयाल । जय पद्मपद्म-दुतितनरसाल ॥ जय जय सुपास भवपासनाश जय चंद चंदतनदुतिप्रकाश ।४। जय पुष्प--दंत दुतिदंत सेत। जय शीतल शीतलगुननिकेत ॥ जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज । जय वासवपूजित वासुपुज्ज !! ५ ॥ जय विमल विमलपद देनहार । जय जय अनंत गुनगन अपार ॥ जय धर्म धर्म शिवशर्म देत । जय शांति शांति पुष्टि करते ॥ ६ ॥ जय कुंथु कुंथु वादिक रखेय । जय अरजिन वसुअरि छय-करेय ॥ जय मल्लि मल्ल हत मोहमल्ल । जय मुनि सुव्रत व्रतशल्ल दल्ल ॥ ७ जय नमि नित वासव-नुत सपेम ।

जय नेमनाथ वृषचक्रनसे ॥ जय पारसनाथ अनाथनाथ। जय वर्द्धमान शिवनगरनाथ ॥८॥

पुत्र पौत धन धान्य लहैं सुख संपदा । इंद्र चंद्र धरणेंद्र नरेन्द्र जु होयकैं । जावें मुकतिमझार करम सब खोयकैं। ॥ २४ ॥

---

* ॐ *

श्रीपद्मप्रभु-पूजा

॥ दोहा ॥

श्रीधर नन्दन पद्म प्रभु वीतराग जिन नाथ।
विघन हरण मंगल करन, नमो जोरि जुग हाथ ॥
जन्म महोत्सव के लिए मिल कर सब सुर राज।
आये कोसाम्बी नगर पद पूजा के काज ॥
पद्मपुरी में पद्म प्रभु, प्रगटे प्रतिमा रूप।
परम दिगम्बर शान्तिमय, छवि साकार अनूप ॥
हम सब मिल करके यहाँ प्रभु पूजा के काज।
आव्हानन करते सुखद, कृपा करो महाराज ॥

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्र । अत्र अवतर अवतर। संवौषट।
ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्र । अत्र तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्र ? अत्र मम सन्निहितो । भव भव वषट।

(अष्टम)

क्षीरोदधि उज्वल नीर, प्रासुक गन्ध भरा।
कंचन झारी में लेय, दीनो धार धरा॥
बाड़ा के पद्म जिनेश मंगल रूप सही।
काटो सब क्लेश महेश, मेरी अर्ज यही॥

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय जन्म मृत्यु विनाशनाय जलं

चन्दन केशर कर्पूर, मिश्रीत गन्ध धरो।
शीतलता के हित देव, भव आताप हरो॥ बाड़ा के०

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय भवताप विनाशनाय चन्दनं।

ले तन्दुल अमल अखण्ड, थाली पूर्ण भरो।
अक्षय पद पावन हेतु, हे प्रभु पाप हरो॥ बाड़ा के०

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं।

ले कमल केतकी बेल, पुष्प धरूँ आगे।
अब प्रभु सुनिये टेर काम कला भागे। बाड़ा के०

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्प।

नैवेद्य तुरत बनवाय, सुन्दर थाल सजा।
मम क्षुधा रोग नश जाय, गाऊँ वाद्य बजा। बाड़ा के०

ॐ ह्रीं श्रीपद्म प्रभु जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्य।

हो जगमग २ ज्योति सुन्दर अनयारी।
ले दीपक श्री जिनचन्द, मोह नशे भारी। बाड़ा के०

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं।

ले अगर कपूर सुगन्ध, चन्दन गन्ध महा।
खेवत हौं प्रभु ढिग आज, आठों कर्म दहा। बाड़ा के

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अष्ट कर्म दहनाय धूपं

श्रीफल बादाम सुलेय, केला आदि हरे।
फल पाऊं शिव पद नाथ अरपूं मोद भरे। बाड़ा के

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय मोक्ष फल प्राप्तये फलं।

जल चन्दन अक्षत पुष्प नैवेद्य आदि मिला।
मैं अष्ट द्रव्य से पूज पाऊं सिद्ध सिला। बाड़ा के

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अनर्घ्यं पद प्राप्तये अर्घं।

दोहा [अर्घ चरणों का]

चरण कमल श्रीपद्म के बन्दों मन वच काय
अर्घ चढ़ाऊं भाव से कर्म नष्ट हो जाय॥ बाड़ा के

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय के चरणों में अर्घं।

[भूमि के अन्दर विराजमान समय का अर्घ]

पृथ्वी में श्री पद्म की पद्मासन आकार।
परम दिगम्बर शांतिमय, प्रतिमा भव्य अपार॥
सौम्य शान्त अति कान्तिमय, निर्विकार साकार।

अष्ट द्रव्य का अर्घ ले, पूजू विविध प्रकार ॥ बाड़ा के०

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय भूमि में स्थित रत्नमय अर्घं ।

(पंच कल्याण)

[हर एक पूजा कि बाद नीचे लिखी अचरी पढ़ना चाहिये]

(दोहा)

श्रीपद्म प्रभु जिनराज जी, मोहे राखो हो सरना ॥

माघ कृष्ण छटमें प्रभो गर्भ मझार ।

मात सुसीमा का जनम किया सफल करतार । श्रीपद्म०

ॐ ह्रीं माघ कृष्ण ६ गर्भ मंगल प्राप्ताय श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अर्घं।

कार्तिक सुदि तेरस तिथी, प्रभो लिया अवतार ।

देवों ने पूजा करि, हुआ मंगलाचार ॥ श्रीपद्म०

ॐ ह्रीं कातिक शुक्ल १३ जन्म मंगल प्राप्ताय श्रीपद्म प्रभुजिनेन्द्रांय अर्घं

कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी, तृणवन्ध तोड़ ।

तप धारा भगवान ने, माहे कर्म को मोड़ । श्रीपद्म०

ॐ ह्रीं कातिक शुक्ल १३ तप कल्याणक प्राप्ताय श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय अर्घं

चैत शुक्ल की पूर्णिमा, उपज्यो केवलज्ञान ।

भवसागर से पार हो, दियो भव्य जन ज्ञान ॥ श्रीपद्म०

ॐ ह्रीं चैत सुदी पूना केवल ज्ञान प्राप्ताय श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अर्घं

फागुन वदी सुचौथ को, मोक्ष गये भगवान।
इन्द्र आये पूजाकरी, मैं पूजों धर ध्यान। श्रीपद्म॰
ॐ ह्रीं फाल्गुनवदी ४ मोक्ष मंगल प्राप्ताय श्रीपद्म प्रभु जिनेन्द्राय

जयमाल।

दोहा—चौबीसों अतिशय सहित, बाड़ा के भगवान्
जयमाल श्रीपद्म की, गाऊं सुखद महान॥

[पद्धरी छन्द]

जय पद्म नाथ परमात्म देव। जिनकी करते सुर चरण सेव।
जय पद्मप्रभु तन रसाल। जयरकरने मुनिमन विसाल॥
कोशाम्बी में तुम जन्म लीन। बाड़ामें बहु अतिशय करीन॥
एक जाट पुत्रने जमीं खोद। पाया तुमको होकर समोद॥
सुनकर हर्षितहो भविकवृन्द। आकर पूजाकी दुख निकंद॥
करते दुखियो का दुक्ख दूर। हो नष्ट प्रेत बाधा जरूर॥
डाकिन साकिन सबहोंय चूर्ण। अन्धे हो जाते नेत्र पूर्ण॥
श्रीपाल सेठ अंजन सुचार। तारे तुमने उनको विभोर॥
नकुल सर्प सीता समेत। तारे तुमने निज भक्त हेत॥
हे संकट मोचन भक्त पाल। हमको भी तारो गुणविशाल॥
विनती करता हूं बार बार। होवे मेरा दुःख क्षार क्षार॥
मीना गूजर सब जाट जैन। आकर पूजें कर तृप्त नैन॥
ऐसी महिमा तेरी दयाल। अब हम पर भी होवे कृपाल॥
ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय जयमाल पूर्णार्घंनिर्वपामितिस्वाहा

मेढ़ी में श्री पद्म की, पूजा रची विशाल।
हुआ रोग तब नष्ट सब, विनवे छोटेलाल॥
पूजा विधि जनूं नहीं नहीं जानू आव्हान।
भूल चूक सब माफ कर दया करो भगवान॥

श्री शांति नाथ जिन पूजा

मत्तगयन्द छन्द (तथा जमकालंकार)

या भवकाननमैं चतुरानन पापपनानन घेरिहमेरी। आतमजानन माननठानन, बानन होनदई सठ मेरी। तामदभानन आपहि हो, यह छानन आन न आननटेरी। आन गही शरना–गतको अब, श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्

अष्टक।

छन्द त्रिभंगी अनुप्रासज। (मात्रा ३२ जगनवर्जित)

हिमगिरिगतगंगा, धार अभंगा प्रासुक संगा, भरि भृंगा। जरमनमृतंगा, नाशि अघंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ॥ श्रीशांतिजि–नेशं, नुत–शक्रेशं, वृषचक्रेशं चक्रेशं।

हनि अरिचक्रेशं हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं ॥ १ ॥

श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ।

वर बावनचंदन कदलीनंदन, घनआनंदन सहित घसों । भवतापनिकंदन, एरानंदन, वंद अमंदन, चरनवसों ॥ श्रीशांति० ॥ २॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्व० ।

हिमकरकरिलज्जत, मलयसुमज्जत, अच्छत -जज्जत, भवभय भज्जत अति भारी ॥श्री० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ।

मंदारसरोजं, कदली जोजं, पुंज भरोजं, मलयभरं । भरी कंचनथारी, तुम ढिग धारी, मदनविदारी धीरधरं । श्रीशांति० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ।

पक्वान नवीने, पावन कीने, षटरसभीने, सुखदाई । मनमोदनहारे, छुधाविदारे, आगैं धारे गुनगाई ॥ श्रीशांति० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ।

तुम ज्ञानप्रकाशे, भ्रमतम नाशे, ज्ञेयवि-काशे सुखरासे । दीपक उजियारा यातैं धारा, मोह-निवारा निजभासे ॥ श्रीशांति० ॥६॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीप निव० ।

चंदन करपूरं, करि वरचूरं पावक भूरं, माहि जुरं । तसु धूम उडावै नाचत जावै, अलि गुं-जावै मधुरसुरं ॥ श्रीशांति० ॥ ७॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति० ।

बादाम खजूरं, दाडिम पूरं, निंबुक भूरं ले आयो । तासों पद जज्जों शिवफल सज्जों, निजसरज्जों उमगायो ॥ श्रीशांति० ॥ ८॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० स्वाहा ।

वसुद्रव्य सँवारी, तुमढिगधारी, आनँदकारी दृगप्यारी । तुम हो भवतारी करूनाधारी, यातैं थारी शरनारी ॥ श्रीशांति० ॥६॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति० ।

पंचकल्याणक । सुन्दरी तथा द्रुतविलंबितछंद ।

असित सातयँ भादव जानिये। गरभमंगल तादिन मानिये॥ सचि कियो जननी पद चर्च-नं। हम करैं इत ये पद अर्चनं॥ १॥

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम जेठचतुर्दशि श्याम है। सकलइंद्र सुआगत धाम है॥ गजपुरे गज साजि सबै तबै। गिरि जजे इत मैं जजिहों अबै॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भवशरीर सुभोग असार हैं। इमि विचार तबैं तप धार हैं॥ भ्रमर चौदसि जेठ सुहावनी। धरमहेत जजौं गुन पावनी॥ ३॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शुकलपौष दशैं सुखराश है। परम-केवल-ज्ञान प्रकाश है॥ भवसमुद्र- उधारन देवकी। हम करैं नित मंगल सेवकी॥ ४॥

ओं ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।

असित चौदस जेठ हने अरी । गिरि समेद–थकी शिवतियवरी । सकल इंद्र जजैं तित आयकैं । हम जजैं इत मस्तक नायकैं ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शांतिशांतिगुण-मंडिते सदा । जाहि ध्यावत सुपंडिते सदा । मैं तिन्हें भगतिमंडिते सदा । पुजि हों कलुषपंडिते सदा ॥ १ ॥
मोच्छहेत तुम ही दयाल हो । हे जिनेश गुनरत्नमाल हो । मैं अबैं सुगुनदाम ही धरों । ध्यावतैं तुरित मुक्ति ती वरों ॥ २ ॥

छंद पद्धरि (१६ मात्रा)

जय शांतिनाथ चिद्रुपराज । भवसागरमैं अद-भुत जहाज । तुम तज सरवारथसिद्ध-थान । सर-वारथजुत गजपुर महान । १ ॥ तित

जनम लियो आनंदधार । हरि ततछिन आयो राजद्वार ॥ इंद्रानी जाय प्रसूति-थान । तुमको करमैं ले हरष मान ॥ २ ॥ हरि गोद देय सो मोद धार । सिर चमर अमर ढारत अपार ॥ गिरिराज जाय तित शिलापांड । तापैं थाप्यो अभिषेक मांड़ ॥३॥ तित पंचम उदधितनों सुवार । सुर कर कर करि ल्याये उदार ॥ तव इंद्र सहसकर करि अनंद । तुम शिर धारा डार्यो सुनंद ॥ अघ घघ घघ घघ धुनि होत घोर । भभ भभ भभ धध धध कलशशोर ॥ द्रमद्रम द्रमद्रम वाजत मृदंग । झन नन नन नन नन नूपरंग ॥ ५ ॥ तन नन नन नन नन तनन तान । घन नन नन घंटा करत ध्वान ॥ ताथेइ थेइ थेइ थेइ थेइ सु-चाल । जुत नाचत नाचत तुमहिं भाल ॥ ३ ॥ चट चट चट अटपट नटत नाट । झट झट झट हट नट शट विराट ॥ इमि नाचत

राचत भगत रंग । सुर लेत जहां आनंद संग ॥७॥ इत्यादि अतुल मंगल सुठाट । तित बन्यो जहां सुरगिर विराट ॥ पुनि करि नियोग पितुसदन आय । हरि सौंप्यो तुम तित वृद्ध थाय । ८ ॥ पुनि राजमाहिं लहि चक्ररत्न । भोग्यो छखंड करि धरमजत्न ॥ पुनि तपधारि केवलरिद्धि पाय । भवि जीवनकों शिवमग बताय ॥ ६ ॥ शिवपुर पहुँचे तुम हे जिनेश । गुनमंडित अतुल अनंत भेष ॥ मैं ध्यावतु हौं नित शीशनाय । हमरी भवबाधा हरि जिनाय ॥ १० ॥ सेवक अपनो निज जान जान । करुणाकरि भौभय भान भान ॥ यह विघनमूल तरु खंड खंड । चितचिंतित आनँद मंड मंड ॥ ११ ॥

घत्तानन्द छन्द (मात्रा ३१)

श्रीशांतिमहंता, शिवतियकंता, सुगुन

अनंता भक्तवंता । भगभ्रमन हनंता, सौख्य अनंता दातारं तारनवंता ॥१॥

ओं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

छंद रूपक सवैया (मात्र ३१)

शांतिनाथ जिनके पदपंकज, जो भवि पूजैं मनवचकाय । जनमजनमके पातक ताके, तत छिन तजिकैं जाय पलाय । मनवांछितसु-खपावैं सोनर वांचैभगतिभावअति लाय ॥ तातैं वृंदा-वन नित वंदैंजातैं शिवपुरराजक-राय ॥ १ ॥

इत्याशीर्वादः ॥ पुष्पांजलि क्षिपेत् ॥

श्रीवर्द्धमानजिनपूजा

मत्तगयंद

श्रीमतवीर हरै भवपीर, भरै सुखसीर अनाकुलताई ।
केहरिअंक अरीकरदंक, नये हरिपंकतिमौलि सु आई ॥
मैं तुमको इत थापतु हौं प्रभु भक्ति समेत हिये हरखाई ।
हे करुणाधनधारक देव, इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ॥ ३ ॥

अष्टक

छंद अष्टपदी (द्यानतरायकृत नंदीश्वराष्टकादिक अनेक रागोंमें भी बने है)

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कंचनभृंग भरों ।
प्रभु वेग हरो भवपीर, यातैं धार करों ॥
श्रीवीरमहा अतिवीर, सन्मतिनायक हो ।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयागिरचंदन सार, केसरसंग घसा ।
प्रभु भव आताप निवार, पूजत हिय हुलसा ॥श्री०॥ २॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।।२॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीनों थार भरी ।
तसु पुंज धरों अविरुद्ध, पावों शिवनगरी॥ श्री०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति० ॥ ३ ॥

सुरतरुके सुमन समेत, सुमन सुमनप्यारे ।
सो मनमथभंजनहेत, पूजों पद थारे ॥ श्री० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति० ॥ ४ ॥

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी ।
पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी ॥श्री०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति० ॥ ५ ॥

तमखंडित मंडितनेह, दीपक जोवत हों ।
तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हों ।श्री० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति० ॥ ६ ॥

हरिचंदन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा ।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठोंकर्म जरा ॥ श्री० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामी-ति० ॥ ७ ॥

रितुफल कलवर्जित लाय, कंचनथार भरा ।
शिव फलहित हे जिनराय, तुम ढिग भेंट धरा । श्री०॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति ॥ ८॥

जल फल वसु सजि हिमथार, तनमन मोद धरों।
गुण गाऊं भवदधि तार, पूजत पाप हरों॥ श्री० ॥६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

पंचकल्याण

राग टप्पाचालमें

मोहि राखो हो, सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो० ॥

गरभ साढसित छट्ठ लियो थिति, त्रिशला उर अघहरना।
सुर सुरपति तित सेव करयो नित, मैं पूजों भवतरना ॥ मोहि रा०॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठ्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥

जनम चैत सित तेरसके दिन, कुंडलपुर कनवरना।
सुरगिर सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भवहरना ॥
मोहि रा० ॥२॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥

मगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना।
नृप कुमार घर पारन कीनों, मैं पूजों तुम चरना
॥ मोह रा० ॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावी-
-रजिनेन्द्राय अर्घं नि० ।

शुक्ल दशैं वैशाख दिवस अरि, घात चतुक क्षयकरना।
केवल लहि भवि, भवसर तारे, जजों चरन सुख
भरना ॥मो० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहावीरजि-
-नेन्द्राय अर्घं नि० ॥

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतें परना।
गनफनिवृंद जजे तित बहुविधि, मैं पूजों भयहरना
॥मो० ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावश्यायां मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीमहा-
-वीरजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥

जयमाला

छंद हरीगीता २८ मात्रा

गनधर असनिधर, चक्रधर, हरधर गदाधर वरवदा।
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सद

दुखहरन आनँदभरन तारन तरन चरन रसाल हैं।
सुकुमाल गुनमनिमाल उन्नत, भालकी जयमाल है ॥१॥

घत्तानंद

जय त्रिशलानंदन, हरिकृतवंदन, जगदानंदन, चंदवरं।
भवतापनिकंदन तनकनमंदन, रहितसपंदन, नयन धरं ॥२॥

छंद तोटक

जय केवलभानुकलासदनं। भविकोकविकाशनकंदवनं ॥
जगजीत महारिपु मोहहरं। रजज्ञानदृगांवर चूरकरं ॥ १॥
गर्भादिकमंगलमंडित हो। दुखदारिदको नित खंडित हो॥
जगमाहिं तुमी सत पंडित हो। तुम ही भवभावविहंडित हो ॥ २ ॥
हरिवंशसरोजनकों रवि हो। बलवंत महंत तुमी कवि हो॥
लहि केवल धर्मप्रकाश कियौ। अबलों सोई मारग राजति यौ ॥ ३ ॥
पुनि आप तने गुनमाहिं सही। सुर मग्न रहैं जितने सब ही ॥
तिनकी वनिता गुन गावत हैं लय माननिसों मन भावत हैं ॥ ४ ॥
पुनि नाचत रंग उमंग भरी। तुव भक्ति विषै पग येम धरी
झननं झननं झननं झननं। सुर लेत तहाँ तननं तननं॥५॥

घननं घननं घनघंट बजैं । ढमढं ढमढं मिरदंग सजैं ॥
गगनांगनगर्भगता सुगता । ततता ततता अतता वितता ॥६॥
धृगतां धृगतां गति बाजत है । सुरताल रसाल जु छाजत है ॥
सननं सननं सननं नभमें । इकरूप अनेक जु धारि भमें ॥७॥
कइ नारि सु बीन बजावति हैं। तुमरो जस उज्जल गावति हैं॥
करतालविषै करताल धरैं । सुरताल विशाल जु नाद करैं ।८॥
इन आदि अनेक उछाह भरी । सुरि भक्ति करैं प्रभुजी तुमरी ॥
तुमही जगजीवनिके पितु हो । तुमही विनकारनतैं हितु हो । ९॥
तुमही सब विघ्नविनाशन हो । तुमही निज आनँदभासन हो ॥
तुमही चितचिंतितदायक हो । जगमाहिं तुमी सब लायक हो ॥ १० ॥
तुमरे पनमंगलमाहिं सही । जिय उत्तम पुन्न लियासब ही ॥
हमको तुमरी सरनागत है । तुमरे गुनमें मन पागत है ॥ ११॥

प्रभु मो हिय आप सदा बसिये। जब लों वसु कर्म नहीं नसिये ॥

तब लों तुम ध्यान हिये धरतो। तब लों श्रुतचिंतन चित्त रतो ॥ १२ ॥

तब लों व्रत चारित चाहतु हों। तब लों शुभ भाव सु गाहतु हो ॥

तब लों सतसंगति नित्त रहौ। तब लों मम संजम चित्त गहौ ॥ १३ ॥

जब लों नहिं नाश करों अरिकों। शिवनारि वरों समता धरिको ॥

यह द्यो तब लों हमको जिनजी। हम जाचतु हैं इतनी सुनजी ॥ १४ ॥

घत्तानंद

श्रीवीरजिनेशा नमितसुरेशा नागनरेशा भगतिभरा।
'वृंदावन' ध्यावै विघननशावै वांछित पावै शर्म वरा। १५॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दोहा

श्रीसनमतिके जुगलपद, जो पूजै धरि प्रीत।
वृंदावन सो चतुरनर, लहै मुक्तिनवनीत ॥ १६ ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

समुच्चय अर्घ

तोटक

सुनिये जिनराज त्रिलोक धनी ।
तुममें जितने गुन हैं तितनी ।
कहि कौन सकै मुखसों सब ही ।
तिहि पूजतु हौं गहि अर्घ यही ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादि वीरान्तेभ्यो चतुर्विंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कवित्त

रिखबदेवको आदि अंत, श्रीबरधमान जिनवर सुखकार।
तिनके चरनकमलको पूजै जो प्रानीगुनमाल उचार ॥
ताके पुत्र मित्र धन जोबन, सुखसमाजगुन मिलै अपार ।
सुरपदभोगभोगि चक्री है अनुक्रम लहै मोच्छपद सार। २॥

इत्याशीर्वादः ।

———

महाअर्घम्

प्रभु जी अष्ट दरब जी ल्यायो भावसों, जिनजी थांका हरषि हरषि गुण गांउ महाराज यो मन हरष्यो है प्रभु थांकी पूजा जीरे कारए ॥१॥ प्रभुजी जल तो जी चंदन अक्षत आदि ले शिव वर अर्घ चढाऊँ जी । जिन चैत्याले महाराज यो मन हरष्यो छै प्रभु थांकी

पूजा जीरे कारण । २ । प्रभुजी थांका तो रूप निहारण कारण सुरपति रचिया छै नैन हज़ार महाराज, यो मन हरष्यो छै प्रभु थांकी पूजाजी रे कारण ॥ ३ ॥ प्रभुजी इन्द्र धरनेन्द्रजी सब मिलि आइया थांकाजी गुणा को पार न पायो महाराज यो मन हरष्यो छै प्रभु थांकी पूजाजी रे कारण ॥४॥ प्रभुजी थे छोजी साहब तीनों लोक का जिनवर मैं छूंजी निपट अज्ञानी महाराज यो मन हरष्यो छै प्रभु थांकी पूजाजीरे कारण ॥५॥ प्रभुजी थांकी तो पूजा-जी भवि जीवन करै ताका अशुभ करम नशि जाय महाराज यो मन हरष्यो छै प्रभु थांकी पूजाजी रे कारण ॥ ६ ॥ प्रभुजी ऊभो तो सेवक थासू विनवै सेवक की सुणो महाराज यो, मन हरष्यो छै प्रभु थांकी पूजा जीरे कारण ॥ ७ ॥ प्रभुजी सेवक तो थांके शरणे आइयो सेवक को जामन मरण मिटावो महाराज यो मन हरष्यो छै प्रभु थांकी पूजाजी रे कारण ॥ ८ ॥

उदक चन्दन तन्दुल पुष्पकैश्चरूसु दीप सुधूप फलार्घकैः । धवल मंगल गान रवाकुले जिन गृहे जिन राज महं यजे । ओं ह्रीं अर्हन्तसिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो जलाअर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा, ॥

शांतिपाठ विसर्जन भाषा ।

चौपाई १२ मात्रा ।

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी । शीलगुण-व्रतसंयमधारी ॥ लखन एकसौ आठ विराजैं । निरखत नयन कमलदल लाजैं ॥१॥ पञ्चम चक्र-वर्तिपदधारी । सोलम तीर्थंकर सुखकारी ॥ इंद्र-

नरेंद्रपूज्य जिननायक । नमौं शांतिहितशांति-विधायक ॥२॥ दिव्य विटप पहुपनकी वरषा । दुंदुभि आसन वाणी सरसा ॥ छत्र चमर भामण्डल भारी । ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ॥ ३ ॥ शांतिजिनेश शांति सुखदाई । जगतपूज्य पूजौं शिर-नाई । परमशांति दीजै हम सबको । पढैं तिन्हैं, पुनि चार संघको ॥४॥

वसंततिलका ।

पूजैं जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके ।
इंद्रादिदेव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ।
सो शांतिनाथ वरवंशजगत्प्रदीप ।
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ॥५॥

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकोंको प्रतिपालकोंको ।
यतीनको औ यतिनायकोंको ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले ।
कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे ॥६॥

स्रग्धरा ।

होवै सारी प्रजाको सुख बलयुत हो धर्मधारी नरेश। होवै वर्षा समै पै तिल भर न रहै व्याधियोंका अंदेशा ॥ होवै चोरी न जारी सुसमय वरतै हो न दुष्काल भारी । सारे ही देश धारैं जिनवर वृषको जो सदा सौख्यकारी ॥७॥

दोहा

घातिकर्म जिन नाशकरी पायो केवलराज
शांति करौ सब जगतमें वृषभादिक जिनराज ॥

मंदाक्रांता।

शास्त्रोंका हो पठन सुखदा लाभ सत्सङ्ग-ताका। सद्वृत्ताका सुजस कहके, दोष ढांकूं सभीका॥ बोलूं प्यारे बचन हितके, आपको रूप ध्याऊं। तोलौं सेऊं चरन जिनके मोक्ष-जौलौं न पाऊं॥ ९॥

आर्य्या।

तवपद मेरे हियमें ममहिय तेरे पुनीत चरणोंमें। तबलों लीन रहों प्रभु, जबलों पाया न मुक्तिपद मैंने॥१०॥ अक्षरपद मात्रासे, दूषित जो कछु कहा गया मुझसे। क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाउ भवदुखसे॥११॥ हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊं तव चरण शरण बलि-हारी। मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मोंका क्षय सुबोध सुखकारी॥१२॥

☞ यहाँ पर नोवार नवकार मंत्र का जाप करना चाहिये

। अथ भाषास्तुतिपाठ ।

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमन आनंदनो। श्रीमाभिनंदन जगतवंदन, आदि-नाथ निरंजनो॥ १॥ तुव आदिनाथ अनादि सेऊँ सेय पदपूजा करूं। कैलाश गिरिपर रिषभजिनवर, पदकमल हिरदै धरूं॥ २॥ तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली। इह विरद सुनकर सरन आयो, कृपा कीज्यो नाथजी॥ ३॥ तुम चंद्रवदन सु चंद्रलच्छन चंद्रपुरि परमेश्वरो॥४॥ तुम शांतिपाँच कल्याण,पूजों शुद्धमनवचकाय जू। दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलाय जू॥ ५॥ तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमल विकाशनो। श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर

पापतिमिर विना-शनो ॥ ६ ॥ जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश करी। चा रित्ररथ चढि होय दूलह, जाय शिवरम -णी वरी ॥ ७ ॥ कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो अश्व से नंनदन जगत वंदन सफल संघ मंगल कियो ॥ ८ ॥ जिनधरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानवि-दारकै । श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्रके पद, मैं नमों शिरधारकै ॥ ९ ॥ तुम कर्मघा -ता मोक्षदाता,दीन जानो दया करो । सिद्धार्थनंदन जगत वंदन, महावीर जिनेश्वरो ॥१०॥ छत्र तीन सोहैं सुरनर मोहैं, वीनती अवधारिये। करजोड़ि सेवक वीनवै प्रभु आवागमन निवारिये । ११ । अब होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहों। करजोड़ या वरदान मांगूं, मोक्षफल जावत लहों ॥ १२ ॥ जो एक मांहीं एक राजत एकमांहि अनेकनो । इक अनेककि नहीं संख्या नमूं सिद्ध निरजनो ॥ १३ ॥

चौ०—मैं तुम चरणकमलगुणगाय । बहु-विधि भक्ति करो करो मनलाय । जनम जनमप्रभु पाऊं तोहि । यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ १४ ॥ कृपा तिहारी ऐसी होय । जामन मरन मिटावो मोय ॥ वारवार मैं विनती करूं । तुम सेयां भव-सागर तरूं ॥१५॥ नाम लेत सब दुख मिट जाय। तुमदर्शन देख्याप्रभु आय । तुम हो प्रभु देवनके देव मैं तो करूं चरण तव सेव ॥१६॥ मैं आया पूजनके काज । मेरो जन्म सफल भयो आज । पूजाकरके नवाऊं शीश । मुझ अपराध क्षमहु जगदीस ॥ १७ ॥

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान ।
मो गरीबकी वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥१८॥
पूजन करते देवकी, आदिमध्य अवसान ।
सुरगनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥१९

जैसी महिमा तुमविषैं, और धरैनहिं कोय
जो सूरज में जोति है, तारणमैं नहिं सोय ॥२०
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाशतैं. अंधकार विनशाय ॥२१
बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अज्ञान ।
पूजाविधि जानूं नहीं, सरन राखि भगवान ॥
इति भाषास्तुति पाठ ।

———

परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अथ विसर्जनपाठ ।

दोहा ।

बिन जाने वा जानके, रही चूक जो कोय । तुम प्रसादतैं परमगुरु, सो सब पूरन होय ॥१॥
पूजनविधि जान्यो नहीं, नहीं जान्यों आहवान ।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करो भगवान ॥२॥
मंत्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरणकी सेव ॥३॥
आये जो जो देवगन, पूजे भक्तिप्रमान ।
सो अब जावहु कृपाकर, अपने अपने थान ॥४॥

समाप्त ॥

आरती—संग्रह ।

पंचपरमेष्ठी आदिकी आरती ।

इहविधि मंगल आरती कीजै, पंच परमपद भज सुक लीजै ॥टेक। पहली आरती श्रीजिनराजा । भव-दधिपारउतारजिहाजा ॥ इहविध० ॥१॥ दूसरि आरति सिद्धनकेरी । सुमरन करत मिटै भवकेरी ॥ इहविध० ॥२। तीजी आरति सूर मुनिंदा । जनममरनदुख दूर करिंदा ॥ इहविध० ॥ ३ ॥ चौथी आरति श्रीउव-भाया । दर्शन देखत पाप पलाया ॥ ४॥ पांचमि आरति साधु तिहारी । कुमति-विनाशन शिव-अधिकारी ॥ इहविध० ॥ ५ ॥ छट्ठी ग्यारहप्रतिमा धारी श्रावक वंदों आनँदकारी ॥ इहविध० । ६॥ सातमि आरति श्रीजिनवानी 'द्यानत' सुरगमुकति सुखदानी ॥ इहविध० ।७।

देव दर्शन

दर्शनं देव देवस्य, दर्शनं पापनाशनं । दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनं ॥१॥ दर्शनेन जिने-न्द्राणाम्, साधूना वंदनेन च । न चिरं तिष्ठते पापम् छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥२॥ वीतरागमुखं दृष्ट्वा पद्मराग समप्रभं । अनेकजन्मकृतंपापं, दर्शनेन विनश्यति ॥३॥ दर्शनं जिन सूर्यस्य संसारध्वान्त-नाशनं बोधनं चित्तपद्मस्य, सद्धर्मामृतपर्णं । जन्मदाह-विनाशाय, वर्धनं सुखवारिधेः ।५॥ जीवादितत्त्वं प्रतिपादकाय । सम्यक्तवमुख्याष्टगुणार्णवाय ॥ प्रशांतरूपाय दिगंबराय । देवधिदेवाय नमो जिनाय ॥ ६ ॥ चिदानन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने । परमात्मप्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥ ७ ॥ अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेवशरणं मम । तस्मात्कारूण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ८ ॥ नहिं त्राता नहिं

त्राता, नहिं त्राता जगत्त्रये। वीतरागात्परो-देवो, न भूतो न भविष्यति ॥९। जिनेभक्तिर्जिने भक्ति-र्जिने भक्ति दिनेदिने। सदाऽमेस्तु सदामेस्तु सदामेस्तु भवे भवे ॥१०॥ जिनधर्मविनुर्मुक्तो. मा भवच्चक्रवर्त्यपि। स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि, जिन-धर्मानवासितः ॥ ११ ॥ जन्मजन्मकृतंपापं जन्मकोटि-भिरर्जितं। जन्म मृत्युजरारोगं हन्यते जिनदर्श-नात् ॥ १२ ॥ अद्याभावत सुफलता ह्यनद्वयस्य। देवत्वदीयचरणांबुजबीक्षणेन। अद्य त्रिलोकतिलक-प्रतिभाषते मे। संसारवारिधियंचुलुक प्रमाणं ॥

तृतीय अध्याय

मंगलाचरण

प्रभू जय जय जय जय सङ्कट हरण मंगल करन स्वामी महावीर
त्रिलोक ईशहै मुक्ती अधीश है
अर्ज अदनीश है चरणों में शीश है ॥ प्रभू जय ॥
भव जल अपार है मेरी नाव मंझार है
तू तरन तार है कर इसको पार है ॥ प्रभू जय ॥

—:२:—

प्रभू जी मन मन्दिर में आओ ॥ प्रभूजी।
नाथ पुजारी हूँ मैं तेरा सेवक को अपनाओ ॥ प्रभूजी ॥
शुद्ध हृदय से करूँ बीनती आतम ज्ञान सिखाओ
पर परणति तज निज परणति का सच्चा भान कराओ ॥ प्रभू ॥
मै तो तुमको भूल गया था तुम ना मुझे भुलाओ
जीवन धन्य बनाऊँ अपना ऐसीराह सुझाओ ॥ प्रभू ॥

कर्म जटिल है संग न छोड़े इनसे मुझे बचाओ
करके दया "वृद्धि" सेवक पर आवागमन मिटाओ ॥प्रभू॥

—:३:—

पट खोल खोल !
मन्दिर के तू पट खोल खोल !!
कब से यहां खड़ा हूँ । आशामय बना पड़ा हूँ
तेरे ही लिये अड़ा हूँ । निश्चय का बड़ा कड़ा हूँ
मुझसे दो बातें बोल बोल पट खोल खोल ॥ १ ॥
मैं ढूंढ फिरा जग सारा, भटक मैं मारा मारा ।
मैं ठगा गया बेचारा तू मिला न मेरा प्यारा ।
मैं हार गया अब डोल २ डोल डोल डोल पट खोल २ ॥२॥
गिरजाघर में तू जाता, मसजिद में भी दिखलाता
मन्दिर में भी तू आता, पर पता न कोई पाता
तू है अलोच अनमोल, मोल मोल मोल पट खोल २ ॥३॥
शास्त्रों ने जिसको गाया, मुनियों ने जिसे मनाया
तीर्थंकर ने जो पाया, थी सब तेरी माया
तू है अडोल पर लोल लोल, लोल लोल लोल पट पट खोल २॥४॥
तेरा ही टुकड़ा पाकर, बनते हैं धर्म सुधाकर
करुणा कर मन में आकर, हममें मनुष्यता लाकर
चित शान्ति सुधारस घोल २ घोल घोल बल पट खोल २ ॥५॥

नं० (४)

मोरे मन मंदिर में आन बसो भगवान—आ............
घंटे और घड़ियाल नहीं हैं, सामग्री का थाल नहीं है
लेकिन एक प्रेम का दीपक, जलता है भगवान ॥ मोरे ॥

क्रोध नहीं हैं क्लेश नहीं है, बगुलेका सा भेश नहीं है
छोटी सी एक प्रेम कुटी हैं, प्रेमका है यह स्थान ॥ मोरे॥
टूटा फूटा मंदिर मेरा पड़ा हुआ है घोर अंधेरा
तुम आवोतो हो उजियारा, तुमबिन है सुनसान ॥ मोरे ॥

नं० (५)

आओ मित्र सब मिल जुल कर पद्मा के गुण गावें
ज्ञान भानु का सुमरन करके, हृदय कमल विक सावे ॥ टेर
दीन दयाल दया सिन्धु के, पद सेवक कहलावें ।
जगत उद्धारक जगनायक श्री पद्मा को शीश नवावे ॥
रख विश्वास सुदर्शन सा दृग, पदम से ध्यान लगावें ।
प्रभु खिवय्या बनाकर जीवन, नैया पार लगावें ॥
क्षमा, दया. तप धैर्य वीरता, पदम सी हम अपनावे ।
बने मित्र संसार हमारा. हम सब के बन जावें ॥
दुःख मोचन का जाप किये जब, अजर अमर पद पावें ॥
शिव विद्यार्थी पदम कृपा से, विद्या गुण नित पावें ॥

नं० (६)

प्रभू तार तार भव सिंधु पार ॥ टेर ॥
संकट संभार, तुम ही अधार टुकदे सहार, वेगी काढ़ी,
मोरी नैया ॥प्रभू० ॥
यह माद चोर किया हमपै ज़ोर भग पोत तोर दिये मधमें वोर
तुम समन और तरन तर वैया ॥ प्रभु ॥
मोह दडर दियो दुख प्रचंड कर खंड खंड चहुं गति में भंड
तुम ही तरंड तारो मोरे सैंया ॥ प्रभु ॥
दृग सुख दास तोरा है हिरास मोरि काडो श्वास हर भव
को बास तू है जन उधतैया ॥ प्रभु ॥

नं० (७)

तर्ज—रुम झुम वरसे बादरवा

व्याकुल मोरे नयनवा शरण चरण में आया
दर्श दिखादो स्वामी दर्श दिखादो ॥ टेर ॥
कर्म शत्रु तो घिर २ सर पर आ रहे आ रहे
भव सागर के दुख अनन्ता पा रहे पा रहे
इनसे वेग बचाओ रे अर्ज हमारी मानो
दुख मिटादो स्वामी दुख मिटादो ॥ १ ॥
तीन भुवन में तुम सा और न पाते हैं पाते हैं
स्वामी तुम विन ठौर और नही पाते हैं पाते हैं
पथ दिखलावो रे अर्ज हमारी मानों
दुख मिटादो स्वामी दुख मिटादो ॥ २ ॥
सब जीवों का दुख से बेड़ा पार करो पार करो
सेवक का भी स्वामी अब उद्धार करो उद्धार करो
सब ही शीश नवावें रे अर्ज हमारी मानों
दुख मिटादो स्वामी दुख मिटादो ॥ ३ ॥

नं० (८)

तर्ज:—अंखियां मिलाके जिया भरमा के

विरद संवार के करुणा धार के अब सुध लेना ॥ टेर ॥
भव सागर के बीच में यह नाव हमारी डूबी जावे,
हाँ कोई नहीं ऐसा जग में और तुम विन पार लगावे ॥ १ ॥
लाखों ही प्राणियों को आपने ही तार दिये
हाँ लाखों ही पापियों के आपने उद्धार किये ॥ २ ॥
आपके दास हैं हम सब का बेड़ा पार लगाओ
हाँ चरण में शीश हैं हम अब तो सुखी कराओ ॥ ३ ॥

नं० (९)

तर्ज :—मिलके बिछड़ गई अंखियां हाय रामां

कोन सुने दुख बत्तीयां प्रभु बिन कोन सुने दुख बत्तीयां ॥ टेर ॥
विषयों ने चक्कर में ऐसे घुमाये लाखों ही पाप कमाये
जासूं धधक रही छतियां प्रभु बिन कौन ॥ १ ॥
स्वारथ ही स्वारथ बसा हर दिल में अपने हुये पराये हैं
जासु विगड़ गई गतियां प्रभु बिन कौन ॥ २ ॥

नं० (१०)

आफत में बसा दास तेरा आन बचाले ॥ टेर ॥
चारों तरफ से आन मुसीवत ने हैं घेरा ।
लूटा है दीनता ने दया शील का डेरा ॥
अब कुछ तो दया करके दया वान कहाले ॥ आफत ॥
मंजिल वंडी है दूर बड़ा दूर किनारा ।
से त्रिण तथा शुद्र नहीं कुछ भी आधारा ॥
अब कुछ तो दया करके दया वान कहाले ॥ आफत ॥
अब किसको पुकारूं में सिवा तेरे कौन है ।
प्रेम कुटम्बी बन्धु आज सभी मौन है ॥
अब "जौहरी" अनाथ बचा तू नाथ कहाले ॥ आफत ॥
दीनों का तुझे ध्यान नहीं दीन बन्धु क्यों ।
करुणा विना प्रसिद्ध है करुणा निधान क्यों ॥
अब जा रही है वात तेरी सोच सुचाले ॥ आफत ॥

नं० (११)

आरत जन तारो प्रभु विपत्ति दल संहारों प्रभु
मनकी गति तंग्र भई, दिये की सुख शान्ती गई
विकलता निवारो, भव सिन्धु से उबारो प्रभु ॥ आरत.......

भारत में अति मलीन विचरे नर पराधीन
दावत विडारो ग्रह चक्र से निकारो प्रभु ॥ आरत.......

नं० (१२)

मेरे पद्मा प्रभु प्यारे तेरी याद सताये ॥ टेर ॥
दिन प्रति दिन मोहे कर्म सताये भव २ मांहि रुलाये।
तुम तो हमसे दूर बसे हो, इनसे कौन छुडाये ॥ तेरी ॥
विषयों ने मुझ को २ लुभाया नर्क वेदना में जकड़ाया
तुम बिन कौन हमारा बेड़ा भगवान पार लगाये ॥ तेरी ॥
चुन चुन सुमन ये थाल सजाए पूजन का दिल हमारा चाहे।
मैंन तेरा ध्यान लगाया चिदानंद सुखपाये ॥ तेरी ॥
बार २ तेरी सुध आए दर्शन को नित जी ललचाए
कर २ वद्ध देवालय ठाड़े चरनन शीश झुकाए ॥ तेरी ॥

नं० (१३)

पद्मा तेरी धुन में आनन्द आ रहा है ॥ टेर ॥
तेरी तो धुन हम सुन कर आए हैं तेरे दर पर ॥
आ दर्श हमको दीजे पद्म मन मंदिर में ॥ १ ॥
लाखों की बिगड़ी बनाई, मेरी भी बना देना।
अर्दास कर रहा हूँ, पद्मा की कलियों में ॥ २ ॥
नैया पड़ी भवर में तुम पार तो लगाना।
पुकार मैं रहा हूँ पद्मा को मन मंदिर में ॥ ३ ॥
आकर सताता हमको तूफान ये कर्मों का।
हे पद्मा कर्म जाल हटना पड़ेगा ॥ ४ ॥
उदय की अर्जी पूरी हे नाथ तुम ही करना।
मस्तक झुका रहा हूँ पद्मा के चरणों में ॥ ५ ॥

नं० (१४)

पदमा पदमा मे पुकारुं तेरे दर के सामने ।
मनतो मेरा हर लिया है पदम प्रभु भगवान ने ॥ टेर ॥
मोहिनी छवि को दिखादो अब मेरे भगवान मुझे ।
तेरी चर्चा हम करगें हर बशर के सामने ॥ पदमां ....
डूबते श्रीपाल को तुम ने बचाया है प्रभु ।
द्रौपदी की लाज राखी कौरव दल के सामने ॥ पदमा........
हार का बन सर्प जब खालिया उस सेठ को ।
सो मानें सुमरन किया था पदम प्रभु भगवान को ॥ पदमा ॥....
चित्त हम सबका भटकता, पद्म के दिदार को ।
कर जोड़कर देखा करेंगे' तेरे दर के सामने ॥ पदमां....

नं० (१५)

हे चिर आजा दरश दिखाजा मुक्ती का मार्ग बताजा २
आजा ॥ टेर ॥
मोह की निद्रा में सोते हुये हैं दिव्य धनी से जगाजा २ आजा ॥
मिथ्या अंधेरा छाया चहुँगति में बाबा, समकित सूर्य उगाजा
२ आजा
झूठे मतों का खंडन करना, बाबा जिन धर्म डंका बजाजा २ आजा

भजन नं० १६

म्हारा पद्म प्रभुजी की सुन्दर सूरत म्हारे मन भाई जी ।
वैशाख शुक्ल पंचम तिथि आई प्रगटे त्रिभुवन राई जी ॥ १
रतन जड़ित सिंहासन सोहे, जहां पर आप विराजो जी ॥ २
तीन छत्र थांका सिर पर सोहे चौंसठ चँवर दुराया जी ॥ ३
अष्ट द्रव्य से थाल सजा कर पूजाभाव रचाया जी ॥ ४

सोमासती ने तुम को ध्याया नाग का हार वनाया जी ॥ ५
मैनासती ने तुमको ध्याया श्री पति कुष्ट मिटाया जी ॥ ६
सीता सती ने तुमको ध्याया अगनी का नीर वनाया जी ॥ ७
जो कोई अन्धा लूला आया उसका रोग मिटाया जी ॥ ८
समो सरण में जोकोई आया उसका परण निभाया जी ॥ ९
जिनके भूत डाकिनी आते उनका साथ छुड़ाया जी ॥ १०
लाखों जैनी अजैनी भाई जय जय शब्द उचारे जी ॥ ११
लाखों जाट पालसी आते भर भर दीप जलाया जी ॥ १२
आनदेव वहुतेरे सेये तुम मिथ्यात्व छुड़ाया जी ॥ १३
निकलेगी प्रतीमा श्री प्रभु की भैरव ने वतलाया जी ॥ १४
मूल्या जाट के वैठे घट में नींव खोदने आया जी ॥ १५
फैली प्रभु की महिमा भारी आते नित नर नारी जी ॥ १६
उवो सेवक अर्ज करे छे आवागमन मिटाओ जी ॥ १७
सारा दर्शक अर्ज करे छे जामन मरन मिटाओ जी ॥ १८

भजन नं० १७

तर्ज—मुनिवावा पलकिवा खोल रस की वूंदे परी।
मुझ दुखिया की सुनले पुकार, भगवन पद्म प्रभु
दिनों के हो तुम प्रतिपालक, धर्म मार्ग के हो संचालक॥
किये अनेकों सुधार भगवन पद्म प्रभु ॥ मुझ १ ॥
चारों गतिमें दुख वहु पाया, काल अनादि दुखःमें गंमाया।
आया तोरे दरवार, भगवन पद्म प्रभु ॥ मुझ ॥ २ ॥
नरक गतीकी करुण वेदना जन्म मरण कर्मन संग फोर्ना।
भोगे मैं दुःख अपार, भगवन पद्म प्रभु ॥ मुझ ॥ ३ ।
सद्पदेश दे लाखों तारे अंजन जैसे अधम उवारे
अव मोरी ओर निहार भगवन् पद्म प्रभो ॥मुझ० ॥ ४

बीच भँवर में फँसरही नैया, पदम प्रभू हो तुम्ही खिवैया।
कीजे मुक्ती पार, भगवन् पदम प्रभो ॥ मुझ० ॥ ५
सेवक शान्ति शरणे आया, दर्शन करके पाप नशाया
जीवन के आधार भगवन् पदम प्रभू ॥ मुझ० ॥ ६ ॥

भजन नं० १८

(तर्ज—देखो देखो जी बदरिया छाये जियरा डराये।)
पाये २ जी हां पाये २ जी पदम के दर्शन जिय हरषाये।
सब टलें हमारे पातक पुन्य कमाये ॥ टेक ॥
भूले भूले अबलों भटके अब न भटका जाये।
शिव सुख दानी तुमको पाकर कैसे भूला जाये ॥ पाये ॥
भव दधि तारन तरण जिनेश्वर, सब ग्रन्थन में गाये।
फिर भक्तों की नाव भँवर बिच, कैसे गोता खाये ॥ पाये ॥
वघन निहारो संकट टारो, राखो चरण निभाये।
सुख सौभाग्य बड़े भारत का घर पर मंगल गाये ॥ पाये ॥

भजन नं० १६

तारो तारो जिनवर मुझको तुम बिन तारे कोय ॥ टेर ॥
नैया भव सागरमें डूब रही।
जाको खेवन हारा कोई नहीं ॥
तुम्हीं खेवन हारे भगवन पार लगादो मोय ॥ तारो ॥
आठों कर्म लगे कोई क्या जाने।
इनके फन्दों को कोई क्या जाने ॥
घट घट की प्रभु तुम्ही जानों, और न जाने कोय ॥ तारो ॥
तेरी शान्ती छवि मेरे मन को भावे।
दर्शन करने को चित चाहे ॥
दर्शन अबतो देदो भगवन करदो बेढ़ा पार ॥ तारो ॥

भजन नं० २२

हे पद्म तुम्हारे द्वारे पर, एक दर्श भिखारी आया है
प्रभु दर्शन भिक्षा पाने को, दो नैन कटोरे लाया है ॥ १ ॥
नहीं दुनियां में कोई मेरा है, आफत ने मुझको घेरा है
अब एक सहारा तेरा है, जगने मुझको ठुकराया है ॥ २ ॥
धन दौलत की कुछ चाह नहीं घरबार छुटे परवाह नहीं
मेरी इच्छा है प्रभुके दर्श करूं, दुनियां से जी घबराया है ॥ ३ ॥
मेरी बीच भँवर में नैया है, प्रभु, तूही एक खिवैया है
लाखों के कष्ट हरे तुमने, भव सिन्ध से पार लगाया है ॥ ४ ॥
आपस में प्रेम और प्रीत नहीं, प्रभु तुम बिन हमको चैन नहीं ।
अबही तुम आकर दर्शन दो, मैं दास शरण में आया है ॥ ५ ॥

भजन नं० २३

सुनज्यो पद्म प्रभु भगवान हेलो दीन को जी ॥ टेर ॥
मैं जो दीन दुखी हूं भारी ।
म्हारी सम्पती लुटगई सारी ॥
पडदो मोह कर्म को जब से म्हारी सुध ल्योजी ॥ सुनज्यो ॥
घर का मतलब का छै साथी ।
वे तो हो छै उलटा घाती ॥
सारी आपत मोपर आती भुगतूं एकलो जी ॥ सुनज्यो ॥
बन रह्यो जाल कर्म को भारी ।
ईमें फंस रही अक्कल म्हारी ।
म्हारा अष्ट कर्म को जाल भगवन काट्योजी ॥ सुनल्यो ॥
गैलो मिलताई भग जास्यूं ।
पकड़ में यां कै अब नही आस्यूं ॥
कौल करूं यूं म्हारा नाथ गैलो भूल गोजी ॥सुनज्यो ॥

अबकी बार बचादो प्रभुजी !
अनुपम की है याही अरती ॥
म्हारो जन्म मरण दुख मेटो श्री जिनराज देव जी ॥ सुनज्यो ॥

भजन नं० २४

पद्म पद्म पुकारु मैं वन में; पद्म आकर बसो मोरे मन में ।
पद्म इतना न हमको रिझाओ, अपने सेवक पर रहम लाओ ।
कहां जाऊं ढूंढन वन में ॥ पद्म आकर०
आके बैठो हमारे तन में, मुझ को चैन नहीं पल छिन में ।
धम्म लगाऊँ ऐसी लगन में ॥ पद्म आकर०
आके जाट के बैठो हो घट में प्रतिमा खोद निकाली झपट में
बस चाह लगी मेरे तन में ॥ पद्म आकर०
सब ही ध्यावत है अपने मन में, सुन्दर आया है शरण में
मेरी नाव पड़ी भंवर में ॥ पद्म आकर........

भजन नं० २५

पद्मा के पद्म जिनेश हमारी पीर हरो—हमारी ।
जयपुर राज्य ग्राम बाड़ा है ।
शहर चाटसू का थाना है ॥
सुन्दर सुरूप सुदेश हमारी पीर हरो— हमारी ।
भैरव पद्म ग्राम का स्वामी ।
चतलाई वानें अभि नामी ॥
• अमर होय परमेश हमारी पीर हरो—हमारी ।
बैशाख शुक्ल पंचम तिथि आई ।
तब तहं प्रगटे त्रिभुवन राई ॥
धरे दिगम्बर भेष हमारी पीर हरो—हमारी ।
लाखो जाट पालती आते ।

मनवांछित फल सब वे पाते ॥
मिट जाय सब का क्लेश हमारी पीर हरो—हमारी।
प्रत्येक मास की पंचम तिथि को।
मेला भरत शुक्ल पक्ष को ॥
घटे बढे ना लेश हमारी पीर हरो—हमारी।
राज प्रभु दर्शन को आओ।
पूजा रचावो पुन्य बढ़ाओ ॥
मिटे अशेष क्लेश हमारी पीर हरो—हमारी।

भजन नं० २६

सब मिल के आज जय कहो, श्री वीर प्रभु की।
मस्तक झुकाके जय कहो, श्री वीर प्रभु की ॥ १ ॥
विघ्नो का नाश होता है, लेनेसे नाम के।
माला सदा जपते रहो, श्री वीर प्रभु की ॥ २ ॥
ज्ञानी बनो दानी बनो, बलवन भी बनो।
अकलंक सम बनकर करो, जय वीर प्रभु की ॥ ३ ॥
होकर स्वतन्त्र धर्म की, रक्षा सदा करो।
निर्भय बनो औरजय कहो, श्री वीर प्रभु की ॥ ४ ॥
तुमको भी अगर मोक्षकी, इच्छा हुई ऐ दास।
उस वाणी पै श्रद्धा करो, श्री वीर प्रभु की ॥ ५ ॥

भजन नं० २७

प्रभु तुम्हीं दुख हरता हो, मेरा और न साथी कोय।
जिसको मैं कहता हूं अपना।
वह है मन का सूक्ष्म सपना ॥
धरेरहेंगे सभी जगत में साथ न देगा कोय ॥ १ ॥
पिता पुत्र प्रिय साजन सारी।

सब रखते मतलब की यारी ॥
प्राण जांयगे निकल देह से, देह न संगी होय ॥ २ ॥
कर्म शत्रु जिन पिछे लागे।
जिनसे फिरते भव भव भागे ॥
चतुर्गति के फन्दों से अब, कौन छुड़ाये मोय ॥ ३ ॥
तत्व ज्ञान हमने नहीं जाना।
धर्म अधर्म नहीं पहिचाना ॥
सप्त भंगिका भाव हुए बिन, जब मोह न जीते कोय ॥ ४ ॥
रहे भावना यही मेरी।
पावन भक्ति मिले प्रभु तेरी ॥
होय मिलाप भव ऐसो, जब लग मोक्ष न होय ॥ ५ ॥

भजन नं० २८

मैं कदम कदम पर पद्म प्रभु की जय बोलूं रे।
अरु पग पग पर अपने साहस को तोलूं रे ॥
मैं शत्रुन से भोड़, रणधीर वीर कहलाऊं।
इस कायरता के कण में रण रस घोलूं रे ॥ १ ॥
हों विषधर की फुङ्कारें, चाहे दिग्गज चिक्कारें।
मैं सिंहों के झुण्डों में संग संग डोलूं रे ॥ २ ॥
गहरे सागर पर्वत हों, दल दल हो दावानल हों।
मैं महाकाल के मुख के दन्त टटोलूं रे ॥ ३ ॥
बढ़ जा २ आगे बढ़ जा, पुरुषार्थ की चोटी चढ़ जा।
मैं कर्म भूमि की शूल सेज पर सोलूं रे ॥ ४ ॥
श्री पद्म प्रभु से विनय यही, दीजे मुझको शक्ति यही।
कहैं जैन जौहरी अपने प्रण का होलूं रे ॥ ५ ॥

भजन नं० २९

कायाका पिंजरा डोलेरे, एक सांस पंछी बोलेरे ॥ टेक

तन नगरी मन है मन्दिर, परमात्मा है जिसके अन्दर।
दो नैन हैं पाक समुन्दर, तू पापी पाप को धोले रे ॥ १ ॥
मां बाप सुता पत्नी कां, झगड़ा है जीते जी का।
तू भज ले नाम का प्रभु का, नाहक क्यों भ्रमता डोलेरे ॥ २ ॥
आने की शहादत जाना, जाने से क्या घबड़ाना।
दुनियां मुसाफिर खाना, तू भेद भरम खोलेरे ॥ ३ ॥

भजन नं० ३०

हम भक्त हैं तेरे पद्म प्रभु।
तुझे ढूंढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥
दुखियों का दुख: हरता है।
अन्धों को रोशनी देता है ॥
हम दीवाने हैं तेरे प्रभु।
तुझे ढूढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥
तुम माता सुसीमा के प्यारे हो।
धारण की आंखों के तारे हो ॥
सब दास तुम्हारे पद्म प्रभु।
तुझे ढूंढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥
तुम कोशाम्बी में जन्म लिये।
फिर बाड़ा ग्राम में प्रगट भये ॥
मूलादास को दर्श दिये।
तुझे पाया नीऊ खोदत में यहीं ॥
ये फूल तेरे चरणों में पड़ा।
दो इसका आवागमन मिटा ॥
इस भव सागर से पार लगा।
तुझे ढूंढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥

(सवैया) कवि ओमराजजी कृत

याद किये मन शान्ति हरे, अवलोकन से उनमाद बढ़ाती। पर्श किये मन मोहत है, प्रक संगमसे बल विर्य नशाती। लाज हरे शुभ काज हरे, शिव साज हरे ओ ओ मदमाती। ओम कहे विचित्र त्रिया ठगि है, सर नस्व हरे हू प्रिया कहलाती॥१॥ बाल समे जननी पोढ़ियो, खावत पीवत लाड़ लड़ायो। बनके त्रिया संग पोढ़ायो सुन्दर फूलन सेज बिछायो। वृद्ध समे निशि वासर पोढ़िके रोगन के संग-काल गमायो। ध्यान कियो ना चिदातम को, शठ पावक पोढ़न औसर आयो॥२॥ जोग सधा नहीं जोग सधा कछु भी नहीं साधन में स-आया। भोग का साधन यौवन था, तृष्णा वश होकर व्यर्थ बिताया। रूप गया बल तेज गया तन क्षीण भया यमराज दलाया। जोग का जोग बिना बिन हूं शठ आलस में इस जन्म गवाया॥३॥ बाहर सुन्दर दीखत है पिन अंतर सोचत से घिन आवे। खान दिये पिन पान दिये बिन ज्यो जिय को कुछ काम न आवे। खुब लड़ावत खुब सजावत फेर हू अंत में ज्यो छिटकावे ओम इसे तन में लवलायके, मुरख ही नर मित बढ़ावे॥४॥—